समर्पण

अपने परम सुयोग्य गुरु

आसोदा-निवासी स्वामी मित्रसेनजी महाराज

के

चरण-कमलों में

परम श्रद्धा और भक्तिपूर्वक

समर्पित

भूमिका

स्त्रियों के गर्भ और बच्चों के पालन-पोषण के सम्बन्ध का यह पुस्तक माता-पिताओं के लाभ के लिए और विशेषतः ऐसी माताओं के लिए लिखी गई है जो अपनी शक्ति भर स्वयं अपना स्वास्थ्य भी बनाये रखना चाहती है और यह भी चाहती है कि हमारी सन्तान ठीक तरह से बढ़ती रहे। मनुष्यजाति के लिए यह विषय बहुत ही आवश्यक है, और विशेषतः भारत के लिए तो राष्ट्रीय दृष्टि से इसका और भी अधिक महत्त्व है, जहाँ समाज मे स्वास्थ्य-सम्बन्धी नियमों के बारे मे लोगों में अनेक प्रकार के मिथ्या विश्वास, गहरे पक्षपात और बहुत बड़ी अज्ञानता फैली हुई है। इस पुस्तक में सब बातें बहुत ही सीधे सादे ढंग से और ऐसी भाषा में बतलाई गई हैं जिसमे विशेष पारिभाषिक शब्द नही है; और ऐसा इसी लिए किया गया है कि सब प्रकार के लोग इससे लाभ उठा सकें। चिकित्सा-सम्बन्धी ब्योरे की बातें छोड़ दी गई है; क्योंकि चिकित्सा का काम अच्छे चिकित्सकों पर ही छोड़ना चाहिए। माता-पिता को अपने बच्चों की चिकित्सा आप नही करनी चाहिए।

चिकित्सा-विज्ञान के विद्यार्थियों और चिकित्सकों के लिए भी यह पुस्तक विशेषरूप से उपयोगी है। चिकित्सा-शास्त्र के विद्यार्थियों के लिए तो यह इस दृष्टि से उपयोगी है कि इसमे प्रसव और छोटे बच्चों की देख-रेख और रक्षा के सम्बन्ध की जानने योग्य सभी बातें अच्छी तरह बतलाई गई है; और चिकित्सकों के लिए यह पुस्तक इस दृष्टि से उपयोगी है कि इसमे उन अनेक प्रश्नों पर विचार किया गया है जो नित्यप्रति चिकित्सकों के सामने उपस्थित होते हैं। इस देश के और यूरोप के लेखकों ने इस विषय पर जो प्रामाणिक ग्रन्थ लिखे हैं,

उनके आधार पर तो यह पुस्तक लिखी ही गई है, पर इसका बहुत सा अंश उस अनुभव और निरीक्षण पर भी अपना आधार रखता है, जो मैंने बीस वर्षों तक चिकित्सा करके प्राप्त किया है।

इस पुस्तक में ग्यारह प्रकरण रखे गये हैं। पहला प्रकरण विषय-प्रवेश के रूप में है और उसमें यह बतलाया गया है कि छोटी अवस्था के बच्चों के मरने के क्या क्या कारण हैं, विवाह करने से पहले वर और कन्या के अच्छे स्वास्थ्य का कितना महत्त्व है, छोटी अवस्था के बच्चों का व्याह करने से क्या क्या हानियाँ होती हैं और वर तथा कन्या की अवस्था में बहुत अन्तर होने से क्या क्या दोष होते हैं। दूसरा प्रकरण गर्भवती स्त्री के सम्बन्ध में है और उसमें यह बतलाया गया है कि उसके स्वास्थ्य की अवस्थाओं में क्या क्या परिवर्त्तन होते हैं, उसे कौन सी ख़ास ख़ास बीमारियाँ होती हैं और उनसे किस प्रकार बचना चाहिए। तीसरे प्रकरण में मैंने यह बतलाया है कि जन्म लेने के समय बच्चे की देख-रेख और रक्षा के लिए क्या क्या करना चाहिए। चौथा प्रकरण कदाचित् सबसे अधिक महत्त्व का है। वह स्वयं नये जन्मे हुए बच्चे के सम्बन्ध में है; और उसे वैज्ञानिक ढंग से दूध पिलाने के सम्बन्ध में जितनी कठिन समस्यायें हैं, उन सब पर विचार किया गया है। बच्चे को दूध पिलाने के लिए दाई नियुक्त करने के सम्बन्ध में जिन बातों का विचार होना चाहिए, उनका वर्णन पाँचवें प्रकरण में है। छठे प्रकरण में यह बतलाया गया है कि बच्चे से माता का दूध किन अवस्थाओं में और किस प्रकार छुड़ाना चाहिए जिसमें उसे कोई हानि न पहुँचने पावे। बनावटी तरीके से दूध पिलाने के महत्त्वपूर्ण विषय का विवेचन सातवें प्रकरण में किया गया है। नये जन्मे हुए बच्चे के सम्बन्ध की जो और फुटकर बातें हैं, जैसे बच्चे की साधारण स्वास्थ्य-रक्षा, दाँत निकलने के समय होनेवाली ख़राबियाँ, उनकी साधारण शारीरिक वृद्धि, उन्हें होनेवाले रोग और विकार, आदतों और चरित्र का बनना बिगड़ना आदि और इसी प्रकार

की और दूसरी बातों का उसके बाद के तीन प्रकरणों मे वर्णन है। इस विषय के इतने ही बड़े दूसरे ग्रन्थों मे ये बातें जितने विस्तार के साथ बतलाई गई है उनकी अपेक्षा इस पुस्तक में वे बातें बहुत अधिक विस्तार के साथ दी गई है। अन्त का प्रकरण ख़राब दिमाग़-वाले बच्चों के सम्बन्ध मे है और वह चिकित्सकों तथा साधारण जनता दोनो के लिए ही समानरूप से मनोरंजक और शिक्षाप्रद है। समाज-शास्त्र की दृष्टि से यह विषय बहुत ही महत्त्व का है; क्योंकि भारत मे कोई ऐसी संस्था नहीं है जिसमे ख़राब दिमाग़वाले बच्चों की देख-रेख की जाती हो; और इसी लिए इस विषय का अपेक्षाकृत कुछ अधिक विस्तार किया गया है और उसके लिए अधिक स्थान दिया गया है।

मैंने यह शिक्षाप्रद और काम की पुस्तक इसलिए लिखी है जिसमें स्त्रियों की मृत्यु और रोग कम हों और छोटी अवस्था के बच्चों के मर जाने के कारण मानव-जीवन का जो भीषण नाश होता है, वह घटे। भारत और सारे संसार के आजकल के जीवन मे यह सबसे अधिक दुःखद बात है जो अभी तक बनी हुई है।

मूल पुस्तक अँगरेज़ी मे है। तीन वर्ष हुए वह विलायत मे छपी थी। वहा और भारत मे उसका ख़ूब स्वागत हुआ था। अतएव लेखक ने उचित समझा कि सार्वजनिक हित के लिए इसका उर्दू-अनुवाद भी छापा जाय। उर्दू-अनुवाद इतना लोकप्रिय हुआ कि पंजाब-सरकार के शिक्षा-विभाग ने इसकी एक सहस्र प्रतियाँ ख़रीद की और लेखक को साढ़े सात सौ रुपया पुरस्कार मे दिया।

अब उसी का हिन्दी-अनुवाद जनता की सेवा मे भेंट किया जा रहा है। अधिक संभव यही है कि इस प्रकार की पुस्तक पहले हिन्दी में कोई नहीं छपी। इस देश की अधिकांश माताओं और बहनों को स्वयं इसे पढ़ने और इससे लाभ उठाने का अवसर पूरे तौर पर हिन्दी-भाषान्तर से ही हो सकता है। वे इसके अध्ययन से देखेंगी कि यह

पुस्तक नन्हे बच्चों और गर्भवती स्त्रियों के रोगों को रोकने के लिए कितनी उपयोगी है।

मैं बाबू रामचन्द्र वर्म्मा को हार्दिक धन्यवाद देता हूँ कि जिन्होंने अतीव सावधानी से हिन्दी-भाषा-भाषी जनता के लिए इसका हिन्दी-भाषान्तर तैयार किया है।

अपने परम मित्र श्रीयुत सन्तरामजी बी० ए० का मैं यथेष्ट रूप से धन्यवाद नहीं कर सकता कि जिन्होंने अपने निजी काम को परे रखकर बड़े प्रेम से प्रूफ़ों का संशोधन किया है।

मैं मैनेजर इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग को भी धन्यवाद देता हूँ कि जिन्होंने पुस्तक को बहुत सावधानी से प्रकाशित किया है।

प्रभु से प्रार्थना है कि वे अपनी अपार दया से उस उद्देश्य में जिससे यह पुस्तक लिखी गई है अपना आशीर्वाद प्रदान करें।

मेलाराम रोड, लाहौर

बोधराज चोपड़ा,
एम० बी०, सी-एच० बी० (एडिनबरा)

विषय-सूची

प्रकरण	विषय	पृष्ठ
१—छोटे बच्चो की मृत्यु और उसके कारण	... ...	१
२—गर्भिणी माता	... ...	१२
३—जन्म के समय से बालक की रक्षा	.. ...	६२
४—बच्चों को दूध पिलाना	... .	७०
५—दूध पिलानेवाली दाई	... ...	१००
६—दूध छुड़ाना	... ...	१०८
७—कृत्रिम रूप से भोजन देना	... .	११४
८—बच्चों की स्वास्थ्य-रक्षा	... ...	१५६
९—बच्चों की उचित वृद्धि और विकास	... ...	१६५
१०—बच्चों के कुछ साधारण और छूतवाले रोग	... ...	२०६
११—बच्चों मे मस्तिष्क के विकार	... ...	२३६

माँ और बच्चा

पहला प्रकरण

छोटे बच्चों की मृत्यु और उसके कारण

पाठकों से निवेदन—इस प्रकरण मे आप लोगों को वे अनेक कारण बतलाये जायँगे जिनसे छोटे छोटे बच्चे बहुत अधिक मरते हैं। आप इन कारणो को बहुत अच्छी तरह समझें, क्योंकि जब ये कारण अच्छी तरह समझ मे आ जायँगे, तब छोटी अवस्था के बच्चों का मरना बहुत कुछ रुक जायगा। इनमे कुछ कारण तो ऐसे है जो आपके वश के बाहर के होंगे। पर कुछ कारण ऐसे भी होंगे जो थोड़ा सा विचार करने और ध्यान रखने से दूर किये जा सकेंगे। इससे आपका भी भला होगा और आपके बच्चों का भी। इससे एक बात तो अवश्य ही दूर की जा सकेगी। आज-कल सभी तरह के लोग यह बात अच्छी तरह नहीं जानते कि नये जन्मे हुए छोटे छोटे बच्चो को पालने-पोसने के मुख्य नियम क्या हैं; और उन्हीं नियमो को न जानने के कारण सारे संसार मे नये जन्मे हुए बच्चे बहुत मरते हैं। इन बातों को जान लेने से वह अज्ञान अवश्य दूर हो सकेगा।

भारत में छोटे बच्चों की मृत्यु और रोग—इस देश मे हर साल बहुत अधिक छोटे छोटे बच्चे मरते हैं। जितने ज़्यादा बच्चे यहाँ मरते है, उतने ज़्यादा संसार के और किसी सभ्य देश मे नही मरते। यह बात सभी लोग अच्छी तरह से जानते हैं; इसलिए बड़ी बड़ी संख्यायें देकर इस बात का प्रमाण देने

की आवश्यकता नहीं है[१]। तो भी हम यह बतला देते हैं कि भारत मे एक बरस के अन्दर २०,००,००० के क़रीब नये जन्मे हुए बच्चे मरते हैं। एक साल के अन्दर इतनी जानों का जाना ऐसी बात है कि उसके बारे मे कुछ अधिक कहने की ज़रूरत नहीं है। जिन कारणों से इतने अधिक बच्चे मरते हैं, वे कारण सब लोगों को जान लेने चाहिएँ; क्योंकि कोई देश इतना अधिक जानें का व्यर्थ जाना सह नहीं सकता। जहाँ और कई बातों से यह जाना जाता है कि किसी देश की सरकार अच्छी है या बुरी, वहाँ एक इस बात से भी जाना जाता है कि वहाँ के नये जन्मे हुए बच्चो मे से कितने मरते और कितने बचते हैं। सरकार को इस बात की बहुत अच्छी तरह जाँच करानी चाहिए और नये जन्मे हुए बच्चों की रक्षा के लिए वह जो नये नये उपाय करे, उनका हर साल एक ब्योरा तैयार करके छपवाना चाहिए।

१—ब्रिटिश साम्राज्य के और और देशो में नये जन्मे हुए कितने कितने बच्चे मरते है, इसका एक लेखा (भारत-सरकार के स्वास्थ्य-विभाग के कमिश्नर की सन् १९२४ वाली सालाना रिपोर्ट से लेकर) यहां दिया जाता है। इसे देखकर पाठक समझ सकेंगे कि हमारे देश मे और देशो से कितने अधिक बच्चे मरते है।

सन् १९२४ में एक बरस से छोटे बच्चों के प्रति १०००० मरने का ब्योरा

भारत.........१८९०　　आस्ट्रेलिया........ ५७०८,

इंग्लेंड और वेल्स...७५०,　　न्यूज़ीलेंड.........४०२३,

स्काटलेंड... .... ९७७, कनाडा (क्वेबेक को छोड़कर) ७९००,

सन् १९२४ मे यहां जितने बच्चे हुए थे, उनमे से प्रति हज़ार १८९ बच्चे मर गये थे। पर सन् १९२३ में प्रति हज़ार १७६ और सन् १९२२ में प्रतिहज़ार १७५ बच्चे ही मरे थे। इससे यह साफ़ पता चल जाता है कि छोटे बच्चो के मरने की संख्या बराबर बढ़ रही है। इसे रोकने की ओर स्वास्थ्य-विभाग के अधिकारियों को तुरन्त ध्यान देना चाहिए।

यों तो छोटे बच्चों के मरने के बहुत से कारण हैं, पर लोगों की जानकारी के लिए यहाँ उनमे से कुछ बड़े बड़े कारण बतला दिये जाते हैं। जब इसके मुख्य कारण समझ मे आ जायँगे, तब लोग इन्हें दूर करने के उपाय भी सहज मे समझ लेंगे।

ब्याह से पहले माता-पिता (स्त्री और पुरुष) की अच्छी तन्दुरुस्ती—यदि ब्याह से पहले लड़की और लड़का दोनों खूब तन्दुरुस्त न हो, तो फिर यह आशा नहीं करनी चाहिए कि इन दोनों से जो सन्तान होगी, वह भी अच्छी और तन्दुरुस्त होगी। इस-लिए ब्याह करके गृहस्थी मे पैर रखने से पहले लड़की और लड़के दोनों को खूब तन्दुरुस्त होना चाहिए। यह एक दुर्भाग्य की बात है कि भारत में लोगों को ब्याह का तो बहुत चाव रहता है, पर वे लड़कों और लड़कियों की तन्दुरुस्ती पर पूरा ध्यान नही देते। इसके सिवा यह बात भी सभी जगह देखने मे आती है कि ब्याह-शादी में तो लोग व्यर्थ बहुत सा धन लुटाते हैं, पर लड़कों और लड़कियों की तन्दुरुस्ती सुधारने के लिए बहुत ही कम खर्च करते हैं। इन बातों मे हमारे समाज मे इस समय जो विचार फैले हुए हैं, उन्हें एक सिरे से बदल देने की आवश्यकता है। हम लोगों मे ऐसी बहुत सी रस्मे है जो मूर्खतापूर्ण, व्यर्थ और मिथ्या विश्वास के कारण हैं; और उन रस्मो को अदा करने के कारण कभी कभी लोग अपने लड़के या लड़की का ब्याह करने के बाद बिलकुल दरिद्र हो जाते हैं और उस दरिद्रता के बुरे फल भोगते हैं। उदाहरण के लिए, लोग ब्याह करने से पहले ज्योतिषियों के पास जाते हैं। पर हमारी समझ मे यदि लोग इसके बदले मे किसी अच्छे डाक्टर आदि से लड़के या लड़की के भावी कल्याण के लिए सलाह ले लिया करे, तो बहुत अच्छा हो। प्रायः देखा जाता है कि कुछ जवान लड़के ब्याह करने के बाद बहुत दिनों तक नही जीते और थोड़े या बहुत दिनों तक बीमार

रहकर मर जाते है। ऐसे लोगो के मरने के कई कारण होते हैं। ब्याह के बाद इतनी जल्दी मर जानेवाले लोगों मे से बहुतों के मरने का कारण प्रायः यह देखा जाता है कि पहले से ही उन्हें क्षय-रोग या हृदय का और कोई रोग रहता है। ऐसी दशाओं मे जो रोग पहले से बना रहता है, वह ना-समझी से अधिक सम्भोग करने के कारण और भी ज़ोर पकड़ता है, और जब शरीर का ठीक ठीक ध्यान नही रखा जाता और उसे पुष्ट करनेवाले पदार्थ नहीं मिलते, तब नतीजा यह होता है कि लड़का या लड़की जल्दी मर जाते है।

जब माता और पिता दोनों कमज़ोर होते है और उनकी तन्दुरुस्ती ठीक नहीं होती, तब उनसे उत्पन्न होनेवाली सन्तान भी जितनी तन्दुरुस्त होनी चाहिए, उतनी तन्दुरुस्त नही होती। उसमे रोगों को सहने और उनका मुक़ाबला करने की शक्ति बहुत कम होती है, जिससे वे सहज मे सब प्रकार के छूतवाले रोगों के शिकार हो जाते हैं, और उन पर जल्दी ऐसे प्रभाव पड़ते हैं जो उनकी तन्दुरुस्ती बिगाड़ देते है और जिनसे उनके जल्दी मरने का भय होता है। इस कारण बच्चे बहुत दिनों तक बीमार रहते है और प्रायः अन्त मे मर भी जाते हैं।

छोटी उमर में ब्याह—यह भी समाज मे फैला हुआ एक दूसरा दोष है। इसे सभी लोग दोष मानते हैं लेकिन इतना होने पर भी यह दोष आज दिन तक भी उसी तरह चला चलता है, जिस तरह आज से दस या बीस बरस पहले चलता था। हमारी जाति पर इस दोष के जो बहुत अधिक हानिकारक प्रभाव पड़ते है, वे बहुत ही सहज में समझे जा सकते हैं; उनका अनुमान करने के लिए बहुत बड़ी कल्पना-शक्ति की आवश्यकता नहीं है। जिस लड़की के भीतरी अंग पूरी तरह से बढ़े और विकसित न हुए हों, उसके गर्भ से ऐसा बच्चा नहीं हो सकता जिसके सब अंग पूरी तरह से बढ़े हुए हों। इसलिए इस बात की सबसे बड़ी आवश्यकता है कि लड़कियों का ब्याह उसी समय होना चाहिए, जब उनकी अवस्था अधिक हो जाय,

जब वे अच्छी युवती हो जायँ। भारत बहुत बड़ा देश है और इसके भिन्न भिन्न प्रदेशों मे लड़कियों के जवान होने की उमर कहीं कम और कहीं अधिक होती है। परन्तु फिर भी सभी अवस्थाओं में यह निश्चय समझ रखना चाहिए कि अगर सोलह बरस से कम उमर मे लड़की का ब्याह होगा और उसी बीच में उसे गर्भ रह जायगा, तो उसकी भी तन्दुरुस्ती ख़राब हो जायगी और उससे उत्पन्न होनेवाली सन्तान भी तन्दुरुस्त न हो सकेगी। कच्ची उमर की लड़कियों के पेट से जो सन्तान होती है, वह स्वभावतः दुबली-पतली और कमज़ोर होती है। उनमे जीवन-शक्ति बहुत ही कम होती है, उन्हे अनेक प्रकार के रोग बहुत जल्दी हो जाते हैं और बहुत ही छोटी अवस्था मे उनकी मृत्यु भी हो जाती है। हमारे यहाँ छोटे बच्चे जो इतनी अधिक संख्या मे मरते हैं, उसका एक मुख्य कारण छोटी अवस्था में लड़कों और लड़कियों का ब्याह होना है। हमारी समझ में अब ऐसा समय आ गया है जब कि हमारे समाज का यह दोष दूर करने के लिए एक सरकारी क़ानून बन जाना चाहिए जो अनुभवी चिकित्सकों की सम्मति के अनुकूल हो[1]।

पति और पत्नी की अवस्थायें—पति और पत्नी दोनों की अवस्थाओं मे बहुत अधिक अन्तर भी इन्हीं सब कारणों से बुरा और निन्दनीय है। जिन माता-पिता की अवस्थाओ मे बहुत अधिक फ़र्क होता है, उनके बच्चों मे से भी प्रायः बहुत से बच्चे ऐसे ही होते हैं जो शरीर से भी दुर्बल होते हैं और मन से भी और जो जीवन की कठिनाइयाँ सहने के योग्य नहीं होते। ऐसे माता-पिता के बच्चों का दिमाग़ प्रायः ठीक नहीं होता, उनमे बहुत से मानसिक दोष होते हैं।

१—मूल पुस्तक के छप जाने के बाद प्रसिद्ध शारदा बिल क़ानून बन गया है जिससे १८ बरस से कम उमर के लड़कों और १४ बरस से कम उमर की लड़कियों का ब्याह नहीं हो सकता।—अनुवादक।

जिन बच्चों में ऐसे मानसिक दोष हों, उनसे प्रायः अच्छे जीवन की बहुत ही कम आशा की जा सकती है और वे जन्म से मृत्यु तक सदा अपने माता-पिता के लिए एक बोझ से बने रहते हैं। प्राण-शक्ति कम होने के कारण उनमें से बहुत से बच्चे तो बहुत ही छोटी उमर में मर जाते हैं।

लड़कियों पर आज-कल की शिक्षा के प्रभाव—हमारे देश में इधर थोड़े दिनों से लड़कियों को आज-कल के ढंग की शिक्षा दी जाने लगी है। चिकित्सा-शास्त्र के जानकार लोग प्रायः यह कहते हैं कि आज-कल के स्कूलों में लड़कियों को जो शिक्षा दी जाती है, उससे कुछ लड़कियों की तन्दुरुस्ती ख़राब हो जाती है। यह ठीक है कि कोई समझदार आदमी कभी इस बात से इनकार नहीं कर सकता कि जिस प्रकार की शिक्षा लड़कों को दी जाती है, उसी प्रकार की शिक्षा पाने का लड़कियों को जन्मसिद्ध अधिकार है। पर लड़कों और लड़कियों के शरीर की बनावट में जो विशेष अन्तर है, उसके कारण लड़कों की अपेक्षा लड़कियों की शिक्षा का पाठ्य-क्रम निश्चित करने में अधिक ध्यानपूर्वक चुनाव करने की आवश्यकता होती है। बहुत अधिक पुस्तकें पढ़ने और वह भी विशेषतः विदेशी भाषा के द्वारा पढ़ने और परीक्षा में पास होने की चिन्ता करने के कारण जवान स्त्रियों के स्वास्थ्य पर अनावश्यक रूप से ज़ोर पड़ता है। और जब उन्हें शारीरिक व्यायाम या कसरत करने के लिए मुनासिब सलाह नहीं मिलती, तो स्वास्थ्य के लिए शिक्षा के ये बुरे प्रभाव और भी बढ़ जाते हैं। जो माता-पिता अपनी लड़कियों को पढ़ाना-लिखाना चाहते हों, उन्हें सदा इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि उन लड़कियों को अपना शरीर और स्वास्थ्य बनाये रखने के लिए पूरी स्वतन्त्रता और सुभीता मिलता रहे। हमारी जाति या राष्ट्र के लिए यह बात बहुत अधिक महत्त्व की और ध्यान देने योग्य है; क्योंकि हमारी लड़कियों को माता के रूप में जो परम पवित्र कार्य और कर्त्तव्य करने पड़ते हैं, उन्हें

ठीक तरह से पूरा करने के लिए सबसे बड़ी आवश्यकता इस बात की होती है कि जिस समय वे स्कूल मे पढ़ती हो, उस समय उनका शरीर भी ठीक तरह से बराबर बढ़ता रहे, उनकी तन्दुरुस्ती ख़राब न होने पावे।

स्वास्थ्य के लिए हानिकारक परिस्थितियाँ— स्वास्थ्य के लिए हानिकारक परिस्थितियो के जो बुरे प्रभाव होते हैं, उनसे भी बहुत से छोटे छोटे बच्चे मर जाते हैं। कूड़े-करकट या गन्दगी, गन्दी हवा या ख़राब नलो और मोरियों आदि का साधारणतः सारे समाज के स्वास्थ्य पर बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ता है; पर छोटी अवस्था के बच्चो पर तो उनका और भी जल्दी बुरा प्रभाव होता है। स्वास्थ्य के लिए हानिकारक इन परिस्थितियों का उन स्त्रियों की तन्दुरुस्ती पर भी कुछ कम बुरा असर नही पड़ता, जिन्हें दिन-रात प्रायः घरो में बन्द रहना पड़ता है। उन्हे दिन-रात बैठे रहने की आदत पड़ जाती है; उनका मन बुझ सा जाता है और वे प्राय. बेचैन और अप्रसन्न या दुखी सी रहती हैं। साधारणतः उनकी तन्दुरुस्ती ख़राब हो जाती है और उनमे से बहुत सी बांझ भी हो जाती हैं। ऐसी माताओं से जो बच्चे उत्पन्न होते है, वे प्रायः बहुत ही दुबले-पतले और कमज़ोर होते हैं। वे या तो बराबर बीमार रहते हैं और या जल्दी मर जाते हैं। इस बात का सदा ध्यान रखना चाहिए कि साफ़ हवा मे रहने और घर के बाहर घूमने-फिरने या तरह तरह की कसरतें करने से शरीर में बहुत साफ़ खून बनता है। केवल उन्ही जातियो में सबसे अच्छे बच्चे उत्पन्न हो सकते हैं जिनकी स्वास्थ्य-सम्बन्धी और रहन-सहन की अवस्थायें सन्तोषजनक होती हैं और जो स्वास्थ्यप्रद खुली हवा मे अपना जीवन बिताती हैं।

दरिद्रता और सामाजिक अवस्थायें— छोटे बच्चों के बहुत अधिक मरने के जो बहुत से कारण हैं, उनमे से बहुत से कारणों

की जड़ दरिद्रता या ग़रीबी है। इसी के कारण बहुत सी माताओं को शरीर का पोषण करनेवाले ठीक और पूरे द्रव्य नहीं मिलते; और इसी लिए उनके बच्चों का भी ठीक ठीक पोषण नहीं होता। इसका फल यह होता है कि उनके बच्चे जन्म से ही स्वास्थ्य और शक्ति के विचार से घाटे में रहते है—वे न तो तन्दुरुस्त रहते है और न उनमें प्राण-शक्ति होती है। इसके सिवा जिस भोजन मे शरीर को पुष्ट करने-वाला अंश कम होता है, उस भोजन से बच्चो के शरीर की बाढ़ आरम्भ मे ही रुक जाती है।

ग़रीब लोग प्रायः ऐसी परिस्थितियों मे रहते हैं, जो स्वास्थ्य के लिए बहुत ही हानिकारक होती है और उनके छोटे बच्चो पर इसका बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ता है। ग़रीब माता-पिताओं के बहुत से लड़कों को आवश्यक वस्तुएँ नहीं मिलतीं और वे प्राय. कड़ी सरदी या गरमी मे खुले पड़े रहते है, जिससे उनमे रोगों को रोकने की या सहने की शक्ति कम हो जाती है और अन्त मे वे मर जाते है। भारत मे छोटी लड़कियों पर इस दरिद्रता का और भी बुरा प्रभाव होता है। पुराने ज़माने में तो बहुत अधिक ग़रीबी और परम्परा से लड़कियों का होना बुरा समझने के कारण माता-पिता जान-बूझ कर छोटी लड़-कियों को मार डालते थे। आज-कल भी जब वे बीमार हो जाती हैं, तब लड़कों की अपेक्षा उनके इलाज आदि का बहुत ही थोड़ा ध्यान रखा जाता है; और माता-पिता के व्यवहार के इस कारण भी बहुत सी लड़कियाँ छोटी अवस्था में ही मर जाती है।

धन-दौलत की दृष्टि से भी मध्यम श्रेणी या औसत दर्जे के लोगों को अपने बच्चो के स्वास्थ्य पर ठीक ठीक ध्यान देने में कठिनाइयाँ होती हैं। वे उनके लिए पूरे पूरे सुभीते नहीं कर सकते। इधर कुछ दिनो से लोगो के रहन-सहन का ख़र्च तो बहुत बढ़ गया है और उन्हे पहले से आराम की भी ज़्यादा ज़रूरत होने लग गई है, पर आज-कल सब लोगों को अपना अस्तित्व बनाये रखने के लिए बहुत अधिक झगड़े

और प्रयत्न करने पड़ते हैं जिससे इधर कुछ दिनो से उनकी आमदनी कम होने लग गई है। इसका परिणाम यह हुआ है कि अच्छा और पौष्टिक भोजन बहुत ही कम मिलने लगा है। प्रायः इन लोगों को बहुत अधिक चिन्ता करनी पड़ती है। इसका उनके बच्चों के शरीर और मन दोनों पर बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ता है। उनमे से कुछ लड़के ऐसे निकल आते हैं, जिनके मस्तिष्क का तो ठीक ठीक विकास हो जाता है, पर इसके लिए उन्हे प्राय. अपने शरीर का स्वास्थ्य गँवा देना पड़ता है। उनमे से बहुत से लड़के ऐसे ही होते हैं जो अधिक दिनो तक नही जीते। अब मध्यम श्रेणी के लोगो मे दिन पर दिन ऐसे वंश बहुत ही कम होते जाते हैं, जिनमे लोग बहुत अधिक दिनों तक जीते हो।

भारत मे जो लोग धनवान् हैं, वे छोटे बच्चो का पालन-पोषण करने मे विशेषरूप से अनजान हैं। दूसरी श्रेणियो की स्त्रियो को ऐसी बातों की जितनी जानकारी होती है, धनवानों की स्त्रियों को उससे अधिक जानकारी नही होती। इसके विपरीत प्रायः यही देखने मे आता है कि वे घर-गृहस्थी के काम-काज से बहुत उदासीन रहती है, उनकी ओर कोई ध्यान ही नहीं देती। यो देखने मे यही जान पड़ता है कि धनवानो के यहां छोटे बच्चे कम मरते हैं; पर इसका मुख्य कारण यह है कि उनके यहां बच्चे होते ही कम है और उनकी काम-वासना जीवन की और और बातों में लग या बँट जाती है।

घर में बेढंगा इलाज—बच्चो के अधिक मरने का एक कारण यह भी है कि जब वे बीमार होते हैं, तब पहले घर मे ही उनका मनमाना और बेढंगा इलाज होने लगता है। घर मे जो बड़ी बूढी स्त्री होती है, वह बीमार बच्चो का इलाज करने के लिए बहुत ही उपयुक्त और योग्य समझी जाती है। यदि घर में कोई बड़ी बूढ़ी नहीं होती तो पास-पड़ोस की कोई स्त्री इस काम के लिए बुला ली जाती है; या इससे भी बढ़कर बुरी बात यह होती है कि कोई ऐसा बुड्ढा

आदमी पकड़ लिया जाता है जो इलाज करना बिलकुल जानता ही नहीं। इस तरह के अटकल पच्चू इलाज के जो बुरे परिणाम होते हैं, उनका अनुमान सहज मे ही किया जा सकता है; और यह एक ऐसी प्रथा है जो बहुत ही निन्दनीय है।

विज्ञापनों की दवाएँ—आज-कल अख़बारों आदि में जिन बहुत सी दवाओ के विज्ञापन निकलते है, उन दवाओ का व्यवहार करने से भी इसी प्रकार के फल होते है। जिस दवा के बारे मे अख़बारों में बहुत धूमधाम से विज्ञापन दिये जाते है, भोले-भाले लोग उन दवाओं का बहुत व्यवहार करते है। जिन दवाओ के विषय मे इस बात का पता ही न हो कि ये किन किन चीज़ो से बनी है, उनका व्यवहार करने से अनेक प्रकार की हानियाँ हो सकती है; और विशेषतः छोटे बच्चो पर तो उनका बहुत ही बुरा प्रभाव हो सकता है। अपनी दवाओ का बहुत अधिक विज्ञापन देनेवाला आदमी तो बहुत सा धन कमा लेता है, पर सर्व-साधारण की उन दवाओं से बहुत हानि होती है।

फ़क़ीरों और साधुओ की दवायें—भारतवर्ष के लोग इस प्रकार की भी बहुत सी दवाओं का व्यवहार किया करते है। आज-कल के फ़क़ीर और साधु भी वैसे ही संसारी होते है, जिस प्रकार और चिकित्सा करनेवाले लोग होते है। फ़क़ीरी दवाओ के बारे मे लोग यह तो जानते ही नहीं कि यह क्या चीज़ है; पर सीधे सादे लोगों का उन पर विश्वास बहुत अधिक होता है; और वे लोग अपनी दवायें भी बड़ी तरकीब से देते है। इसलिए उनका काम बहुत मज़े मे चलता है। जब केवल अन्धविश्वास के कारण बिना समझे-बूझे बच्चो का इस प्रकार का इलाज किया जाता है, तब प्रायः उन बच्चो की जान पर आ बनती है। इस प्रकार के इलाज से सर्वसाधारण को बहुत सचेत रहना चाहिए।

छोटी अवस्था के बच्चों के मरने के जो अनेक कारण है, उनमे से कुछ कारण ऊपर बतला दिये गये हैं। इन कारणों को जानकर

हमें इस बात पर विचार करना चाहिए कि वे कौन से उपाय हैं जिनसे मनुष्य के जीवन का यह नाश रोका जा सकता है। आगे के प्रकरणों मे हमने विस्तार के साथ इस बात पर विचार किया है कि इन सब बातो मे किस प्रकार सुधार किया जा सकता है। हम आशा करते हैं कि मनुष्य के जीवन की इन विकट समस्याओ के सम्बन्ध में लोगो मे जो अज्ञान फैला हुआ है, वह दूर हो जायगा और लोगो का ध्यान इन बातो मे सुधार करने की ओर जायगा।

दूसरा प्रकरण

गर्भिणी माता

गर्भिणी माताओं से निवेदन—आप लोगों से ये बातें बहुत ही गम्भीर भाव से कही जाती हैं। इस प्रकरण में आपकी और आपके कल्याण की बातें कही गई हैं। इसका एक एक पृष्ठ आप बहुत ध्यान से पढ़ें; और इस प्रकरण में जो नई नई बातें बतलाई गई हैं, उनके हर एक अंग को बहुत अच्छी तरह समझने का प्रयत्न करें। इस प्रकरण में आपसे जो जो बातें करने के लिए कहा गया है, उन सब बातों पर आप तब तक बार बार विचार करें, जब तक वे पूरी तरह से आपकी समझ में न आ जायँ और आप उनके अनुसार चलने के योग्य न हो जायँ। इन पृष्ठों में जो बातें बतलाई गई हैं, आपको उन बातों के अनुसार पूरी तरह से चलने और धैर्य-पूर्वक उनके अनुसार काम करने की आवश्यकता है। आपको कम से कम अपनी तन्दुरुस्ती का सबसे बढ़कर ध्यान रखना चाहिए। गर्भ के दिनों में आपको जितनी शारीरिक और मानसिक कठिनाइयाँ होंगी, उन सब कठिनाइयों को दूर करने में आपको इन सूचनाओं से बहुत अधिक सहायता मिलेगी।

गर्भ के लक्षण—जिन स्त्रियों को पहले से अनुभव नहीं होता, उन्हें कठिनता से अपने गर्भवती होने का पता चलता है। आगे जो लक्षण बतलाये गये हैं, उनसे हर एक स्त्री यह समझ सकती है कि वह गर्भवती है या नहीं।

(१) मासिक धर्म का बन्द होना—मासिक धर्म का मतलब है जननेन्द्रिय से खून जाना। ऐसा खून प्रायः एक एक महीने के अन्तर पर जाया करता है। यह जवान या बालिग होने के समय से आरम्भ होता है और प्रायः ४५ वर्ष की अवस्था तक जारी रहता है। पर लड़कियों के जवान या बालिग होने की सब जगह कोई एक उम्र नहीं है। ठंडे देशो मे लड़कियां कुछ देर से जवान या बालिग होती हैं और गरम देशो मे उससे कुछ पहले ही हो जाती हैं। भारत में लड़कियों को प्रायः बारह बरस की उम्र से ही खून जाना शुरू हो जाता है। यह खून तीन से पाच दिनों तक जाता रहता है। कुछ स्त्रियो को खून जल्दी जल्दी जाता है और कुछ को देर से। इसी प्रकार कुछ को अधिक दिनों तक जाता है और कुछ को कम दिनों तक।

जिस समय गर्भ रहता है, उस समय खून जाना बन्द हो जाता है; और जब तक गर्भ रहता है, तब तक नहीं जाता। यह गर्भ रह जाने का एक बहुत बड़ा प्रमाण है। प्रायः बहुत सी स्त्रियां ऐसी ही होती हैं जो मासिक-धर्म बन्द होते ही यह समझ लेती हैं कि हमे गर्भ रह गया है। परन्तु शरीर में खून की कमी या पूरा भोजन न मिलना आदि और भी कई ऐसी अवस्थायें हैं, जिनमें मासिक-धर्म बन्द हो जाता है। यदि किसी कारण से मन मे कोई भय समा जाय, तो भी ऐसा हो सकता है। लेकिन फिर भी जिस स्त्री को पहले बराबर हर महीने ठीक तरह से खून जाता हो, उसका खून जब बन्द हो जाय, तब उसे यही समझना चाहिए कि गर्भ रह गया है।

(२) सवेरे के समय तबीयत खराब रहना और जी मिचलाना—गर्भवती होने का यह दूसरा लक्षण है; पर यह लक्षण सभी स्त्रियों मे नहीं पाया जाता, केवल कुछ स्त्रियों मे ही होता है। गर्भ रह जाने पर शुरू के कुछ महीनों मे सवेरे के समय स्त्री की तबी-

यत बहुत भारी या ख़राब जान पड़ती है और उसे मिचली आती है। कभी कभी यह बात सवेरे के समय न होकर दिन मे और किसी समय भी होती है। इसका मुख्य कारण यह होता है कि गर्भवाली स्त्री की पाचन-क्रिया बिगड़ जाती है, उसे भोजन ठीक तरह से नहीं पचता। बहुत सी स्त्रियाँ सवेरे सवेरे गरम पानी का एक कटोरा पीकर ही इस कष्ट से छुटकारा पा जाती हैं। कुछ अवस्थाओं मे ऐसा होता है कि यह गरम पानी पेट से फिर मुँह के रास्ते बाहर निकल जाता है और वह स्त्री दोपहर को भोजन करने के योग्य हो जाती है।

(३) स्तनों में परिवर्त्तन—गर्भ रहने के बाद दूसरे महीने मे गर्भवती स्त्री के स्तन या छातियाँ बड़ी होने लगती हैं और उनके ऊपर की घुंडियां कुछ बड़ी और कड़ी हो जाती हैं। यदि कोई चीज़ उनसे छू जाय तो तुरन्त ही पता लग जाता है; और कभी कभी उनमे थोड़ा दर्द भी होता है।

(४) जल्दी जल्दी पेशाब होना—यह भी गर्भवती होने का एक और लक्षण है। गर्भ रहने के शुरू के कुछ हफ़्तो मे ही ऐसा होता है; और इसका कारण यह होता है कि गर्भाशय का मूत्राशय पर दबाव पड़ता है। धीरे धीरे यह बात दूर हो जाती है।

(५) चीज़ों पर जी चाहना और तबीयत चलना—प्रायः ऐसा होता है कि खाने-पीने की नई, विलक्षण और अस्वाभाविक चीज़ों पर मन चलता है; नये रंग-ढंग मे रहने को जी चाहता है और मन के भाव बदलते रहते हैं। ऐसा होने पर भी स्त्री को समझ लेना चाहिए कि वह गर्भवती है।

(६) गर्भ में बच्चे की गति—यह एक बहुत महत्त्व का लक्षण है। यह प्रायः गर्भ रहने के अठारहवें सप्ताह मे दिखलाई पड़ता है। इसमे माता को पहले-पहल ऐसा जान पड़ता है मानो बच्चा गर्भ के अन्दर इधर-उधर हिलता डुलता है।

यदि इन लक्षणों में से कई लक्षण एक साथ ही दिखाई पड़ें तो समझ लेना चाहिए कि गर्भ रह गया है।

कुछ स्त्रियाँ यह आशा करती हैं कि डाक्टर, वैद्य या हकीम आदि केवल हमारी नाड़ी देखकर ही यह बतला देंगे कि हमें गर्भ है या नहीं। वे यह समझती हैं कि डाक्टरों आदि को नाड़ी की अवस्था से ही गर्भ का पता चल जाता है। इसमें सन्देह नहीं कि गर्भ रहने पर स्त्री की नाड़ी में कुछ परिवर्त्तन होते हैं, पर केवल नाड़ी देखकर कभी यह नहीं बतलाया जा सकता कि इस स्त्री को गर्भ है या नहीं। जो स्त्री अपने गर्भ का निश्चय करना चाहती हो, उसे या तो ध्यान से यह देखना चाहिए कि उसमें ऊपर बतलाये हुए लक्षण हैं या नहीं; और या खूब अच्छी तरह से अपनी डाक्टरी परीक्षा करानी चाहिए।

गर्भिणी माता का सबसे पहला कर्त्तव्य—साधारणतः यही कहा जा सकता है कि जब मासिक बन्द हो जाय, तबीयत कुछ खराब या भारी जान पड़ने लगे, खाने-पीने की इच्छा बदल जाय और स्तन बड़े हो जायँ, तो स्त्री को सचेत हो जाना चाहिए। जब उसे अपने गर्भवती होने का विश्वास हो जाय, तब उसका सबसे पहला कर्त्तव्य यह है कि वह जहाँ तक हो सके, अपनी तन्दुरुस्ती बनाये रखने का प्रयत्न करे और इसके लिए वह अपनी सारी शक्तियाँ लगा दे।

गर्भिणी माता के स्वस्थ रहने के नियम

परिस्थितियाँ—गर्भिणी स्त्री के आस-पास चारों ओर सभी बातें ऐसी होनी चाहिएँ जिसमें वह सदा सुखी और प्रसन्न रहे। यदि परिस्थितियाँ ऐसी न हों तो उनमें सुधार करके उन्हें ऐसा बनाना चाहिए, जिसमें वह सदा प्रसन्न रहे। इससे गर्भवती स्त्री का मन बहुत अच्छी तरह बहला रहेगा। प्रसन्नता शरीर को सबसे अधिक

पुष्ट करनेवाली चीज़ है। जिन बातों से चित दुःखी या अप्रसन्न होता हो, उन सब बातों से गर्भवती स्त्री को बहुत बचना चाहिए; क्योंकि यदि मन दुःखी और चिन्तित रहता है तो गर्भ के बच्चे पर उसका बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है।

ताज़ी हवा—ताज़ी हवा से ख़ून साफ़ होता है। जहाँ तक हो सके, सदा खुली हवा मे रहना और बड़े हवादार और खुले हुए कमरे मे सोना गर्भवती स्त्रियों के लिए बहुत ही अधिक आवश्यक है। ताज़ी हवा से कभी किसी आदमी को किसी तरह की हानि नहीं पहुँचती। जो स्त्रिया साधारणतः ऐसे कमरों, घरो या गलियों मे रहती हों जिनमे और भी बहुत से लोग रहते हों और जहा बहुत भीड़-भाड़ रहती हो, उन्हें उचित है कि वे नित्य सवेरे और सन्ध्या के समय और ऋतु को देखते हुए जब अच्छा और उपयुक्त समय मिले, बाहर निकलकर ऐसे स्थान मे चली जाया करें जहा उन्हे खुली और साफ़ हवा मिल सकती हो।

व्यायाम या कसरत—भारतीय स्त्रिया अच्छी तरह यह बात नहीं जानतीं कि नियमपूर्वक व्यायाम करने से क्या क्या लाभ होते है। जो अमीर स्त्रियां मोटरों और गाड़ियों पर सवार होकर इधर-उधर घूम सकती है, वे समझती है कि इस प्रकार घूम फिरकर हवा खा आने से ही कसरत हो जाती है। पर यह बात नहीं है। यदि साधारणतः शरीर को तन्दुरुस्त और मज़बूत रखने के लिए शारीरिक व्यायाम आवश्यक है, तो गर्भवती स्त्री के लिए गर्भ के दिनों मे नियम से कसरत करना और भी आवश्यक है। बहुत सी स्त्रियो के लिए तो सवेरे और सन्ध्या के समय कुछ दूर तक टहल लेना ही बहुत होगा। जब तक डाक्टर आदि ख़ास तौर पर मना न करें तब तक गर्भ की अवस्था मे स्त्रियों को बराबर अपने नित्य के सब काम सदा की भाँति करने चाहिए। उन्हे न तो कभी बहुत अधिक आराम करना चाहिए,

न चुपचाप खाली बैठे रहना चाहिए और न खुली हवा का व्यायाम छोड़ना चाहिए। उन्हें काम-धन्धा छोड़कर और बिलकुल सुस्त होकर कभी बैठना नहीं चाहिए; क्योंकि गर्भ के दिनों मे इस तरह सुस्त होकर बैठे रहने से कई प्रकार के छोटे-मोटे रोग हो जाते हैं। जो लोग बड़े आदमी और सम्पन्न होते है, वे बड़े अभिमान से कहा करते है कि हमारे घर मे गर्भवती स्त्री से कभी कोई काम-धन्धा नहीं कराया जाता। परन्तु इससे बहुत हानि होती है, क्योंकि पाचन-क्रिया बिगड़ जाती है। घर-गृहस्थी के छोटे-मोटे और हलके काम करते रहने से बहुत अच्छी कसरत हो जाती है और स्त्री का शरीर ठीक और मन प्रसन्न रहता है। गर्भवती स्त्री बहुत जल्दी थक जाती है; इसलिए उसे सदा इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वह जो कसरत या काम-धन्धा करे, उससे उसका शरीर बहुत अधिक थककर बिलकुल शिथिल न हो जाय। सब प्रकार के विकट व्यायाम, जैसे दौड़ना, कूदना, घुड़-सवारी, नाचना, टेनिस या बैडमिन्टन आदि खेलना बिलकुल छोड़ देने चाहिए। मतलब यह कि कोई ऐसा काम न करना चाहिए जिससे शरीर बहुत अधिक हिले-डुले या उसे झटका लगे। न तो कभी कोई भारी काम करना चाहिए और न भारी चीज़ें उठानी चाहिए; क्योंकि इससे खून जाने लगता है और कच्चा गर्भ गिर जाता है। यदि गर्भ रहने से तीन महीने के अन्दर ही बच्चा बाहर निकल जाय, तो उसे कच्चा गर्भ गिरना कहते है। सीढ़ियों पर से या दूसरे बहुत ऊँचे स्थानों पर से नीचे उतरने के समय बहुत सावधानी से पैर रखने चाहिए। जल्दबाज़ी करने से बहुत हानि होती है। जहां तक हो सके, सब प्रकार की यात्राओं आदि से बचना चाहिए। यदि सड़क बहुत साफ़ हो और मोटर या गाड़ी इतने धीरे धीरे चले कि शरीर को झटका न लगे, तो इन सवारियों पर यात्रा करने से कोई हानि नहीं होती।

स्नान—गर्भवती स्त्रियों को सदा नियम से स्नान करना चाहिए, जिसमें उनके शरीर का ऊपरी चमड़ा सदा साफ़ रहे। शरीर की

त्वचा का या ऊपरी चमड़े का ध्यान रखना बहुत ही आवश्यक और महत्त्व की बात है। इस पर पूरा पूरा ध्यान न रखने से तन्दुरुस्ती बिगड़ती है। स्नान के लिए ऋतु के अनुसार ठंढे या गरम पानी का व्यवहार करना चाहिए।

कपड़े—कपड़े अलग अलग ऋतु के अनुसार होने चाहिए। वे हलके, ढीले और गरम होने चाहिए। गर्भ की अवस्था मे सरदी आदि से बचने के लिए जाड़े के दिनों मे गरम कपड़े आवश्यक होते है। बहुत तंग कपड़ों और कमर मे बाधने की पेटी आदि का व्यवहार बिलकुल छोड़ देना चाहिए। शरीर पर पहनने के कपड़े इतने ढीले होने चाहिए कि पहनने पर ऐसा जान पड़े कि मानो वे कन्धो पर टॅगे हुए है और उनके कारण पेट पर किसी तरह का दबाव नहीं पड़ना चाहिए। इन दिनो ऐसे जूते पहनने चाहिएँ जिनकी एॅड़िया बहुत ऊॅची न हों, बल्कि नीची हो।

आराम और सोना—आराम करना भी बहुत आवश्यक है। दिन में कुछ देर तक अवश्य आराम करना चाहिए, पर बहुत अधिक देर तक आराम भी न करते रहना चाहिए। जिन स्त्रियों के पहले दो एक बार गर्भ गिर चुके हों, उन्हें इस बात पर और भी अधिक ध्यान देना चाहिए।

मन प्रसन्न रखना—गर्भ में आये हुए बच्चे के रूप और गुण स्थिर करने में मन बहुत अधिक काम करता है। साधारणतः सभी समय और विशेषत' सन्तान उत्पन्न करने के समय माता-पिता के मन की जैसी अवस्था रहती है और गर्भ की अवस्था मे माता जिस प्रकार की बाते सदा सुना करती है, उनका बालक के रूप और गुणो पर तो प्रभाव पड़ता ही है, साथ ही उसके शरीर के रंग पर भी प्रभाव पड़ता है। कोई स्त्री तो धर्म और नीति की बहुत अच्छी अच्छी और मनुष्य को बहुत उन्नत बनानेवाली बाते सुनती है या बड़े बड़े

महात्माओं के जीवन-चरित आदि पढ़ती है; और कोई स्त्री रद्दी और वाहियात और दुराचार आदि की बातें सुनती रहती है। इन सब बातों का गर्भ और उसमें आये हुए बालक पर अलग अलग प्रभाव पड़ता है। इसलिए गर्भवती स्त्री को सदा अच्छी अच्छी बातें सुननी चाहिएँ और केवल ऐसे ही आदमियों के साथ रहना चाहिए जिनके स्वरूप, चाल-चलन और बात-चीत से मन प्रसन्न रहे। यूरोप की जातियों में यह एक बहुत ही अच्छी चाल है कि ब्याह के बाद पति और पत्नी दोनों मिलकर कहीं बाहर चले जाते हैं और वहाँ या तो अच्छी अच्छी प्राकृतिक शोभाओं की सैर करते हैं और या ऐतिहासिक महत्त्व की चीज़ें और स्थान आदि देखते हैं। माता-पिता के हृदय पर इस प्रकार के दृश्यों का बहुत अच्छा प्रभाव पड़ता है और उत्पन्न होनेवाली सन्तान पर उस प्रभाव का बहुत अच्छा परिणाम होता है। ऐसी अवस्था में मन में उत्पन्न होनेवाले भावों से बहुत सहायता मिलती है। जब स्त्री बराबर मनुष्य-जाति के अच्छे से अच्छे लोगों का ध्यान और विचार करती रहती है, तब वह सन्तान भी आदर्श ही उत्पन्न करती है। इसके विरुद्ध यदि उसके मन में भय या इसी तरह के और दूसरे बुरे भाव उत्पन्न होते रहते हैं, तब वह सन्तान भी ऐसी ही उत्पन्न करती है जिसमें अनेक दोष और त्रुटियाँ होती हैं।

सम्भोग—गर्भ रहने पर आरम्भ के तीन महीनों में और अन्त के एक महीने में पति और पत्नी को सम्भोग से बिलकुल बचना चाहिए। यदि आरम्भ के तीन महीनों में सम्भोग हो, तो उससे खून जाने और कच्चा गर्भ गिर जाने का भय रहता है; और यदि अन्तिम महीने में सम्भोग किया जाय, तो भ्रूण की झिल्ली फट जाने का डर रहता है जिससे बच्चा होने के समय या उसके बाद माता के खून में ज़हर फैल जाता है। जिन स्त्रियों को बराबर कच्चा गर्भ गिर जाया करता हो, उन्हें गर्भ के आरम्भिक महीनों में पुरुष के साथ सम्भोग करने से बहुत बचना चाहिए।

जननेन्द्रियाँ—जननेन्द्रियों को सदा बहुत साफ़ रखने का विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिए। यदि इस ओर ध्यान न दिया जाय, तो उसमे खुजली या जलन आदि होने लगती है जो बहुत अधिक कष्ट देती है।

दाँत—दांतो के किसी अच्छे चिकित्सक से दातों की परीक्षा करा लेनी चाहिए। यदि मसूड़ो मे मवाद दिखाई पड़े, तो सचेत हो जाना चाहिए। जब मसूड़ो मे मवाद आ जाता है तब प्रसव के समय स्त्री में रोगों को रोकने की शक्ति कम हो जाती है और उसकी तन्दुरुस्ती प्रायः बिगड़ जाती है। गर्भ के दिनों मे दांतों पर पूरा पूरा ध्यान न देने के कारण प्रसव के बाद बहुत सी स्त्रियों के शरीर मे ज़हर फैल जाता है जिससे वे मर जाती है।

भोजन—गर्भ की अवस्था मे भोजन पर भी विशेष रूप से ध्यान देना चाहिए। गर्भवती स्त्री की तन्दुरुस्ती पर भी भोजन का बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है और गर्भ मे आये हुए बालक पर भी। गर्भवती स्त्रियों को बहुत से रोग प्रायः इसी लिए हो जाते है कि उनका भोजन ठीक और जैसा चाहिए वैसा नहीं होता। गर्भ के दिनों मे सब प्रकार के रोगों से बचे रहने के लिए नीचे बतलाई हुई बातो का बहुत ध्यान रखना चाहिए और इन सूचनाओं के अनुसार चलना चाहिए।

भोजन सदा सादा, शरीर को पुष्ट करनेवाला और अच्छा होना चाहिए। मक्खन, घी, गौ के दूध, ताज़े फल, तरकारी और रोटी मे वे सभी चीज़े रहती है जिनका भोजन के पदार्थों मे रहना आवश्यक है। यदि स्त्री को मांस आदि या पशुओ से मिलनेवाला भोजन ही अच्छा लगता हो, तो साधारणतः और विशेषकर ऐसी अवस्था मे जब कि उसका मन चले, वह मांस, अंडे, मछली और मुर्गं आदि खा सकती है। यदि आदत या इच्छा होने पर भी ये सब चीज़े उसे

बिलकुल ही न मिले, तो उसकी तन्दुरुस्ती कुछ बिगड़ जायगी। पर गरिष्ठ मांस, सब प्रकार का पचने में भारी और बासी भोजन, गरम चपातियां और बहुत अधिक मसालोंवाली तरकारियां आदि बिलकुल नहीं खानी चाहिएँ। भारतवर्ष जैसे गरम देश में यदि स्त्रियां मांस न खायँ तो अच्छा ही है।

यों तो देखने में यही जान पड़ता है कि गर्भवती स्त्री को कुछ अधिक भोजन की आवश्यकता होती है; क्योंकि एक तो उसे अपना शरीर पालना पड़ता है और दूसरे अपने गर्भ के बालक को भी भोजन पहुँचाना पड़ता है, पर असल में यह बात नहीं है। गर्भ के कारण भोजन की पाचन-शक्ति में कुछ ऐसा फेरफार हो जाता है जिसके कारण स्त्री बहुत भारी पदार्थों को सहज में नहीं पचा सकती। उसकी पाचन-शक्ति घट जाती है, उसकी भूख अनियमित हो जाती है और खाने-पीने के सम्बन्ध में उसका मन बहुत चंचल हो जाता है। इस-लिए ज्यों ही उसे भूख लगे, त्यों ही उसे तुरन्त खाने न बैठ जाना चाहिए। इसी प्रकार जब कोई ख़ास चीज़ खाने की उसकी इच्छा हो, तब उसे तुरन्त ही बिना समझे-बूझे वह चीज़ नहीं खा लेनी चाहिए। खाने-पीने के सम्बन्ध में बहुत विचार से काम लेना चाहिए। खाने-पीने की कई चीज़ें ऐसी होती हैं कि यदि केवल बहुत अधिक इच्छा होने के ही कारण खा या पी ली जायँ तो उनसे तन्दुरुस्ती बिगड़ जाती है। यदि खाने-पीने की किसी चीज़ के लिए स्त्री अपनी इच्छा किसी प्रकार रोक ही न सकती हो तो उसे बहुत ही थोड़ी मात्रा में वह चीज खानी या पीनी चाहिए।

आवश्यकता से कम भोजन करना—यदि पूरा भोजन न किया जाय या ऐसा भोजन किया जाय जिसमें शरीर को पुष्ट करने-वाली चीज़ें कम हों, तो उस भोजन से शरीर का बहुत ही कम पोषण होता है। ऐसी चीज़ों के खाने या कम खाने से गर्भ में का बच्चा मर सकता है या समय से पहले ही वह गर्भ से बाहर निकल पड़ता है।

यदि शरीर को पुष्ट करनेवाले पदार्थ ठीक तरह से न मिलें और उसके साथ ही यदि शारीरिक परिश्रम भी करना पड़े तो उससे शरीर की तन्दुरुस्ती बहुत कुछ ख़राब हो सकती है और आगे चलकर बच्चे को दूध पिलाने के काम मे भी बहुत कुछ ख़राबी हो सकती है। बच्चा होने के बाद जिन स्त्रियों का दूध कम हो जाता या बिलकुल बन्द हो जाता है, वे प्राय. वही स्त्रिया होती है जिन्हे गर्भ की अवस्था मे पूरा पूरा और शरीर को पुष्ट करनेवाला भोजन नही मिलता।

गर्भ की अवस्था मे स्त्रियों को कभी उपवास, व्रत या और कोई ऐसा धार्मिक कृत्य नहीं करना चाहिए जिससे शरीर को पुष्ट करनेवाला भोजन न मिले। इन सब बातो से माता की भी तन्दुरुस्ती बिगड़ती है और बच्चे की भी।

आवश्यकता से अधिक भोजन करना—जिस प्रकार आवश्यकता से कम भोजन करना बुरा और हानिकारक है, उसी प्रकार अधिक भोजन करना भी बुरा और हानिकारक है। आज-कल लोगों मे जो बहुत सी बीमारिया आदि दिखाई पड़ती हैं, उनमे से अनेक ऐसी है जो या तो बहुत अधिक भोजन करने के कारण होती हैं और या बहुत अधिक पकाये हुए या बहुत बढ़िया और स्वादिष्ट बनाये हुए भोजनों के कारण होती है।

यह कैसे जानना चाहिए कि भोजन ठीक नहीं है—जब भोजन ठीक तरह से न पचता हो, सिर मे दर्द रहता हो और शरीर के ऊपरी चमड़े मे जलन या खुजली रहती हो, तब तुरन्त समझ लेना चाहिए कि जो भोजन मिलता है, वह ठीक नही है; उसमे कुछ दोष है; फिर चाहे वह भोजन किसी तरह का क्यों न हो। यदि पेशाब की डाक्टरी जाच करने पर यह पता चले कि वह उस अवस्था मे नही है, जिसमे साधारणत होना चाहिए, तो समझ लेना चाहिए कि जो भोजन मिलता है, वह शरीर के अनुकूल नही है। यदि उसी

समय भोजन के सम्बन्ध में ठीक व्यवस्था न की जायगी तो आगे चलकर बड़ी ख़राबियां हो सकती हैं। जिन स्त्रियों को सिर में चक्कर आता हो, जी मिचलाता हो, पेट पर भार जान पड़ता हो, दृष्टि में कुछ दोष आ गया हो, आंख के सामने चीज़ें तैरती हुई-सी जान पड़ती हों तो समझ लेना चाहिए कि भोजन ठीक और उपयुक्त नहीं है।

खाने की चीज़ें; दूध—दूध सब प्रकार से पूरा भोजन है। इससे भ्रूण के बढ़ने में सहायता मिलती है। गर्भ के आरम्भ के महीनों में दूध बराबर नियम से पीना चाहिए; और यदि हो सके तो जब तक प्रसव न हो जाय, तब तक बराबर पीते रहना चाहिए। विशेषतः भारतवर्ष की स्त्रियों के लिए दूध पीना और भी अच्छा और आवश्यक है, क्योंकि वे प्रायः शाकाहारी—तरकारियां खानेवाली—होती हैं, मांस आदि नहीं खातीं। भैंस या बकरी के दूध से गौ का दूध कहीं अच्छा होता है। जो टीन में बन्द विलायती दूध आते हैं, उनमें शरीर को पुष्ट करनेवाले वे गुण नहीं होते जो गौ के ताज़े दूध में होते हैं।

घी—घी या मक्खन मिलाने से खाने की चीज़ें शरीर को अधिक पुष्ट करती हैं, इसलिए इन चीज़ों से तन्दुरुस्ती अच्छी होती है। पर घी उसी दशा में खाना चाहिए जब भूख ख़ूब अच्छी तरह लगती हो। इधर कुछ दिनों से घी में बहुत तरह की चीज़ें मिलाई जाने लगी हैं। सार्वजनिक स्वास्थ्य का ध्यान रखनेवाले अधिकारियों को इसे रोकना चाहिए। प्रायः सभी लोग घी में मिलावट की शिकायत करते हैं, इसलिए अगर सरकार इस बारे में कोई कार्रवाई करे, तो सर्वसाधारण कृतज्ञतापूर्वक उसका समर्थन करेंगे।

छाछ या मठा—छाछ और मठा भी बहुत अच्छा और गुणकारी है। भारत में इसका बहुत व्यवहार होता है और यूरोप के देशों में भी लोग इसका व्यवहार करते हैं। वहां बहुत से चिकित्सक

अपने रोगियों से इसका व्यवहार कराते हैं। भारत-सरीखे गरम देश में, जहां साधारणतः सभी ऋतुओं में और विशेषतः गरमी के दिनों में पाचन-क्रिया बहुत जल्दी बिगड़ जाती है, पेट और अँतड़ियों की बीमारियां मठे के व्यवहार से बहुत कुछ रुक सकती हैं। जो स्त्रियां साधारणतः बराबर मठा पीती हों, वे यदि गर्भ की अवस्था में भी बराबर पीती रहें, तो उनके लिए बहुत अच्छा है।

शहद—जिन गर्भवती स्त्रियों को शहद अच्छा लगता हो, वे मज़े में उसका व्यवहार कर सकती हैं। विशेषतः गर्भ की अवस्था में वह और भी पुष्टिकारक होता है।

चावल—यदि गर्भवती स्त्री को पहले से ही बराबर चावल खाने का अभ्यास हो, तो वह चावल में घी या मांस, मछली आदि का शोरबा मिलाकर खा सकती है; पर वह चावल खूब अच्छी तरह उबाला और पकाया हुआ होना चाहिए। वह ठंढा करके और कुछ मीठा मिलाकर भी खाया जा सकता है।

साग-भाजी—साग-भाजी आदि का मज़े में व्यवहार किया जा सकता है। जहां तक हो सके, मटर छोड़ देना चाहिए; क्योंकि उससे कब्ज़ियत होती है। अंजीर, छुहारे और सब प्रकार के ताज़े फल भी लाभदायक होते हैं।

बहुत अधिक मसालेदार चीज़ें, मिठाइयां और मुरब्बे आदि भी बहुत न खाने चाहिएँ। गर्भ की अवस्था में सब तरह की शराब आदि बिलकुल छोड़ देनी चाहिए। और सूखे मांस, भुने हुए अन्न और बहुत कड़ी या तेज़ चाय का भी कभी व्यवहार न करना चाहिए। जब प्रसवकाल पास आ जाय, तब दो या तीन बार में बहुत सा भोजन करने की अपेक्षा पांच-छः बार में थोड़ा थोड़ा भोजन करना ही अच्छा है।

गर्भवती स्त्रियों के भोजन के सम्बन्ध में ऊपर केवल मुख्य मुख्य सिद्धान्त बतला दिये गये है। भारत जैसे विशाल महादेश मे भिन्न भिन्न प्रदेशो मे भोजन का प्रकार आदि अलग अलग होता है। इसलिए खाने-पीने की उन्हीं चीज़ों का व्यवहार करना चाहिए जो बहुत दिनो के अनुभव से लाभदायक और उपयोगी सिद्ध हो चुकी हों; पर उनके सम्बन्ध में भी समय और मात्रा आदि का पूरा पूरा ध्यान रखना चाहिए।

गर्भावस्था में होनेवाली कुछ साधारण बीमारियाँ और दुर्घटनायें—ऊपर स्वास्थ्य और भोजन आदि के सम्बन्ध मे जो नियम बतलाये गये है, यदि उनका ठीक तरह से पालन किया जाय, तो इस प्रकार की बहुत सी बीमारियों से गर्भवती स्त्री बच सकती है। लेकिन फिर भी कुछ बीमारिया ऐसी है जो हो ही जाती है। उनमे से कुछ बीमारियों का यहा वर्णन किया जाता है; और कुछ ऐसी बातें भी बतलाई जाती है जिनसे उनमे कुछ आराम पहुँच सकता है। बाक़ी बीमारियां ऐसी है कि ज्यो ही उनके लक्षण दिखलाई पड़े, तो फिर चाहे वह बीमारी कितनी ही साधारण और छोटी क्यो न हो, तुरन्त किसी अच्छे डाक्टर को बुलाकर उसकी सलाह लेनी चाहिए और आरम्भ मे ही उस बीमारी को रोक देना चाहिए, जिसमें वह बढ़ न सके और नई नई ख़राबियाँ न पैदा कर सके।

अपच या भोजन न पचना—गर्भवती स्त्री को प्रायः यह शिकायत होती देखी जाती है। प्रायः अधिकांश गर्भवती स्त्रियों को किसी न किसी रूप मे यह शिकायत रहती ही है। बहुत सी अवस्थाओं मे प्रायः यह देखा जाता है कि सवेरे के समय तबीयत ख़राब रहती है। ऊपर जहाँ गर्भवती होने के लक्षणों आदि का वर्णन किया गया है, वहा इसके सम्बन्ध मे भी कुछ बाते कही जा चुकी है। यह शिकायत प्रायः उन स्त्रियों में अधिक देखी जाती है जो पहली बार

गर्भवती होती है। यह भी हो सकता है कि बाद के गर्भों में यह तकलीफ़ न हो। प्रायः पहले मास के अन्त मे या जब माहवारी खून नहीं पड़ता या होता तब यह शिकायत देखने मे आती है और डेढ़ दो महीने तक बनी रहती है। गर्भ के तीसरे या चौथे महीने के बाद वह आपसे आप दूर हो जाती है। प्रायः स्त्रियों को यह शिकायत बहुत ही साधारण या हलके रूप में होती है, पर कुछ को बहुत उग्र या विकट रूप में भी होती है। कुछ स्त्रिया सवेरे ज्यों ही सोकर उठती है, त्यो ही उनका जी मिचलाने लगता है। कुछ स्त्रियों को सवेरे जलपान या भोजन करने के बाद तबीयत ख़राब जान पड़ने लगती है और कुछ स्त्रियों को दिन मे कभी एक बार मिचली आती है, बाक़ी दिन भर वे बहुत अच्छी तरह और आराम से रहती है। पर कुछ स्त्रिया ऐसी भी होती है जिनको दिन भर इससे कष्ट रहता है। वे जो कुछ खाती है, उससे उनके शरीर का पोषण तो होता ही नहीं, इसलिए वे दिन पर दिन दुर्बल होती जाती है। इस प्रकार की अवस्थाओ मे तुरन्त अच्छे डाक्टर को दिखलाकर उसकी सलाह लेनी चाहिए। रहन-सहन की बहुत अच्छी, ठीक और नियमित व्यवस्था होनी चाहिए और खाने-पीने के सम्बन्ध मे भी कुछ नियम और व्यवस्था होनी चाहिए। यदि यह शिकायत साधारण और हलकी हो, तो बरफ के छोटे छोटे टुकडे मुँह मे रखकर चूसने चाहिए या बिस्तर पर लेटकर आराम करना चाहिए या केवल दूध ही पीकर रहना चाहिए और या सोडा बाईकार्ब का व्यवहार करना चाहिए। इससे तबीयत कुछ हलकी जान पड़ने लगेगी। जब इन साधारण उपचारो से कोई लाभ होता हुआ न दिखलाई दे, तब गर्भवती स्त्री को चाहिए कि वह डाक्टर से अपनी परीक्षा कराकर रोग के बहुत बढने के पहले ही उसका ठीक ठीक इलाज करावे।

कलेजा जलना, पेट के ऊपरी भाग में दर्द या कष्ट जान पड़ना—यह अपच का एक दूसरा रूप है जो गर्भवती स्त्रियो

को होता है। ठीक और बंधे हुए समय पर भोजन न करने और उचित तथा उपयुक्त भोजन न करने के कारण ऐसा होता है। ऐसी अवस्था मे न तो बहुत अधिक मिठाइया आदि खानी चाहिए और न बहुत चाय पीनी चाहिए, और जब तक यह शिकायत बनी रहे, तब तक बराबर बहुत ही सादा भोजन करना चाहिए। कुछ अवस्थाओ में किसी ऐसी बहुत ही हल्की दवा की भी आवश्यकता हो सकती है, जिससे एक दो दस्त आ जायँ। सोडा बाईकार्ब (एक गिलास गरम जल मे चाय के छोटे चम्मच के बराबर मिलाकर घोला हुआ) देने से भी कुछ अवस्थाओ में लाभ हो सकता है। यदि भोजन के साथ जहा तक कम हो सके, वहा तक कम पानी पिया जाय, तो उससे भी लाभ हो सकता है।

मसूड़े—कभी कभी गर्भवती स्त्रियो के मसूड़े कुछ सूज आते हैं और ज़रा सा छूने पर उनमे से खून जाने लगता है। प्रसव हो जाने के बाद तो यह बात जाती रहती है; पर जब तक यह रहती है, तब तक रोगी को इससे बहुत कष्ट होता है। जिन स्त्रियों को यह शिकायत रहती है, उनकी तन्दुरुस्ती बहुत जल्दी खराब हो जाती है। उन्हे स्वास्थ्य के नियमो का पूरा पूरा ध्यान रखना चाहिए और भोजन के सम्बन्ध में ऊपर जो सिद्धान्त बतलाये गये है, उनका ठीक तरह से पालन करना चाहिए। यदि दो बडे चम्मच भर पानी में आधा ड्राम मर का टिंक्चर (Tincture of Myrrh) मिलाकर उससे कुल्ला किया जाय या मसूड़ो पर किसी ब्रुश या उँगली से ही शुद्ध टिंक्चर ही लगा लिया जाय तो यह शिकायत बहुत कुछ दूर हो सकती है।

मुँह से लार जाना—इसमे गर्भवती स्त्री के मुँह से बराबर लार या पतला पानी-सा बहता रहता है। कभी कभी तो यह इतना कष्ट देता है कि रात के समय स्त्री सुख से सो ही नही सकती; और इस नींद न आने का उसके स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है। इस कष्ट से छुटकारा पाने के लिए टैनिक एसिड ग्लीसरीन (Tannic

Acid Glycerine) के पानी से कुल्ला करना चाहिए। इसके लिए पहले पानी गरम करके ठंढा कर लेना चाहिए और चार आउन्स या आठ बड़े चम्मच भर वह पानी लेकर उसमे आधा आवन्स या एक चम्मच भर यह दवा मिलानी चाहिए।

क़ब्ज़—गर्भ की अवस्था मे प्रायः बहुत सी स्त्रियों को कब्ज़ की शिकायत हुआ करती है। यदि स्त्रियां बराबर चलती फिरती और काम-धन्धा करती रहें, भोजन के उपरान्त खूब पानी पिया करें, ताज़े फल खाया करें, और ठीक समय से पाख़ाने जाया करें तो यह शिकायत बहुत कुछ दूर हो सकती है। गर्भ की अवस्था मे आतें कभी भारी और भरी हुई नहीं रहनी चाहिएँ। यदि कब्ज़ियत हो तो कभी ऐसी पेटेन्ट दवाइया नही खानी चाहिएं जिनके सम्बन्ध में यह पता ही नहीं चलता कि वे किन किन चीज़ों से बनी है। इस प्रकार की बहुत सी दवाइया बहुत ही हानिकारक होती हैं; क्योंकि उनके सेवन से कच्चा गर्भ गिर जाने का भय रहता है। गर्भ की अवस्था मे कब्ज़ दूर करने के लिए केवल बहुत हलकी दस्तावर चीज़े खानी चाहिएं। गर्भवती स्त्रियों का पेट साफ़ करने के लिए सनाय सबसे अच्छी चीज़ है। यदि आधे गिलास पानी मे रात के समय सनाय की दस बारह पत्तियां भिगो दी जायें और सवेरे वह पानी छानकर पी लिया जाय तो उससे बहुत अच्छी तरह काम चल सकता है। तरल पैराफिन (Liquid Paraffin) भी साधारण दस्त लाने के लिए बहुत अच्छी चीज़ है। यहा यह भी बतला देना आवश्यक है कि जिस समय वायुत्याग, पेशाब या पाख़ाने की हाजत जान पड़े, उस समय इन वेगो को कभी रोकना नहीं चाहिए।

दस्त आना—यदि गर्भ की अवस्था मे स्त्री को बार बार दस्त आते हो, तो तुरन्त किसी डाक्टर को दिखलाना चाहिए; क्योंकि इससे प्रायः अनेक प्रकार की बीमारियां हो जाती हैं।

खुजली—यह भी एक ऐसी कष्ट देनेवाली बीमारी है जो प्रायः गर्भ की अवस्था में होती है। यदि खुजली सारे शरीर में हो, तो समझ लेना चाहिए कि गर्भिणी को जो भोजन दिया जाता है, वह ठीक और उपयुक्त नहीं है। ऐसी अवस्था मे उसे केवल दूध देना चाहिए, खाने की और कोई चीज़ नही देनी चाहिए। खुजली से गर्भिणी को इतना अधिक कष्ट और बेचैनी होती है कि उसे रात को जल्दी नींद ही नही आती; और रात के समय नींद न आने के कारण उसकी तन्दुरुस्ती बहुत बिगड़ जाती है और अन्त मे उसके शरीर में बिलकुल बल ही नहीं रह जाता। ऐसी अवस्था में तुरन्त डाक्टर को दिखलाना चाहिए और उसका इलाज करना चाहिए।

कभी कभी ऐसा होता है कि केवल जननेन्द्रिय में ही खुजली होती है। इसका कारण उस अंग की ठीक और पूरी सफ़ाई न रखना है। जननेन्द्रिय को सदा खूब साफ़ रखना चाहिए। यदि केवल इतने से ही खुजली दूर न हो, तो डाक्टर से सलाह लेनी चाहिए। गर्भिणी स्त्रियों को यह रोग अपने डाक्टर से छिपाकर अपना कष्ट व्यर्थ बढ़ाना नहीं चाहिए।

गश या मूर्च्छा—कुछ गर्भवती स्त्रियों को इस समय कभी कभी गश या मूर्च्छा भी हो जाया करती है। कुछ अवस्थाओं में तो यह मूर्च्छा केवल स्नायु की दुर्बलता के कारण होती है और कुछ अवस्थाओं में हृदय की बीमारी के कारण। यदि स्नायु की दुर्बलता के कारण बेहोशी होती हो तो नौसादर आदि सूँघे जानेवाले नमकों (Smelling Salts) मे से कोई एक नमक सूँघने से ही होश आ जाता है। पर यदि हृदय की बीमारी के कारण बेहोशी हो तो डाक्टर का इलाज करना चाहिए।

पेशाब की तकलीफ़—यह सदा स्मरण रहना चाहिए कि गर्भ के आरम्भ के महीनों में प्रायः सभी स्त्रियों को जल्दी जल्दी पेशाब

होता है। इससे गर्भवती स्त्री को डर या घबरा नहीं जाना चाहिए। पर यदि ऐसी अवस्था आ जाय कि वह अपने गुरदे को वश मे ही न रख सकती हो, अर्थात् रोकने की कुछ चेष्टा करने पर भी पेशाब आप से आप ही निकल जाता हो, तो उसे तुरन्त डाक्टर से सलाह लेनी चाहिए।

मलेरिया या जूड़ी बुखार—मलेरिया का गर्भवती स्त्री के स्वास्थ्य पर बहुत ही बुरा प्रभाव पडता है। इससे उसे या तो समय से पहले ही प्रसव हो जाता है या शारीरिक दृष्टि से बहुत ही दुर्बल सन्तान उत्पन्न होती है। इसके सिवा इस बुखार के कारण यों ही स्वास्थ्य बिगड़ जाता है, शरीर दुर्बल हो जाता है और प्रसव के कारण तन्दुरुस्ती और भी ख़राब हो जाती है। इसके सिवा यदि वह कमज़ोर हो और उसकी तन्दुरुस्ती ख़राब हो तो प्रसव की दशा मे उसे यह रोग हो जाने का ज़्यादा डर रहता है। भारत मे प्रसव के बाद या उससे पहले ही बहुत सी स्त्रिया मर जाती है, और जो बच जाती है, उनकी तन्दुरुस्ती बिलकुल चौपट हो जाती है। इसलिए यदि गर्भवती स्त्री को कभी बुखार आवे तो उसका तुरन्त इलाज कराना चाहिए। इसमे कुछ भी देर नही करनी चाहिए। यदि इसमे कुछ भी ला-परवाही की जायगी, तो माता और बच्चे दोनो के ही प्राण सकट मे पडेंगे।

मलेरिया के लिए कुनैन एक बहुत प्रसिद्ध दवा है, पर गर्भवती स्त्रिया उसका व्यवहार करने से डरती है, क्योंकि उससे कच्चा गर्भ गिर जाने का डर रहता है। यदि थोड़ी मात्रा मे कुनैन का व्यवहार किया जाय तो यह डर भी कम हो जाता है, परन्तु यदि इसका व्यवहार न किया जाय या देर से किया जाय तो पुराने मलेरिया का विष सारे शरीर मे फैल जाने के कारण समय से पहले ही प्रसव हो सकता है।

क्षय या तपेदिक—यह रोग प्रायः स्त्रियों को, और विशेषत. परदे मे रहनेवाली स्त्रियों को होता देखा गया है। यदि खासी का कुछ भी लक्षण दिखाई पड़े तो गर्भवती स्त्री को तुरन्त सचेत हो जाना

चाहिए। साधारण सर्दी आदि लग जाने के कारण भी खासी हो सकती है, पर यदि उसका ठीक तरह से इलाज न किया जाय, तो वही बढकर क्षय या तपेदिक का रूप धारण कर सकती है। इसके लिए बहुत अधिक खुली हवा की आवश्यकता है। साथ ही अच्छा और पुष्टिकारक भोजन भी मिलना चाहिए, जिससे इस दुष्ट रोग का आरम्भ में ही नाश हो जाय।

पैरों और घुटनों की सूजन—गर्भावस्था के अन्त के महीनों में पैरो और घुटनो में जो हल्की सूजन हो जाती है, उसका कोई इलाज करने की आवश्यकता नही है। पर जब पिंडलियों आदि में भी सूजन हो जाय और चलने-फिरने में कठिनता होने लगे, तब उसका इलाज होना चाहिए। साधारण अवस्थाओ मे इसका इलाज भी बहुत ही सीधा सादा होता है। बहुत सी स्त्रियां तो केवल बिस्तर पर आराम करके तरल पदार्थों का और खाने मे साधारण नमक का व्यवहार छोड़कर इस कष्ट से छुटकारा पा जाती है। बिस्तर पर लेट-कर आराम करना बहुत आवश्यक है; क्योंकि चलने में शरीर का बोझ पड़ने के कारण भी कुछ सूजन हो आती है। यदि इन सीधे और साधारण उपायो से सूजन कम न हो, तब डाक्टर से सलाह लेनी चाहिए और उसका मुनासिब इलाज करना चाहिए। यदि ऐसी अवस्था मे ला-परवाही की जायगी और इसकी ओर ध्यान न दिया जायगा, तो प्रसव के समय इसके कारण कुछ और भी ख़राबिया हो सकती हैं।

भ्रूणपात या कच्चा गर्भ गिरना—यदि गर्भ रहने के चार महीने के अन्दर बच्चा निकलकर नष्ट हो जाय, तो उसे भ्रूणपात या कच्चा गर्भ गिरना कहते है। इसके बाद यदि गर्भ रहने से अट्ठाईसवे सप्ताह के अन्दर बच्चा निकल जाय तो उसे गर्भपात कहते है। (अंगरेज़ी में इन दोनो के लिए शब्द क्रमशः अबोर्शन और मिसकैरिज है।)

साधारणतः कच्चा गर्भ गिरने से शरीर और मन का स्वास्थ्य तो बिगड़ता ही है, पर प्रायः इससे और भी कई बड़ी बड़ी खराबियां हो जाती है और कभी कभी तो प्राण तक निकल जाते है। पर कुछ स्त्रियां ऐसी भी होती है जिन्हें बराबर कच्चा गर्भ गिराने की आदत ही हो जाती है।

सारे सभ्य संसार में सभी प्रकार के समाजो में कच्चा गर्भ गिराने की प्रथा दिन पर दिन बढ़ती जा रही है; और आजकल भारतवर्ष की नई शिक्षा पानेवाली स्त्रियों मे भी बहुत कुछ इसकी प्रवृत्ति दिखाई पड़ने लगी है। कच्चा गर्भ किन किन कारणों से गिरता है और उसे रोकने के क्या उपाय है, यह आगे बताया जाता है।

कारण—

(१) गरमी या आतशक—यदि किसी स्त्री को बार बार कच्चा गर्भ गिर जाता हो तो उसे यह सन्देह करना चाहिए कि मेरे शरीर मे इस रोग का ज़हर आ गया है। जब तक यह रोग पूरी तरह से अच्छा न हो जायगा, तब तक उसे बराबर कच्चा गर्भ गिरता रहेगा। इस बीमारी की पूरी पूरी जाच कराना बहुत ही आवश्यक है, और अगर यह पता लग जाय कि यह बीमारी है, तो स्त्री और पुरुष दोनो को यह रोग दूर करने के लिए पूरा और पक्का इलाज करना चाहिए।

(२) हृदय, गुरदे, फेफड़े और जिगर आदि की बीमारियो के कारण प्रायः कच्चा गर्भ गिर जाया करता है। जब इन अगो मे किसी प्रकार का रोग होता है, तब उससे अप्रत्यक्ष रूप से कच्चा गर्भ गिर जाता है। अच्छी तरह से इलाज कराने से ही इस प्रकार कच्चा गर्भ गिरना बन्द हो सकता है। खून के साथ शरीर मे जो अनेक प्रकार के विष दौड़ते रहते है, उनसे गर्भ के अन्दर ही बच्चा मर जाता और बाहर निकल जाता है।

(३) यदि गर्भवती स्त्री को किसी कारण से बुख़ार आता हो तो उसे उसका इलाज टालना नहीं चाहिए, बल्कि तुरन्त ही अपना अच्छा इलाज कराना चाहिए। इसमे देर करने से भी प्रायः गर्भ गिर जाता है।

(४) कभी कभी ऐसा होता है कि बच्चेदानी अपने ठीक स्थान और अवस्था मे नही होती। जब वह अपने स्थान से कुछ हट जाती है या हटी हुई होती है, तब उसके कारण भी गर्भ गिर जाता है। गर्भवती स्त्री इलाज कराके अपनी बच्चेदानी ठीक स्थान और स्थिति में ला सकती है और पूरे समय गर्भ धारण किये रह सकती है।

(५) गर्भवती स्त्री की मानसिक अवस्था के कारण भी कच्चा गर्भ गिर जाया करता है। चिन्ता, भय, दिमाग़ पर ज़ोर पड़ने, प्रबल मनोवेग—जैसे अचानक बहुत डर जाने या बहुत अधिक शोक करने आदि के कारण भी यही बात होती है। यदि परिस्थिति ऐसी हो जिसमें गर्भवती ख़ूब प्रसन्न रह सके, तो इन मनोवेगों के बुरे प्रभाव रोके जा सकते हैं।

(६) गर्भ के आरम्भ के चार महीनों में यदि सम्भोग किया जायगा तो भी सम्भव है कि कच्चा गर्भ गिर जाय। यद्यपि हमारे यहां के पुराने धर्मशास्त्रों आदि में यहाँ तक कहा गया है कि जब तक गर्भ रहे, तब तक कभी सम्भोग नहीं करना चाहिए, तो भी जिन स्त्रियों को प्रायः कच्चा गर्भ गिर जाया करता है, वे यदि गर्भ के आरम्भ के चार महीनों मे ही सम्भोग न करें तो बहुत अच्छा है। यदि हमारे इस भारतीय आदर्श के अनुसार पूरी तरह से आचरण न हो सके तो भी ज़रूरी और अक़्ल की बात यही है कि आरम्भ के चार महीनों मे बिलकुल सम्भोग न किया जाय।

(७) जिन कामों से शरीर को भारी झटका लगता हो, जैसे कड़ी कसरत या बहुत अधिक थकावट का काम, उनको विशेषरूप से छोड़ देना चाहिए।

(८) कुछ स्त्रियां ऐसी होती हैं कि अगर ऊबड़ खाबड़ सड़क पर सवारी पर चलें, एक सीढ़ी चूक जायँ, बहुत ही थोड़ी ऊँचाई पर से गिर जायँ या क़ालीन आदि पर से फ़िसल जायँ तो उनका कच्चा गर्भ गिर जाता है। ये कारण उत्तेजक तो हैं ही, पर फिर भी इनके द्वारा उन्हीं स्त्रियों का कच्चा गर्भ गिरता है जिनका गर्भाशय किसी गुप्त रोग के कारण जल्दी हिल-डुल जाता है। इसलिए जिन स्त्रियों को प्रायः कच्चा गर्भ गिर जाया करता हो, उन्हें यह आवश्यक है कि वे अपने भीतरी अगों की पूरी और अच्छी जांच करावे। इस प्रकार की जाँच के इतने लाभ हैं कि उसकी पूरी पूरी प्रशंसा करना कठिन है।

यह कैसे पता लगे कि कच्चा गर्भ गिरने का डर है।

यहाँ तीन ऐसी मुख्य बातें बतलाई जाती हैं जिनसे गर्भवती स्त्री समझ सकती है कि कच्चा गर्भ गिरने का डर है। वे तीन बाते इस प्रकार है—

(१) खून जाना।

(२) पेट मे दरद होना। और

(३) पीठ मे दरद होना।

इनमे से पहला लक्षण अर्थात् खून जाना सबसे अधिक महत्त्व का है। यदि किसी स्त्री को गर्भ रहे और गर्भ रहने के चार महीने के अन्दर ही उसे खून जाने लगे, तो उसे तुरन्त समझ लेना चाहिए कि ख़राबी आ रही है। प्रायः स्त्रियाँ यह समझा करती हैं कि यह मासिक धर्म का ही खून है और इसलिए उसका विशेष ध्यान नहीं करती। पर इस प्रकार ध्यान न देने के कारण उन्हे हानि उठानी पड़ती है। ऐसी अवस्था मे सबसे अच्छी बात यह है कि स्त्री चुपचाप बिस्तर पर पड़ी रहे। गर्भ के आरम्भ के महीनों में चाहे कितना ही कम खून क्यों न जाय, उसे बहुत सन्देह की दृष्टि से देखना चाहिए। और यदि इस खून के जाने के साथ ही साथ पेट के नीचे के हिस्से और पीठ मे दरद भी हो तो गर्भवती स्त्री को समझ लेना चाहिए कि अब कच्चा गर्भ गिरना चाहता है।

बचने के उपाय और चिकित्सा

(१) ऐसी अवस्था मे गर्भवती स्त्रियों को, और विशेषतः उन स्त्रियों को जिनका प्रायः कच्चा गर्भ गिर जाया करता है पहले से ही उससे बचने के लिए सब प्रकार के उपाय करने चाहिएँ। उन्हें साधारण टहलने फिरने की तरह के बहुत ही हलके व्यायाम करने चाहिएँ।

(२) यदि यह इच्छा हो कि कच्चा गर्भ गिरने की जहां तक हो सके सम्भावना कम हो जाय, तो गर्भ के आरम्भ के चार महीनों में पुरुष के साथ सम्भोग करने से बिलकुल बचना चाहिए।

(३) यदि गर्भाशय अपने स्थान से हट या बढ़ गया हो तो किसी अच्छे और होशियार डाक्टर से भीतरी अंगों की पूरी तरह से जाँच करानी चाहिए। गर्भाशय की वह ख़राबी बहुत जल्दी दूर हो जायगी और कच्चा गर्भ गिरने के अवसर बिलकुल ही न रह जायँगे।

(४) प्रायः गरमी आदि जिन रोगों के कारण अप्रत्यक्ष रूप से कच्चा गर्भ गिरा करता है, उन रोगो का पता लगाने के लिए शरीर के सब अंगो की पूरी पूरी जाँच कराना आवश्यक है।

(५) जिन स्त्रियों को प्रायः कच्चा गर्भ गिर जाया करता हो, उनके लिए एक बहुत अच्छा उपाय यह भी है कि जब वे साधारण अवस्था मे मासिक धर्म से हों, तब वे अपना सारा समय प्रायः लेटे ही लेटे बिताया करें।

ज्यों ही पहले पहल खून जाता हुआ दिखलाई दे, त्योंही स्त्री को तुरन्त बिस्तर पर लेट जाना चाहिए। वह खून चाहे कितना ही कम क्यो न हो और उस समय वह उसका कितना ही कम महत्त्व क्यो न समझती हो, पर उसे बिस्तर पर आराम ही करना चाहिए। जब तक ऐसा न किया जायगा, तब तक गर्भपात रोकने के चाहे कितने उपाय क्यो न किये जायँ, उनका कुछ भी फल न होगा। यदि इन सूचनाओं

पर पूरी तरह से ध्यान दिया जायगा, तो साधारणतः गर्भ अपने पूरे समय तक रहेगा। स्त्रियों को केवल दो ही चार दिनों तक बिस्तर पर नहीं पड़े रहना चाहिए, बल्कि जब खून जाना बिलकुल बन्द हो जाय, तब उसके बाद भी एक सप्ताह तक बिस्तर पर आराम ही करना चाहिए।

कुछ स्त्रियां गर्भ गिरानेवाली दवाओं का व्यवहार करती हैं और कच्चा गर्भ गिराने के लिए अनेक विलक्षण उपाय करती हैं। ऐसी स्त्रियां मानों अपनी जान जोखिम मे डालती हैं; और यदि वे किसी प्रकार बच भी जाती हैं, तो उन्हें प्रायः अनेक प्रकार के ऐसे रोग आदि हो जाते हैं जिनसे उनका सारा बाकी जीवन बहुत ही कष्ट से बीतता है। इसके सिवा यह एक ऐसा अपराध है जिसके लिए क़ानून से सज़ा भी हो सकती है। तात्पर्य यह कि यह परमात्मा और मनुष्य दोनों के सामने समान अपराध, बल्कि पाप है।

गर्भवती होने की अवस्था में चिकित्सा—जब किसी गर्भवती स्त्री को अपनी तबीयत कुछ ख़राब जान पड़े, तब उसे जटिल रोगों को बढ़ने से रोकने के लिए तुरन्त ही अपनी चिकित्सा करानी चाहिए। विशेषतः गर्भ रहने की अवस्था मे रोगों की ओर पूरा पूरा ध्यान न देने से अनेक भयंकर परिणाम हो सकते है। उसे लापरवाही करके ऐसी बातों को यों ही नहीं जाने देना चाहिए और यह नहीं सोचना चाहिए कि अभी ठहरो; ज़रा देखो, क्या होता है। ज्यों ही कोई बुरा लक्षण दिखलाई पड़े, त्यों ही जहां तक हो सके, किसी अच्छे डाक्टर की सलाह लेनी चाहिए, जिसमे गर्भ के दिनों मे अथवा प्रसव के समय और बड़ी बड़ी ख़राबियां न पैदा हो जायँ। प्रसव के समय शरीर पर जो ज़ोर पड़ता है और रोगो के बढ़ने का जो भय रहता है, उनके विचार से स्वास्थ्य बिलकुल ठीक रखने के लिए सब प्रकार के उपाय करने चाहिएँ।

गर्भवती स्त्रियों को कभी अपने मन से दस्त लानेवाली दवायें नहीं खानी चाहिएँ और न कभी उस अवस्था मे फसद[१] आदि लेनी चाहिए; अर्थात् कभी अपने शरीर की रगों मे से खून नही निकलवाना चाहिए।

वे कार्य जिनसे गर्भ का बच्चा मर तो नहीं जाता, पर उसे हानि पहुँचती है। चरक—भारत के प्राचीन ऋषि और चिकित्सा-शास्त्र के आचार्य चरक ने इस सम्बन्ध मे कुछ बातें बतलाई हैं, जो हम यहाँ पर देते है। भारतीय चिकित्सा-शास्त्र के सम्बन्ध मे इनका चरक-संहिता नामक ग्रन्थ इस देश मे सबसे पुराना और प्रामाणिक माना जाता है। चाहे उनकी कुछ बाते आज-कल के वैज्ञानिकों के मन मे न बैठती हों, पर फिर भी उनके सम्बन्ध मे अन्तिम निर्णय करने से पहले उनकी अच्छी तरह से जांच होनी चाहिए।

(१) जो स्त्री सदा पीठ के बल लेटी रहती है, उसकी नाल भ्रूण की गरदन के चारो ओर लिपट जाती है।

(२) जो स्त्री प्रायः बकती झकती या लड़ती झगड़ती रहती है, उसकी सन्तान को मिरगी का रोग होता है।

(३) जो स्त्री खुले स्थान मे सोती है और रात के समय इधर-उधर घूमती है, उसे पागल सन्तान उत्पन्न होती है।

(४) जिस स्त्री को सम्भोग की बहुत अधिक कामना होती है, उसकी सन्तान विकृत रूपवाली (भद्दी) या निर्लज्ज होती है।

(५) जो स्त्री प्रायः दुःख या चिन्ता करती है, उसकी सन्तान डर-पोक, दुबली पतली और अल्पायु या थोड़े दिनों तक जीनेवाली होती है।

---

(१) हमारे यहाँ भारत मे बहुत दिनो से लोग स्वास्थ्य सुधारने के लिए फसद खुलवाते या रगों से खून निकलवाते हैं। साधारण लोग यह समझते हैं कि साल भर मे एक बार यह निरापद क्रिया कर लेने से फिर साल भर शरीर अच्छा रहता है। अब भी देश के कुछ भागों मे लोग मई और जून के महीनों में यह क्रिया किया करते हैं।

(६) जो स्त्री दूसरों की सम्पत्ति आदि देखकर सदा ईर्ष्या करती है, उसे ऐसी सन्तान उत्पन्न होती है जो दूसरो पर अत्याचार करनेवाली होती है या दूसरो की धन-दौलत देखकर जलती है।

(७) जिस स्त्री को चीज़े चुराने की आदत होती है, उसे ऐसी सन्तान होती है जो सब प्रकार के परिश्रमो में बहुत आलस्य करती है या जो बहुत ही दुष्ट स्वभाव की, दूसरो को हानि पहुँचानेवाली या बुरे कर्म करनेवाली होती है।

(८) जो स्त्री स्वभाव से क्रोधी होती है उसकी सन्तान क्रोधी और चिड़चिड़ी, अभिमानी या आडम्बर-प्रिय और दुष्ट स्वभाववाली होती है।

(९) जो स्त्री बराबर सोती रहती है, उसकी सन्तान भी सदा सोनेवाली और मूर्ख होती हे और उसकी अग्नि बहुत मन्द होती है।

(१०) जो स्त्री शराब आदि पीती है, उसे ऐसी सन्तान होती है जिसे सदा प्यास लगी रहती है और जिसका मन बहुत ही दुर्बल होता है।

(११) जिस स्त्री को मिठाई आदि खाने का बहुत शौक़ होता है उसे ऐसी सन्तान उत्पन्न होती है जिसे या तो मूत्रेन्द्रिय का रोग होता है और या बहुत मोटी होती है।

(१२) जिस स्त्री को सूअर का मांस अच्छा लगता है, उसे ऐमी सन्तान उत्पन्न होती है जिसकी आंखे बहुत लाल होती है या जिसे दमा हो जाता है या जिसके बाल बहुत अधिक कड़े होते हैं।

(१३) जो स्त्री बहुत अधिक खट्टी चीज़े खाती और पीती है, उसे ऐसी सन्तान होती है जिसे चमड़े या आखो के रोग होते है।

(१४) जो स्त्री बहुत अधिक नमकीन पदार्थ खाती और पीती है, उसे ऐसी सन्तान होती है जिसके चेहरे पर जल्दी झुर्रियाँ पड़ जाती है, बाल सफ़ेद हो जाते है और गजी होती है।

(१५) जो स्त्री बहुत अधिक चरपरे पदार्थ खाती है, उसे ऐमी सन्तान होती है जो दुर्बल हो जाती है या जो और आगे सन्तान उत्पन्न करने के योग्य नहीं होती।

(१६) जो स्त्री बहुत कड़ुए पदार्थ खाती है, उसे ऐसी सन्तान होती है जो शरीर से बहुत कमज़ोर या दुबली पतली होती है या जिसे क्षय-रोग हो जाता है।

(१७) जो स्त्री बहुत कसैले पदार्थ खाती और पीती है, उसे ऐसी सन्तान उत्पन्न होती है जिसका मल-मूत्र रुक जाता है।

इसलिए ऊपर बतलाई हुई बातों से हर स्त्री को बहुत बचना चाहिए, जिसमे उसकी सन्तान उन सब रोगो और दोषो आदि से बची रहे जो ऊपर बतलाये गये हैं। इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि जिन बातो से अच्छी सन्तान उत्पन्न करने की माता की शक्ति मे दोष आते है, उन्ही बातो से पिता की शक्ति मे भी दोष आते हैं। यदि भोजन और आचार आदि उपयुक्त और ठीक न होंगे, तो उत्पन्न होनेवाली सन्तान उसी प्रकार तत्काल नष्ट हो जायगी, जिस प्रकार वह नया लगाया हुआ पौधा नष्ट हो जाता है जिसकी जड़ ज़मीन मे अच्छी तरह नहीं जमती। बहुत अधिक समय तक धूप, हवा या बरसते हुए पानी मे रहना, अनुकूल न बैठनेवाला भोजन करना, नहाने आदि के सम्बन्ध मे किसी नियम पर न चलना और बराबर कब्ज़ियत रहना आदि ऐसी बाते हैं जिनसे गर्भ का नाश होता है।

स्तनों की घुंडियों की रक्षा—साधारणतः स्त्रियाँ यह बात नही जानतीं कि बच्चे को अच्छी तरह से दूध पिलाने के पहले स्तनों की घुंडियो को तैयार कर रखना चाहिए। उन्हे यह समझ रखना चाहिए कि उन घुंडियों का बराबर एक साल तक व्यवहार होगा। इसलिए यह बहुत ही आवश्यक है कि प्रसव का समय आने से दो तीन महीने पहले से ही स्त्रियों को अपने स्तनो की घुंडियों पर विशेष ध्यान देना चाहिए, नई उत्पन्न होनेवाली सन्तान अपने मसूड़ों से उन घुंडियों को बहुत ज़ोर से काटती है; और यदि घुंडियाँ इस प्रकार के आक्रमण के लिए पहले से ही तैयार न रहे तो उनमे घाव हो जायँगे और पीड़ा होने लगेगी। साधारणतः बच्चो को दूध पिलाने के

कारण स्त्रियों के स्तनों की घुंडियां बीच से फट जाती हैं, उनमे दरारें पड़ जाती हैं। इससे उन्हें बहुत कष्ट होता है। प्रायः ऐसा होता है कि बच्चे को पीने के लिए उतना दूध नहीं मिलने पाता जितना मिलना चाहिए; क्योंकि जहां तक हो सकता है, स्त्रियां उस पीड़ा से बचना चाहती हैं, जो उन्हें बच्चे के काटने से होती है। जहां तक हो सकता है, वह बच्चे को दूध पिलाने से बचती है। इससे बच्चे को पूरा पूरा दूध नहीं मिलने पाता, जिससे बच्चा कमज़ोर और दुबला हो जाता है। प्रसव के बाद इस कष्ट से बचने के लिए गर्भवती स्त्री को उचित है कि वह गर्भकाल मे ही अपने स्तनो की घुंडियों पर उचित ध्यान दे।

घुंडियों या कुचाग्र को तैयार करना—घुंडियों को तैयार करने के दो उपाय हैं। एक उपाय तो यह है कि घुंडियों के ऊपर का चमड़ा कड़ा कर दिया जाय; और दूसरा उपाय यह है कि वह मुलायम कर दिया जाय। यूरोप के देशों मे गर्भवती स्त्रियां अपने स्तन के अगले भाग पर ओ-डी-कलोन लगाकर उसे कड़ा कर लेती हैं। फिट-किरी घोले हुए पानी से भी यही बातें हो सकती है; और इसमे खर्च भी बहुत कम पड़ता है। यह क्रिया सन्तान उत्पन्न होने से दो या तीन महीने पहले से करनी चाहिए। थोड़ी सी अच्छी रुई या काटन,ऊल फिटकिरी घुले हुए पानी मे डुबा लेनी चाहिए और उससे स्तनों की घुंडियों को तर करना चाहिए। इसके बाद उन घुंडियों को गरम पानी से धो डालना चाहिए और तब उन पर बराबर बराबर मिला हुआ ग्लीसरीन और ओ-डी-कलोन या मेथिलेटेड स्पिरिट मलनी चाहिए। इससे चमड़ा मज़बूत होने लगता है और फिर दूध पिलाने के समय उनमे घाव या दरारें नहीं होने पातीं। जिन दिनों फिटकिरी मिले हुए पानी का व्यवहार किया जाता हो, उन दिनों बच्चे को दूध पिलाने से पहले और बाद दोनों समय स्तनों की घुंडियों को गरम पानी से अच्छी तरह से धो डालना चाहिए। यदि पहले से इतने उपाय कर लेने

पर भी बच्चे के पहले पहल स्तनों को काटने से माता को कुछ पीड़ा हो, तो उसे आश्चर्य नही करना चाहिए; क्योकि ज्यों ही बच्चा स्तन की घुंडी को मुँह से अच्छी तरह पकड़ लेता है, त्यो ही पीड़ा दूर हो जाती है। यदि प्रसव से पहले ही स्तनों के अगले भाग पर उन्हें कड़ा करने के लिए ओडी क्लोन या फिटकरी का पानी लगाया जाय, तो यह क्रिया बच्चे को स्तन से दूध पिलाना आरम्भ करने के कुछ दिनों बाद तक भी बराबर होती रहनी चाहिए।

दूसरा उपाय स्तनो की घुंडियों को मुलायम करना है। तेल, वेसलीन, लेनोलीन, घी, मक्खन या हेजलीन क्रीम आदि चिकने पदार्थ लगाने से स्तनों की घुंडियां मुलायम हो जाती हैं।

दबी हुई घुंडियाँ—जिन स्त्रियों के स्तनो की घुंडियां कुछ दबी हुई होती हैं, उनके लिए स्तन से दूध पिलाना बहुत कठिन और कभी कभी असम्भव तक होता है। माता को घुंडी की जड़ धीरे धीरे दबानी और बढानी चाहिए, जिसमें वह अधिक से अधिक बढ़ सके। सन्तान उत्पन्न होने से पहले माता को यह देख लेना चाहिए कि घुंडियां बहुत छोटी तो नहीं है। यदि वे बहुत छोटी हो तो दिन मे कई बार उंगलियों और अँगूठे से उनको दबा और खीचकर बढ़ाना चाहिए। इस काम मे बहुत अधिक बल लगाने की आवश्यकता नहीं है। धीरे धीरे ही ऐसा करना चाहिए जिसमे दरद न हो। यदि किसी तरह की पीड़ा या कष्ट जान पड़े तो यही समझना चाहिए कि आवश्यकता से अधिक ज़ोर लगाया जा रहा है। यदि घुंडियाँ छोटी या दबी हुई हो तो केवल इसी कारण मातायें अपने बच्चो को दूध पिलाना न छोड़ दें। दूध पिलाने से पहले घुंडियाँ उस विशेष प्रकार के पम्प से उठाई जा सकती हैं जिससे दूध पिलाया जाता है और जिसे ब्रेस्ट पम्प या मिल्क पम्प (Breast Pump or Milk Pump) कहते हैं। एक या दो सप्ताह के बाद वे अपनी साधारण अवस्था में आ जायँगी और उस समय दूध पिलाने मे ही आराम मिलने लगेगा।

कपड़े—उत्पन्न होनेवाले बच्चे के लिए गर्भ की अवस्था मे ही कपडे बना रखने चाहिएँ। यदि पहले से ही कपड़े न बना लिये जायँगे तो सम्भव है कि जाडे के दिनों मे बच्चे को सरदी लग जाय। केवल पहले से कपड़े तैयार न रखने के कारण ही बहुत से बच्चे जन्म लेने के एक महीने के अन्दर ही मर जाते हैं।

प्रसव की तिथि का अनुमान—साधारणतः गर्भ २८० दिन (१० चान्द्र मास) तक रहता है; पर अलग अलग स्त्रियों में यह समय कुछ कम या अधिक भी होता है। यदि गर्भ के अन्दर बच्चे का पूरा पूरा विकास हो गया हो, उसके सब अंग ठीक तरह से बन गये हो तो वह ऊपर बतलाये हुए साधारण समय से कुछ पहले भी जन्म ले सकता है। इसी प्रकार जिस बच्चे का पूरा पूरा विकास न हुआ हो, अर्थात् जिसके अंग पूरी तरह से न बने हों, उसके जन्म लेने में इससे कुछ देर भी हो सकती है। ऐसा बहुत ही कम होता है कि गर्भ उचित से बहुत अधिक दिनो तक बना रहे और बच्चा न हो। गर्भवती स्त्रिया प्रायः यह जानना चाहती हैं कि हमे प्रसव कब तक होगा। प्रसव की तिथि या तारीख़ का ठीक अनुमान करने के लिए गर्भवती स्त्री को उचित है कि जिस तारीख़ को वह आख़िरी बार मासिक धर्म से हुई हो, उस तारीख मे सात दिन और जोडे और तब उसमे से तीन महीने घटा दे। बस यही आख़िरी तारीख़ उसे लिख रखनी चाहिए। उसे केवल स्मरणशक्ति पर नहीं छोड़ देना चाहिए।

आख़िरी बार मासिक धर्म हुआ था . . .. १५ अप्रैल को
इसमे सात दिन और जोड़े तो हुआ.. . .. . . २२ अप्रैल
इससे तीन महीने पीछे की तारीख़ हुई.. .. .. .. २२ जनवरी

इस प्रकार प्रायः २२ जनवरी को बच्चा पैदा होगा। कुछ अवस्थाओ मे तो स्त्री को ठीक इसी तारीख़ को बच्चा पैदा होगा; और प्रायः अवस्थाओं मे इस तारीख़ के दस पांच दिन के अन्दर ही

होगा। जब इस प्रकार बच्चा होने की तारीख़ का अनुमान कर लिया जाय, तब उचित यह है कि उससे दो तीन सप्ताह पहले ही प्रसव के सम्बन्ध की सब तैयारियां कर रखनी चाहिएँ।

यदि स्त्री को मासिक धर्म बराबर अनियमित रूप से कभी आगे और कभी पीछे हुआ करता हो, तब उसके सम्बन्ध में अनुमान की हुई यह तारीख़ उतनी ठीक नहीं होती जितनी ठीक उन स्त्रियों के सम्बन्ध में होती है, जिनका मासिक धर्म बराबर ठीक समय पर और नियमित रूप से हुआ करता है।

अच्छा डाक्टर या शिक्षित दाई नियुक्त करना—जब ठीक तरह से यह पता लगजाय कि स्त्री को गर्भ है, तब उचित यह है कि कोई अच्छा डाक्टर या शिक्षित दाई मुक़र्रर कर ली जाय। डाक्टर गर्भिणी स्त्री की अच्छी तरह परीक्षा करेगा और बच्चेदानी के आस पास की हड्डियों को अच्छी तरह नापेगा; और यदि उनमें कोई असाधारण बात या अन्तर दिखाई देगा तो उस दशा में अधिक अच्छा यह होगा कि प्रसव किसी अस्पताल में कराया जाय। पर यदि यह आशा हो कि प्रसव आप से आप और ठीक तरह से हो जायगा, तो फिर घर में ही प्रसव कराया जा सकता है। यदि प्रसव घर में ही होने को हो तो अपने डाक्टर या दाई से उन चीज़ों की एक सूची मांगनी चाहिए जिनकी प्रसव के समय आवश्यकता होगी। और उस सूची की सब चीजें पहले से ही तैयार रहनी चाहिएँ। जिस समय प्रसव की पीड़ा आरम्भ हो, उस समय डाक्टर या दाई को तुरन्त बुलाकर गर्भवती के पास नियुक्त कर देना चाहिए।

प्रसव की तैयारियाँ—हमारे यहां प्रायः शिक्षित दाइयों से काम नहीं लिया जाता और पुराने ढंग की अशिक्षित दाइयां ही सब कुछ करती हैं। इसलिए पाठकों को ठीक ठीक यह बतलाना बहुत ही कठिन है कि यहां हर साल कितनी गर्भवती स्त्रियों की मृत्यु होती है।

पर इसमें सन्देह नहीं कि उनकी संख्या बहुत ही अधिक है। जो स्त्रियां प्रसव के बाद जीती बच भी जाती हैं, वे भीतरी अंगों की पुरानी सूजन के कारण बहुत दिनों तक बीमार बनी रहती हैं। इस प्रकार की स्त्रियों की संख्या भी बहुत अधिक होती है। यदि प्रसव के सम्बन्ध की सब आवश्यक बातों का पूरा पूरा ध्यान रखा जाय, तो इस प्रकार के अनावश्यक कष्टों से बहुत कुछ बचाव हो सकता है। प्रसव और उत्पन्न होनेवाले बच्चे के लिए जिन जिन चीज़ों की आवश्यकता हो, वे सब गर्भ के सातवें महीने तैयार हो जानी चाहिएं। कोई शिक्षित दाई तो इससे भी कुछ और पहले नियुक्त कर लेनी चाहिए। प्रसव के समय और उससे पहले के लिए हमने जो जो तैयारियां बतलाई हैं, वे सब बहुत ही आवश्यक हैं। उनकी ओर से कभी उदासीन नहीं रहना चाहिए।

प्रसव का कमरा— पहले से यह निश्चय कर रखना चाहिए कि प्रसव किस कमरे में कराया जायगा। गर्भ के नवें महीने से बहुत पहले ही वह कमरा सब तरह से तैयार रहना चाहिए और प्रसव की सब तैयारियां भी पहले से ही हो जानी चाहिएं। प्रसव के लिए एक अच्छा और उपयुक्त कमरा चुनना चाहिए। यदि हो सके तो कमरा ऐसा होना चाहिए जो ऋतु की सभी आवश्यकताओं के लिए अनुकूल हो। घर की नालियां और मोरियां आदि बहुत साफ़ रखनी चाहिएं। कमरा कुछ बड़ा होना चाहिए, उसमें अच्छी तरह हवा और रोशनी आनी चाहिए और यदि हो सके तो प्रसव से पहले उसमें सफ़ेदी भी करा देनी चाहिए। जिन चीज़ों की कोई आवश्यकता न हो, वे सब कमरे से बाहर निकाल देनी चाहिएं। छत, दीवारों और फ़र्श को अच्छी तरह साफ़ कर देना चाहिए और धो देना चाहिए।

गर्भवती के बिस्तर के पास कुछ कुरसियां या बैठने के लिए और चीज़ें भी अवश्य होनी चाहिएं। साथ ही एक छोटा सन्दूक भी अवश्य

होना चाहिए जिसमे कपड़े और दूसरी ज़रूरी चीजें गर्द और धूल से बचाकर रखी जा सकें। प्रसव के समय गर्भिणी स्त्री को जितनी चीज़ों की आवश्यकता हो सकती हो, वे सभी चीजें उस कमरे मे पहले से तैयार रखनी चाहिएँ।

प्रसव के लिए आवश्यक चीज़ें—नीचे लिखी चीज़े पहले से ही तैयार रखनी चाहिएँ—

(१) अस्पतालों मे काम आनेवाला बहुत सा कपड़ा लिन्ट और साफ़ रुई।

(२) यदि ग़रीब आदमी हो और विलायती रुई का प्रबन्ध न कर सके तो गुप्त अंगो को धोने के लिए उसे पुराने कपड़े खूब अच्छी तरह धोकर और गरम पानी में उबाल कर रख लेने चाहिएँ।

(३) नाल बाँधने के लिए डोरी।

(४) एक साफ़ कैंची।

(५) वाटर प्रूफ़ का टुकड़ा या कुछ काग़ज़ या मैकिन्टोश।

(६) बहुत सा गरम पानी।

(७) बच्चे को नहलाने के लिए बरतन।

(८) साबुन की दो टिकिया।

(९) जैतून का तेल (Olive oil) दो आउन्स।

(१०) पाँच छः मुलायम तौलिए।

(११) बोरेसिक एसिड।

(१२) बांधने के लिए एक टुकड़ा। जाड़े के दिनों मे यह टुकड़ा फलालैन का और गरमी मे हलके कपड़े का होना चाहिए।

(१३) बच्चे के कपड़े।

(१४) बच्चे के लिए रूमाल या छोटे छोटे टुकड़े और गद्दियाँ।

(१५) पानी गरम करने का एक बरतन या केतली।

(१६) ऐसा सामान जिससे चटपट आग सुलगाई जा सके।

(१७) ऐसा बरतन जिसमे बिस्तर पर लेटे लेटे मल त्याग किया जा सके।

(१८) दूध पिलाने के लिए छोटा बरतन या प्याला।

(१९) लाइसोल (Lysol) आठ आउन्स।

(२०) अरगट का सत (Fluid Extract of Ergot)

(२१) रेंड़ी का तेल (Castor oil) दो आउन्स।

(२२) ऊनी कपड़े का एक ऐसा टुकड़ा जिसमे बच्चे को नहलाने से पहले लपेटा जाय।

प्रसव के समय दिखाई पड़नेवाले लक्षण—

(१) शरीर का बहुत शिथिल और भारी हो जाना।

(२) अंगों का बहुत भारी जान पड़ना।

(३) कुछ खाने को जी न चाहना।

(४) बार बार पेशाब लगना।

(५) झूठे दरद होना।

ये उनमे से कुछ ऐसे लक्षण है जो प्रसव-काल पास आने पर दिखाई पड़ते हैं।

दाइयों आदि के लिए सूचनायें—ऐसे अवसर पर सफ़ाई की सबसे अधिक आवश्यकता होती है। प्रसव करनेवाली स्त्री के कल्याण और रक्षा के लिए सफ़ाई से बढ़कर आवश्यक और कोई बात नहीं है। इसलिए प्रसव के समय पास रहनेवाली स्त्री को सबसे पहले अपनी सफ़ाई का पूरा पूरा ध्यान रखना चाहिए। प्रसव करनेवाली स्त्री के पास जाने से पहले उसे अपने नाखून कटवा लेने चाहिएँ। उसे साफ़ कपड़े पहनने चाहिएँ। हाथों और बाहों में पहनने की अँगूठियाँ, चूड़िया तथा और सब प्रकार के जेवर आदि बिलकुल उतार देने चाहिएँ। बिस्तर के सब कपड़े बिलकुल साफ़ होने चाहिएँ। बिस्तर पर पड़ी हुई स्त्री को छूने से पहले हाथ साबुन और पानी से अच्छी

तरह धो लेने चाहिएँ और लाइसोल लोशन मे डुबा लेने चाहिएँ। यदि प्रसव के समय स्त्री को पाखाना हो जाय तो मल को हाथ नहीं लगाना चाहिए; और जो चीजे गन्दी हो जायँ, वे विलायती रुई और लोशन से साफ़ कर देनी चाहिएँ। बच्चे की नाल बांधने की डोरी और काटने की कैंची पहले गरम पानी मे डालकर साफ़ कर लेनी चाहिए। इन सब बातों का उद्देश्य यह है कि बहुत से ऐसे छोटे छोटे कीड़े होते हैं जो यो दिखलाई नहीं देते। ऐसे कीड़ बाहर से बच्चेदानी के अन्दर न जाने पावे।

यदि दाई इन सब बातो का ठीक ठीक ध्यान रखेगी तो प्रसव करनेवाली स्त्री को प्रसूती बुखार होने का बहुत ही कम डर होगा। प्रसव के समय का यह प्रसूती बुखार बहुत ही बुरा और कष्टदायक होता है। दाई को सब बाते बहुत ही सहानुभूतिपूर्वक करनी चाहिएँ और उसे सदा स्त्री को ढारस दिलाते रहना चाहिए। कभी कोई ऐसी बात नहीं कहनी चाहिए जिससे उसका जी छोटा हो।

बच्चा होने से पहले प्रसव करनेवाली स्त्री की कमीज़ या कुरते का आगा लपेटकर ऊपर कर देना चाहिए और उसमे एक पिन लगा देनी चाहिए। जब बच्चा हो जाय, तब एक छोटे चम्मच भर अरगट का सत थोड़े से पानी मे मिला कर उसे पिला देना चाहिए।

प्रसव के समय स्त्रियों का उपस्थित रहना—प्रसव के समय स्त्री की देख-रेख करने के लिए एक शिक्षित दाई नियुक्त करनी चाहिए। उस कमरे मे बहुत सी स्त्रियों की भीड़-भाड़ नहीं होनी चाहिए। एक तो उनके कारण हवा गन्दी होती है और दूसरे काम मे अड़चन होती है। उस समय वहाँ केवल ऐसी ही स्त्रियो को उपस्थित रहना चाहिए जिन्हे स्वयं बच्चा जनने का अनुभव हो, जिनका स्वभाव बहुत अच्छा हो, जो दाई की बतलाई हुई बातों और सूचनाओंको अच्छी तरह समझ सकती हो, जो जल्दी घबरा न जाती हों, जो दूसरो से प्रेम रखनेवाली और सदा प्रसन्न रहने वाली हो; और सबसे बढ़कर आवश्यक बात यह है कि

उस अवसर पर वे अपना मन और अपना मिज़ाज वश में रख सकती हों ।

प्रसव की व्यवस्था—गर्भ में से बच्चे के उत्पन्न होने को प्रसव कहते है। हमारे यहा प्रसव के जो पुराने ढंग है, उनके कारण भारत मे हर साल बहुत सी स्त्रिया मर जाती है। अब भारत मे शिक्षित दाइयो और डाक्टरो की सहायता से प्रसव कराने की प्रथा चलनी चाहिए। अभी बहुत हाल तक यूरोप के देशो मे भी लोग प्रसव के समय पुरुष डाक्टरो को प्रसव करनेवाली स्त्री के पास नही ले जाते थे। पर अब यह अवस्था बहुत कुछ बदल गई है। भारत-वासियों को ऐसी बातों के लिए तैयार करने मे अभी बहुत कुछ परि-श्रम और प्रयत्न करने की आवश्यकता होगी। पर यह निश्चित है कि शीघ्र ही ऐसा समय भी आ जायगा जब सब लोग दाई या डाक्टर को नियुक्त करने के लाभ अच्छी तरह समझने लगेंगे और इस प्रकार उन बहुत सी स्त्रियो के प्राण नष्ट होने से बच जायँगे जो हर साल उदा-सीनता, ला-परवाही, मूर्खता और निराधार मिथ्या विश्वासो के कारण मरती है। इस समय सर्वसाधारण की ओर से कोई विशेष प्रोत्साहन न होने के कारण शिक्षित दाइयो की संख्या बहुत कम है, इसलिए यहा हम कुछ ऐसी बातें बतलाते है जो प्रसव के समय पास रहने-वाली स्त्रियों के लिए बहुत काम की है। यदि इन सब बातो का पूरा पूरा ध्यान रखा जायगा तो बहुत सी स्त्रियां मरने से बच जायँगी।

जब दरद जान पड़ने लगे, तब किसी अच्छे डाक्टर या शिक्षित दाई को खबर करा देनी चाहिए। प्रायः १५ या २० मिनट के अन्तर पर दरद जान पड़ता है। उस समय गर्भवती स्त्री को तुरन्त ही लेट नही जाना चाहिए, बल्कि कोई ऐसा काम करने लग जाना चाहिए जो उसे अच्छा लगता हो या जिसमे उसका जी लगे। दाई या उसके

पास रहनेवाली दूसरी स्त्रियो को अच्छी अच्छी बातें कहकर उसे प्रसन्न रखना चाहिए। जिस समय उसे यह जान पड़े कि बच्चा पेट मे से नीचे की ओर बढ़ रहा है, तब उसे बिस्तर पर लेट जाना चाहिए। जिस समय दरद न होता हो, उस समय उसे नहीं लेटना चाहिए।

जिस कमरे मे प्रसव होने को हो, उसमे सब आवश्यक चीज़े पहले से ही तैयार रहनी चाहिएँ। पानी अच्छी तरह गरम करके कुछ ठंढा कर लेना चाहिए और साफ़ तौलिए से ढँक देना चाहिए। गर्भवती स्त्री को साबुन और पानी की वस्ती या एनिमा (देखो परिशिष्ट) लेना चाहिए और गरम पानी से नहा कर साफ़ कपड़े पहन लेने चाहिएँ। लाइसोल लोशन बना रखना चाहिए (देखो परिशिष्ट) और बिस्तर तैयार कर रखना चाहिए। स्त्री के गुप्त अंगों को ऊपर से नीचे तक कपड़े से नहीं बल्कि रुई से खूब अच्छी तरह धो देना चाहिए और तब लाइसोल लोशन से धोना चाहिए और उन्हें साफ़ रुई से ढँक देना चाहिए।

जिन स्त्रियो को पहले-पहल प्रसव होता है, उनकी यह क्रिया प्रायः अठारह घंटे मे समाप्त होती है। इसके बाद फिर जो प्रसव होते हैं, उनमे औसत बारह घंटो का समय लगता है। पर फिर भी अलग अलग स्त्रियो मे समय कुछ कम या अधिक भी लगता है। कुछ स्त्रियो का प्रसव बहुत जल्दी हो जाता है। कुछ स्त्रिया ऐसी भी होती है जो ऊपर से देखने मे तो बहुत अच्छी और बिलकुल ठीक जान पड़ती हैं, पर जिन्हें प्रसव मे २४ घंटे से भी अधिक का समय लगता है। कुछ स्त्रियो को अधिक कष्ट होता है और कुछ को कम होता है। कुछ स्त्रिया ऐसी होती हैं जो इस कष्ट से बहुत ही शिथिल और निकम्मी हो जाती है। पर फिर भी ये सब बाते स्त्री के साधारण स्वास्थ्य, शिक्षा और मनोबल आदि पर निर्भर करती है। ज्यों ज्यो समय बीतता जाता है, त्यों त्यो दरद का ज़ोर और उसके रहने का समय दोनो बढ़ते जाते हैं। अगर दरद बहुत तेज़ हो तो प्रसव

बारह घंटे में ही हो जाता है; और नहीं तो उससे अधिक समय लगता है। अन्त में यह अवस्था आ जाती है कि दरद प्रायः बराबर बना ही रहता है, बीच में ज़रा भी नहीं रुकता, और स्त्री की गुप्तेन्द्रिय में से बच्चे का सिर धीरे धीरे बाहर निकलने लगता है। इसके एक दो मिनट बाद फिर दरद होता है और बच्चा बाहर निकल आता है। इसके बाद कुछ मिनटों से लेकर आधे घंटे या उससे कुछ अधिक समय तक दरद नहीं रहता। फिर भग के अन्दर से मांस का एक लोथड़ा सा बाहर निकलता है जिसे आवल कहते हैं। यह नाल और जाली समेत बाहर निकलता है। इसके बाद फिर थोड़ा थोड़ा दरद होता है। इस आवल के साथ कुछ कुछ खून भी निकलता है और तब बहुत कुछ आराम जान पड़ने लगता है।

नये उत्पन्न हुए बच्चे की रक्षा—नये उत्पन्न हुए बच्चे की रक्षा के लिए जो जो काम करने चाहिएँ, उनका वर्णन दूसरे स्थान पर किया गया है। पर इस अवसर पर पास रहनेवाली स्त्री या दाई को जो जो काम करने चाहिएँ, उनमें से कुछ मुख्य मुख्य यहा बतला दिये जाते हैं।

(१) ज्यों ही बालक जन्म ले, त्यों ही दाई या पास रहनेवाली कोई दूसरी स्त्री दाहिने हाथ की तर्जनी उँगली बच्चे के मुँह के अन्दर डाल कर धीरे से इधर उधर घुमावे, ऐसा करने से बच्चे के मुँह के अन्दर जो कुछ मैल या गन्दी चीज़ होगी, वह बाहर निकल आवेगी। ऐसा करने में कुछ भी घबराने की आवश्यकता नही है, क्योंकि यदि मुँह के अन्दर उँगली धीरे धीरे घुमाई जाय, तो उससे बच्चे को किसी प्रकार की हानि पहुँचने की सम्भावना नहीं है। ज्यों ही इस प्रकार मुँह साफ़ कर दिया जायगा, त्यों ही बच्चा रोने लगेगा। यदि इतने पर भी वह न रोने लगे, तो उसके पैर पकड़ कर इस प्रकार ऊपर उठाना चाहिए जिसमें उसका सिर नीचे की ओर हो जाय और तब

उसकी पीठ धीरे धीरे थपथपाना चाहिए। यह काम साधारण आदमी भी कर सकता है। हां यदि बनावटी ढंग से बालक का सांस चलाने की आवश्यकता हो, तो उसके लिए पहले से कुछ अनुभव और ज्ञान होने की आवश्यकता है।

(२) बच्चे की गरदन के पीछे हाथ ले जाकर यह देखना चाहिए कि नाल उसके गले के चारो ओर दृढ़ता से लिपटी हुई है या नही। यदि वह बहुत कसी हुई हो तो उसे सरका कर सिर के ऊपर ले जाने का प्रयत्न करना चाहिए। यदि इस प्रयत्न मे सफलता न हो तो बायें हाथ की पहली दो उँगलियां नाल के नीचे से ले जाकर नाल मे दो स्थानो पर गाठ लगा देनी चाहिए और तब दोनों गांठो के बीच से नाल को कैंची से काट देना चाहिए।

(३) यदि नाल गरदन मे न लिपटी हो तो उसे स्त्री की गुप्तेन्द्रिय से आठ अँगुल की दूरी पर उसमें गांठ लगा देनी चाहिए और दूसरी ओर बच्चे की नाभी से तीन अँगुल की दूरी पर उसमे एक और गांठ लगा देनी चाहिए; और तब उन दोनों गांठो के बीच से नाल को काट देना चाहिए। अगर खून बहने लगे तो उसे रोकने के लिए तुरन्त ही वहां एक और गांठ लगा देनी चाहिए। यदि ऐसा न किया जायगा तो अधिक खून बहने के कारण बच्चा मर जायगा।

ये सब काम कर चुकने के उपरान्त बच्चे को तो यों ही छोड़ देना चाहिए और तब प्रसूता की ओर ध्यान देना चाहिए। पर पहले बच्चे को किसी गरम कपड़े मे लपेट देना चाहिए और किसी रक्षित स्थान मे रख देना चाहिए। हां उसकी माता के बिस्तर पर नहीं रखना चाहिए।

(४) जो बोरेसिक एसिड (Boracic Acid) का घोल पहले से तैयार किया रखा है, उससे बच्चे की आँखें धो देनी चाहिएँ।

आँवल—जब बच्चा गर्भ से बाहर निकल आता है, तब मांस का एक लोथड़ा गर्भ के अन्दर बचा रहता है जो बाद में बाहर निकलता है। नाल का एक सिरा तो बच्चे की नाभी में लगा हुआ होता है और दूसरा सिरा मांस के उसी टुकड़े में लगा रहता है। अलग अलग स्त्रियों में इस मांस के टुकड़े या आवल के बाहर निकलने का समय भिन्न भिन्न हुआ करता है। अर्थात् किसी का आवल जल्दी निकलता है और किसी का देर में। इसलिए उस आँवल को बाहर निकालने में अनावश्यक रूप से जल्दी न करनी चाहिए; क्योंकि इससे माता को हानि पहुँच सकती है। थोड़ी देर बाद जब उसे फिर दरद होगा, तब यह आँवल आपसे आप बाहर निकल आवेगा। यदि आध घण्टे तक भी आवल बाहर न निकले तो प्रसूता से खाँसने के लिए कहना चाहिए और उसके पेडू को बाएँ हाथ से नीचे और पीछे की ओर दबाना चाहिए। यह काम पास रहनेवाली स्त्री या दाई कर सकती है या स्वयं वह स्त्री भी कर सकती है। यदि पास रहनेवाली स्त्री इस तरह उसका पेडू दबाना चाहे, तो उसे प्रसूता को छूने के पहले अपने हाथ अच्छी तरह धो लेने चाहिएँ।

आँवल गिर जाने पर जब बाहर निकल आवे, तब पास रहनेवाली स्त्री को नीचे लिखे काम करने चाहिएँ—

(१) प्रसूता स्त्री के शरीर पर के जो कपड़े गन्दे हो गये हों, वे निकाल कर अलग कर देने चाहिएँ।

(२) जो सादा पानी पहले से गरम किया हुआ तैयार रखा हो, उसमें रुई डुबाकर प्रसूता की गुप्तेन्द्रिय अच्छी तरह धोकर साफ़ कर देनी चाहिए और तब उसे लाइसोल लोशन (Lysol Lotion) से धोना चाहिए।

(३) इसके बाद गुप्तेन्द्रिय पर साफ़ और दवाओं से धोया हुआ तौलिया रख देना चाहिए और एक पट्टी से उसे अपने स्थान पर बाँध

देना चाहिए। ऐसे तौलिये और रुई ऍंगरेज़ी दवाख़ानों मे मिल सकती है।

(४) इस बात का सदा ध्यान रखना चाहिए कि प्रसूता के बिस्तर पर बहुत साफ़ चाँदनी या चादर बिछी रहे।

प्रसूता की शुश्रूषा के लिए आधुनिक ढंग—यदि यह अभीष्ट हो कि प्रसूता प्रसव के बाद बिलकुल अच्छी होकर उठ खड़ी हो, तो पास रहनेवाली स्त्री या दाई को नीचे लिखी बातो का बहुत अच्छी तरह ध्यान रखना चाहिए—

(१) मुख और आकृति—साधारणतः देखने मे स्त्री की आकृति अच्छी होनी चाहिए और उससे किसी प्रकार की घबराहट या कष्ट नहीं झलकना चाहिए। यदि किसी प्रकार की घबराहट या उत्तेजना दिखाई पड़े, तो समझ लेना चाहिए कि प्रसूता को किसी प्रकार का कष्ट है और उस दशा में उसका इलाज होना चाहिए।

(२) शरीर का तापमान—पहले चार पांच दिन तक दिन मे दो बार थरमामीटर से यह देखना चाहिए कि प्रसूता के शरीर का तापमान कितना है। प्रायः ऐसा होता है कि पहली रात को अधिक उत्तेजना के कारण तापमान १०० से १०१ डिगरी तक पहुँच जाता है। शरीर का तापमान अधिक होने का एक और कारण कब्ज़ है। यदि २४ घण्टे के अन्दर ही तापमान अपने ठीक ठिकाने पर न आ जाय, तब समझ लेना चाहिए कि अन्दर कोई ख़राबी है; और उस दशा मे तुरन्त किसी अच्छे डाक्टर को दिखलाना चाहिए। यदि ऐसा न किया जायगा तो सारे शरीर के खून मे विष फैल जाने की बहुत बड़ी आशंका होगी। ख़ाने मे रखने से पहले थरमामीटर अच्छी तरह धो लेना चाहिए।

(३) लेटने का ढंग—यदि प्रसव के उपरान्त स्त्री सदा पीठ के बल या चित लेटी रहे, अपनी एक या दोनो टाँगें ऊपर की ओर

खींचे रहे, उन्हें फैलावे नहीं और पेट के नीचे के भाग में दरद बतलावे, तो समझ लेना चाहिए कि अन्दर के किसी अंग में सूजन आ गई है। उस दशा में भी तुरन्त अच्छे डाक्टर को दिखलाना चाहिए।

(४) विश्राम—प्रसूता के भली भांति नीरोग होने के लिए उसका पूरी तरह से विश्राम करना बहुत ही आवश्यक है। उसे देखने के लिए उसके बहुत से सम्बन्धियों आदि को बार बार उसके पास नहीं जाना चाहिए। सिर्फ़ घर के लोगों को उसके कमरे में जाने देना चाहिए। कमरे में बहुत अधिक प्रकाश भी नहीं होना चाहिए; क्योंकि इससे भी विश्राम में बाधा पहुँचती है।

(५) निद्रा—निद्रा भी अच्छे स्वास्थ्य का एक लक्षण है। यदि प्रसूता को अच्छी तरह नींद न आती हो तो डाक्टर से सलाह लेनी चाहिए; क्योंकि नींद न आने का कारण यह भी हो सकता है कि खून में विष फैल गया हो।

(६) स्राव—प्रसव के बाद स्त्री की गुप्तेन्द्रिय से जो तरल पदार्थ कुछ समय तक निकला करता है, छः दिन तक उसका रंग लाल रहता है और तब उसका रंग बदलने लगता है। साधारणतः यह स्राव दस दिन तक होता रहता है। यह स्राव धीरे धीरे आपसे आप बन्द हो जाना चाहिए और उसमें दुर्गंध नहीं होनी चाहिए। यदि वह एकाएक रुक जाय या उसमें से दुर्गन्ध आती हो तो तुरन्त डाक्टर से मशविरा लेना चाहिए।

(७) पेशाब—कुछ स्त्रियां लेटी लेटी पेशाब नहीं कर सकतीं, क्योंकि उन्हें इस प्रकार बरतन में पेशाब करने की आदत नहीं होती। ऐसी स्त्रियों को पेशाब करने के लिए उठाकर बैठा देना चाहिए और इसके लिए पूरा पूरा प्रयत्न करना चाहिए; क्योंकि यदि ऐसा न किया जायगा तो फिर यन्त्र की सहायता से उनका पेशाब उतारना पड़ेगा। जब तक नितान्त आवश्यक न हो जाय, तब तक कभी इस प्रकार यन्त्र

से पेशाब न उतरवाना चाहिए। यदि प्रसव के बाद स्त्री को पेशाब न हो, तो हाथ से उसका पेडू दबाना चाहिए और पेशाब करने के लिए उसे उठाकर बैठा देना चाहिए। यदि इतने पर भी पेशाब न हो तो पेट के नीचे का भाग सेंकना चाहिए। यदि इन सब उपायों पर भी पेशाब न हो तो डाक्टर से सलाह लेनी चाहिए। पेशाब न होने से मसाना या मूत्राशय पेशाब से भरा रहता है, जिससे गर्भाशय के अच्छे होने में देर लगती है और उससे जननेन्द्रिय को और अनेक प्रकार से हानि पहुँचने की सम्भावना रहती है।

(८) **पाख़ाना**—यदि पाख़ाना आपसे आप ठीक तरह से न होता हो तो प्रसव के तीसरे दिन प्रसूता को एक आउन्स रेंडी का तेल पीना चाहिए। यदि उसे रेंड़ी का तेल अच्छा न लगता हो तो एक बड़े चम्मच में रौशिल साल्ट या सोडियम पोटैशियम टारटरेट (Rochelle Salts or Sodium Potassium tartarate) आधे गिलास गरम पानी में मिलाकर पीना चाहिए। सवेरे और कोई चीज़ खाने या पीने से पहले यही पीना चाहिए।

प्रसव की अवस्था में कब्ज़ियत से बहुत कष्ट होता है। यदि रात के समय एक आउन्स पानी में एक छोटे चम्मच भर तरल कैस्करा सैग्रेडा (Cascara Sagrada) पी लिया जाय तो उससे भी पाखाना साफ़ हो जाता है। इसकी जगह तरल पैराफ़िन (Liquid Paraffin) का भी व्यवहार किया जा सकता है। यदि प्रसूता को कब्ज़ियत हो तो उस बच्चे को भी कब्ज़ियत हो जाती है जिसे वह दूध पिलाती है।

(९) **भोजन**—पहले दो दिन प्रसूता को केवल दूध पीकर रहना चाहिए। यदि प्रसूता को दूध अच्छा न लगता हो तो उसे बीच बीच में एक प्याला चाय, क़हवा या शोरबा देना चाहिए। तीसरे दिन जब एक आउन्स रेंड़ी का तेल पीने के कारण साफ़ पाख़ाना हो जाय और भूख, जो साधारणतः प्रसव के बाद बन्द सी हो जाती

है, फिर से खुलकर लगे, तब उसके लिए सादे और पौष्टिक भोजन की मात्रा धीरे धीरे बढ़ानी चाहिए। पर जब तक प्रसूता स्वयं कुछ भारी भोजन के प्रति रुचि न प्रकट करे तब तक आरम्भ के कुछ दिनों में कभी उसे ज़बरदस्ती भारी भोजन नहीं देना चाहिए।

नीचे लिखी सूचनाओं से बहुत कुछ काम चल सकता है—

पहले चौबीस घंटे—दूध, शोरवा या क़हवा।

दूसरे दिन—फिर ऊपर लिखी चीज़ें।

तीसरे दिन—एक आउन्स रेंड़ी का तेल। भोजन वही पहले दो दिनों के समान।

चौथे दिन—दूध, शोरवा, सेंकी हुई पाव रोटी, तरकारी और यदि प्रसूता खाया करती हो तो अंडे भी। साधारणतः इसी दिन से स्त्री को वे ही चीज़ें खाने के लिए दी जाने लगती है जो वह सदा खाया करती है। फल भी खाये जा सकते हैं।

पाँचवें दिन—चौथे दिन के समान ही।

धीरे धीरे प्रसूता का अपना वही साधारण भोजन आरम्भ कर देना चाहिए जिसकी उसे सदा से आदत हो। यदि एकाएक नित्य का और भारी भोजन आरम्भ कर दिया जायगा तो उससे पाचन-शक्ति के बिगड़ जाने का भय रहेगा। और पाचन-क्रिया का बिगड़ना न तो स्वयं उसके पक्ष में ही ठीक है और न उसकी सन्तान के पक्ष में ही। जो स्त्री साधारणतः अच्छी और स्वस्थ हो, वह भी यदि बिस्तर पर चुपचाप पड़े रहने की दशा में भी वह पदार्थ खायगी, जो वह उठने-बैठने और काम-धन्धा करने की दशा में खाया करती है तो वह बीमार हो जायगी।

प्रसव के बाद प्रसूता को निश्चितरूप से बीमार ही नहीं समझ लेना चाहिए। पर फिर भी उसके मन और शरीर को पूरे विश्राम

की आवश्यकता रहती ही है। उसके कमरे मे काफ़ी हवा और रोशनी आने की भी बहुत आवश्यकता होती है।

चौथे दिन के बाद प्रसूता के शरीर का ऊपरी भाग नित्य धो दिया जाना चाहिए और हर दूसरे दिन सारा शरीर धोना चाहिए। जब स्राव मे खून दिखलाई पड़ना बन्द हो जाय, उसके पांच दिन बाद अर्थात् प्रसव से तेरहवे दिन प्रसूता को पूरी तरह से स्नान कराना चाहिए। यदि इससे पहले स्नान किया जायगा तो उससे तन्दुरुस्ती खराब होने का डर होगा।

प्रसूता को बहुत जल्दी बिस्तर छोड़कर न उठ बैठना चाहिए। कुछ स्त्रियाँ प्रसव के बाद जल्दी ही सब काम-धन्धा करने के लिए तैयार हो जाती है। यह बहुत हानिकारक है। प्रसव के कारण स्त्री के भीतरी अंगों मे अनेक प्रकार के परिवर्त्तन हो जाते हैं और वे प्रायः छः सप्ताह मे अपनी साधारण अवस्था मे आते है। भारत मे भी यही प्रथा प्रचलित है कि प्रसव के चालीस दिन बाद तक स्त्रियाँ आराम करती हैं। पर यदि परिस्थिति ही ऐसी हो कि जल्दी बिस्तर छोड़कर उठना और काम-धन्धा करना पड़े तो उसे बहुत धीरे धीरे ऐसा करना चाहिए। चौथे दिन वह केवल पन्द्रह मिनट के लिए उठकर बैठ सकती है और इस प्रकार धीरे धीरे बढ़ाती हुई पाचवे दिन आध घंटे, छठे दिन प्रायः पौन घंटे, सातवे दिन सबेरे-सन्ध्या आध आध घंटे, आठवे दिन भी इसी तरह और नवे तथा दसवे दिन सबेरे-सन्ध्या एक एक घंटे उठकर बैठ सकती है।

केवल बिस्तर छोड़कर उठ खड़े होने से ही प्रसूता जल्दी अच्छी नहीं हो जाती। शरीर के रग पट्ठे धीरे धीरे ही ठिकाने आवेंगे। यदि जल्दी काम-धन्धा आरम्भ कर दिया जायगा तो, और विशेषतः उस अवस्था में जब कि स्त्री बीमार होगी, उसके शरीर मे अन्दर ही अन्दर अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न हो जायँगे। ऐसी अवस्था मे जब

तक उसका शरीर बिलकुल ठीक न हो जाय और डाक्टर आज्ञा न दे, तब तक उसे बिस्तर पर ही पड़े रहना चाहिए।

शरीर की आकृति ठीक रखना—शरीर की आकृति ठीक रखने और रग-पट्ठो का लचीलापन बढाने के लिए प्रसूता को बिस्तर पर पड़े पड़े ही अपने हाथ पैर हिलाने चाहिएँ और नित्य कुछ मिनटों तक उसे उन अंगों को घुमाना और सीधा करना चाहिए। इससे पेट और पैरो के पट्ठे ठीक अवस्था मे बने रहते है जिससे शरीर की शकल बिगड़ने नहीं पाती। यदि हो सके तो उसे नीचे लिखे प्रकार से व्यायाम करना चाहिए—

(१) बिस्तर पर लेटे लेटे पहले तो दोनों बाँहों की सहायता से और तब बिना उनकी सहायता के शरीर का ऊपरी भाग ऊपर उठाना चाहिए और बैठने के आसन मे होने का प्रयत्न करना चाहिए। कुछ देर तक अच्छी तरह लेटे रहने के बाद यह क्रिया होनी चाहिए और दिन मे कई बार होनी चाहिए।

(२) यही क्रिया अपनी दोनों बाहो को अपनी छाती पर इधर-उधर अर्थात् दाहिना हाथ बाईं तरफ़ और बायाँ हाथ दाहिनी तरफ़ रखकर और फिर बाहो को आगे की ओर फैलाकर करनी चाहिए।

(३) प्रसूता अपने दोनों घुटनों को मिलाकर रखे और दाई से उन दोनों को आपस मे अलग करने के लिए कहे। जब दाई उन घुटनों को अलग करने के लिए ज़ोर लगावे, तब वह उसके विरुद्ध घुटनों को सटाये रखने के लिए ज़ोर करे।

(४) इसके सिवा प्रसूता को अपना पेट खूब ज़ोर से फुलाना चाहिए और फिर खूब सिकोड़ना चाहिए और इस प्रकार पेट के अन्दर के पट्ठों का व्यायाम करना चाहिए।

ये सभी व्यायाम बहुत ही धीरे धीरे और सचेत होकर करने चाहिएँ। पेट और रानो की मालिश का भी बहुत अच्छा फल होता

है। यदि उस पर चारो ओर से अच्छी तरह एक पट्टी बाध ली जाया करे तो यह भी बहुत अच्छा है।

अन्तिम सूचनायें—छोटी अवस्था के बच्चो की मृत्यु की संख्या घटाने के प्रश्न पर पाश्चात्य देशो के निवासी बहुत ही गम्भीरता से विचार कर रहे है। इस उद्देश्य की सिद्धि के लिए वे लोग गर्भावस्था के समय स्त्रियों की देख-रेख पर दिन पर दिन अधिक ध्यान देने लगे है। इधर हाल मे उन कारणो का पता लगाया गया है जिनसे गर्भपात हो जाता है या मरा हुआ बच्चा उत्पन्न होता है; और इन दोनों बातो को दूर करने के लिए कुछ उपाय भी निकाले गये हैं। उन उपायों का फल आशा से कहीं बढकर हुआ है। सबसे पहली बात तो यह हुई है कि छोटे बच्चो की मृत्यु की संख्या बहुत घट गई है। और दूसरी बात यह हुई है कि आज से बीस बरस पहले जितने असमय गर्भपात होते थे और जितने मरे हुए बच्चे उत्पन्न होते थे, उनकी अपेक्षा अब बहुत कम होने लगे हैं। शिशु के कल्याण और गर्भिणी स्त्री के स्वास्थ्य मे अब भी बहुत घना सम्बन्ध है और गर्भिणी स्त्री का अच्छा स्वास्थ्य गर्भावस्था मे उसकी अच्छी देख-रेख पर निर्भर करता है। यदि गर्भ की अवस्था मे स्वास्थ्य बराबर अच्छा बना रहे तो असमय गर्भपात, मरे हुए बच्चों के जन्मने और बिना पूरी तरह से बढ़े हुए बच्चो के उत्पन्न होने के अवसर बहुत कम हो सकते हैं।

पाश्चात्य देशों मे जब मरे हुए बच्चे उत्पन्न होते है, तब उनकी सूचना स्वास्थ्य-विभाग के अधिकारियों को दी जाती है और वे उनका लेखा और विवरण तैयार करते है। भारत मे भी थोड़ा सा व्यय करके म्युनिसिपेल्टियाँ यह काम बहुत अच्छी तरह कर सकती है; और इस प्रकार हर साल इसके लेखे तैयार हो सकते है और उन पर भली भाति विचार किया जा सकता है। भारत की स्त्रियो में जितने असमय गर्भपात होते है, उन सबका लेखा तैयार करना सहज काम नही है; पर फिर भी उनकी संख्या कम नही होती। ये सब और इसी

प्रकार की और दूसरी बाते राष्ट्रीय दृष्टि से बहुत महत्त्व की हैं और इस योग्य हैं कि सरकार और प्रान्तीय अधिकारी इस पर बहुत तत्परता के साथ विचार करे। यह बात माननी पड़ेगी कि इधर कुछ वर्षों मे प्रान्तीय सरकारो और भारत-सरकार ने इस सम्बन्ध मे कुछ प्रयत्न किये है। उदाहरण के लिए क़स्बो आदि मे शिशु-सप्ताह मनाये जाने लगे है। परन्तु ये ही प्रयत्न यथेष्ट नही है। इस प्रकार की सरकार की सहायता के सिवा यदि सब लोग आपस मे मिलकर उस ढंग की संस्थायें स्थापित करे जिस ढंग की संस्थायें इँग्लैंड मे माताओं और बच्चों के कल्याण के लिए (British National League for Maternity and Child Welfare) हैं, तो उनसे भारत की स्त्रियो का बहुत भला होगा; क्योकि भारत की स्त्रियों को यह जानने की बहुत अधिक आवश्यकता है कि गर्भ के दिनों मे किस प्रकार सचेत रहना चाहिए, बच्चों का लालन-पालन किस प्रकार करना चाहिए और उन्हे किस प्रकार खिलाना-पिलाना चाहिए। इस प्रकार की संस्थाएँ सब जगह एक साथ ही नही स्थापित की जा सकतीं। इसलिए अधिक उत्तम यही है कि भारत की स्त्रियो को ज्यो ही यह पता चले कि वे गर्भवती हैं, त्यो ही उन्हे उचित है कि वे किसी अच्छे डाक्टर की देख-रेख मे रहने लगें। उनके लिए यही सबसे अच्छा रास्ता है, और यदि वे इस रास्ते पर चलने लगें तो फिर उन्हें और किसी बात की आवश्यकता न रह जाय। इधर कुछ दिनो से कुछ समझदार स्त्रिया इस बुद्धिमत्तापूर्ण मार्ग पर चलने लगी है और डाक्टरों के परामर्श और अनुभवपूर्ण ज्ञान का महत्त्व समझने लगी है। पर उनकी संख्या बहुत ही कम है और स्त्रियो के रोगों तथा छोटे बच्चो की मृत्यु की अधिकता का यह हाल है कि उनका ध्यान करके रोएँ खड़े हो जाते है।

गर्भवती स्त्री को सदा इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि जिस चीज़ का आरम्भ ही अच्छा न होगा, उसका भविष्य भी कभी अच्छा

नहीं हो सकता। इसलिए ज्यों ही उसका स्वास्थ्य ज़रा भी बिगड़ता हुआ दिखाई दे, त्यों ही उसे तुरन्त डाक्टर को दिखलाना चाहिए। उसे सदा इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि इस देश मे प्रसव के समय बहुत सी स्त्रियाँ मर जाती हैं और जो स्त्रियां मरने से किसी प्रकार बच भी जाती है, वे प्रसव के बाद बहुत दिनो तक बहुत बीमार रहती हैं। इसलिए गर्भिणी स्त्री को गर्भ के दिनो मे अपने आपको तन्दुरुस्त बनाये रखने के लिए कोई बात उठा नहीं रखनी चाहिए; और ऐसा प्रयत्न करना चाहिए जिसमे वह अच्छी तरह प्रसव करके फिर तन्दुरुस्त बनी रहे।

तीसरा प्रकरण

जन्म के समय से बालक की रक्षा

माता के प्रति—इस प्रकरण मे यह बतलाया जायगा कि जन्म के समय से बालक की रक्षा आदि किस प्रकार की जानी चाहिए। उस समय तुम्हे तो बहुत ही कम काम करना पड़ेगा। इस प्रकरण मे जितनी बाते बतलाई गई है, वे सब दाई आदि के ही करने की है। पर साथ ही तुम्हे भी इन सब बातो का ज्ञान होना चाहिए, क्योकि इनका सम्बन्ध स्वयं तुम्हारी सन्तान से है। यदि तुम्हे इन सब बातो का पूरा पूरा ज्ञान होगा, तो तुम यह बात अच्छी तरह समझ सकोगी कि अच्छी शिक्षित दाई और अशिक्षित दाई मे कितना अन्तर होता है। यदि तुम देखो कि जो दाई तुम्हारे पास रहती है, वह इस प्रकरण में बतलाई हुई बातो के अनुसार काम नही करती, तो तुम उसे हटा दो और दूसरी अच्छी दाई नियुक्त करो। तुम्हें ऐसी होशियार दाई मिलनी चाहिए जो अपना काम ख़ूब अच्छी तरह जानती हो। यह तो व्यवहार की बात है। वह जो कुछ काम करेगी, उसके लिए तुम्हें कुछ धन देना पड़ेगा। फिर उसकी भूल या अज्ञान के कारण तुम या तुम्हारा बच्चा क्यो सकट मे पड़े। ऐसी बातो मे तुम अपने पुराने तंग विचारो और भावो को छोड़ दो और समझदारी से काम लो। इसके बदले में स्वयं तुम्हारा स्वास्थ्य भी अच्छा रहेगा और तुम्हारे बच्चे की भी रक्षा होगी।

नाभि को डोरी से बाँधना—ज्यो ही बच्चा उत्पन्न हो, त्यों ही दाई को उचित है कि बच्चे की नाभि की नाल बांध दे। नाभि की

जड़ से तीन अँगुल की दूरी पर निशान करके वहां डोरी से बांध दे। फिर उस गांठ से कुछ दूर पर स्त्री की गुह्येन्द्रिय से प्रायः आठ अँगुल की दूरी पर एक दूसरी गांठ लगा दे और तब दोनों गांठों के बीच से नाल को किसी तेज़ चाकू से उसकी धार ऊपर की ओर करके या किसी कैंची से काट दे। चाकू या कैंची को पहले से ही गरम पानी में उबाल लेना चाहिए। यदि चाकू या कैंची गन्दी और मैली होगी तो कई रोगों के विष फैलने का डर रहेगा। इस प्रकार के रोग हलके और साधारण भी हो सकते हैं; पर कभी कभी इतने भीषण भी होते हैं कि उनके कारण बच्चे की जान पर आ बनती है, इसलिए इस काम में सदा बहुत सावधानी रखनी चाहिए।

बच्चे को कपड़े में लपेटना—जब नाभि की डोरी बँध जाय तब बच्चे को किसी गरम कपड़े में, और विशेषतः जाड़े के दिनों में तो अवश्य ही, लपेटकर रख देना चाहिए। गर्भ के अन्दर बच्चा खूब गरम रहता है और बाहर की हवा गर्भ की भीतरी गरमी के मुक़ाबले में बहुत ठण्डी होती है। यदि इस बात का ध्यान न रखा जायगा तो बहुत सम्भव है कि बच्चे को सरदी लग जाय। कपड़ा इस तरह लपेटा जाना चाहिए जिसमें बच्चे के मुँह के पास उसके सांस लेने के लिए काफ़ी जगह बची या खुली रहे। इसके बाद दाई को चाहिए कि वह बच्चे को पलँगड़ी पर लिटा दे और तब दूसरे कामों में लगे।

छोटे बच्चे की आँखें—यदि बच्चे की आंखों में किसी तरह का कीचड़ या मैल आदि लगी हो तो वह साफ़ रुई के टुकड़े से पोंछ दी जानी चाहिए। थोड़ा सा बोरेसिक एसिड (Boracic Acid), उतना ही जितना एक पैसे पर आ जाय, गरम किये हुए पानी के एक प्याले में घोल दिया जाय; और तब साफ़ रुई की सहायता से इसी घोल से उसकी आंखें अच्छी तरह धोकर साफ़ कर दी जायँ। यदि आँखों में कुछ सूजन हो तो तुरन्त डाक्टर को बुलवाना चाहिए; क्योंकि बच्चे के

जन्म लेते ही आंखों में जो सूजन होती है, वह प्रायः उसकी दृष्टि के लिए हानिकारक होती है। इस महत्त्व की बात का ध्यान न रखने के कारण कुछ बच्चे अन्धे हो जाते हैं। नये जन्मे हुए बच्चों की आंखों को प्रकाश की चमक से भी बचाना चाहिए।

नाक—यदि नाक में कोई चिकना पदार्थ लगा हो तो उसे भी साफ़ कर देना चाहिए।

कान—यदि कान में किसी तरह की मैल जमी हो तो वह भी पानी सोखनेवाली रुई गरम पानी में भिगोकर उससे साफ़ कर दी जाय। साथ ही इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि कोई चीज़ बच्चे के कान के अन्दर न चली जाय।

चिकना पदार्थ दूर करना—बच्चे के शरीर पर जहा कहीं कोई चिकना पदार्थ लगा हो, दाई को उचित है कि वह सब साफ़ रुई की सहायता से पोंछ दे और उसके सारे शरीर पर जैतून के तेल की मालिश कर दे।

बच्चे का पहला स्नान—जाड़े के दिनों में बच्चे को पहले पहल किसी गरम कमरे में नहलाना चाहिए। ऋतु के अनुसार बच्चे को या तो गुनगुने पानी से या गरम पानी से स्नान कराना चाहिए।

बच्चा दाई की गोद में लेटा रहना चाहिए और उसे साबुन मलकर अच्छी तरह नहलाना और साफ़ करना चाहिए। बगल, रानों के बीच और इसी प्रकार के दूसरे स्थानों को खूब ध्यान से साफ़ करना चाहिए और तब उसे गरम पानी से स्नान कराना चाहिए। साबुन बच्चे की आखों में न जाने पावे, नहीं तो उसे बहुत कष्ट होगा। जाड़े के दिनों में बच्चे को अँगीठी आदि के सामने रखकर स्नान कराना चाहिए और इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि किसी तरफ़ से ठण्ढी हवा का झोंका न आने पावे। उसके

पहले स्नान मे दो तीन मिनट से अधिक समय न लगना चाहिए; और स्नान के लिए पानी खर्च करने मे किफ़ायत नहीं करनी चाहिए।

स्नान करने के कारण बच्चे के शरीर मे जो पानी लग गया हो, वह शरीर पर कोई मुलायम तौलिया धीरे धीरे रखकर सुखा देना चाहिए। तौलिए से उसका शरीर कभी ज़ोर से रगड़ना नही चाहिए, क्योकि नये जन्मे हुए बच्चे का शरीर बहुत ही कोमल होता है। शरीर पर का सारा जल अच्छी तरह और बहुत जल्दी जल्दी सुखाना चाहिए।

स्नान कराने के बाद बच्चे का शरीर बहुत अच्छी तरह देख लेना चाहिए और यह देख लेना चाहिए कि उसके किसी अग मे कोई असाधारण बात तो नही है। दाई को अच्छी तरह देख लेना चाहिए कि शरीर मे कहीं कोई ख़राबी या चोट आदि का निशान तो नहीं है। यदि मल या मूत्र त्याग करने के भाग बन्द हों, तो तुरन्त डाक्टर को बुलवाकर दिखलाना चाहिए। यदि इस बात मे ग़फ़लत की जायगी तो बच्चे की जान जाने का भय होगा।

नाभि की नाल—स्नान के बाद सबसे अधिक ध्यान देने की चीज़ नाभि की नाल है। उसे अच्छी तरह साफ़ करके उस पर पाउडर छिड़क देना चाहिए। पाउडर ज़िंक आक्साइड (Zinc Oxide), स्टार्च (Starch) और बोरेसिक एसिड (Boracic Acid) तीनो एक एक आउन्स मिले हुए हो। यह पाउडर पहले से ही खूब अच्छी तरह तीनो चीजे मिलाकर तैयार करके चौड़े मुँह की बोतल या शीशी मे रखा रहना चाहिए।

बोरेसिक लिण्ट का तीन इंच चौड़ा और चार इंच लम्बा एक टुकड़ा लेकर उसके बीच मे एक छेद करना चाहिए; और उस छेद के बीच में से नाल निकाल ली जाय। अब उस लिण्ट पर कई छोटे चम्मच भरकर

वह पाउडर डाल दिया जाय और तब वह लिंट इस प्रकार लपेट लिया जाय जिस प्रकार दवा बेचनेवाले लोग दवा की पुड़िया लपेटते हैं। ऐसा करने से पाउडर नाल के साथ बराबर लगता रहेगा। इस क्रिया से नाल बहुत जल्दी सूख जाती है। नित्यप्रति भारत मे जो बहुत से बच्चे जन्म लेते ही मर जाते हैं, उनमें से बहुतों के मरने का कारण यही होता है कि नाल की जैसी व्यवस्था होनी चाहिए, वैसी नहीं होती। या तो नाल काटने के समय लोग सचेत नहीं रहते और या नाल के कटकर गिरने से पहले अथवा नाभि के अच्छे होने से पहले कुछ असावधानी की जाती है। ये सब बातें उन्हीं पुराने ढंग की दाइयों के अज्ञान के कारण होती हैं जो बच्चा जनाने का काम करती हैं और जिनका नाल को पकड़ने और काटने आदि का ढंग बहुत ही गन्दा होता है। नाल की ठीक ठीक रक्षा करने के लिए प्रायः चौथाई इंच मोटा, दो इंच लम्बा, और दो इंच चौड़ा साफ़ गाज़ (Sterile Gauze) का एक टुकड़ा लेना चाहिए और उसे नाभि के ऊपर रखकर पेट पर इस प्रकार पट्टी बाँध दी जानी चाहिए जिसमें वह अपने स्थान से इधर-उधर न हटे। कभी कभी ऐसा होता है कि बच्चों की नाभि के रास्ते से आँतें बाहर निकल आती हैं। यदि इस प्रकार गाज़ रखकर पट्टी बाँध दी जायगी तो नाभि में से आँतों के बाहर निकलने का भय न रहेगा। यह गद्दी और पट्टी आरम्भ में बराबर एक महीने तक बँधी रहनी चाहिए।

पट्टी—यहाँ यह बतला देना आवश्यक है कि साधारण अवस्थाओं में पेट पर जो पट्टी बाँधी जाती है, वह छोटे बच्चों के पेट पर बाँधने के लिए ठीक नहीं होती। वह प्रायः ऊपर या नीचे खिसक जाती है, नाभि खुल जाती है और उस पर की गद्दी हट जाती है। प्रायः मल-मूत्र से भी वह ख़राब हो जाती है। इस बात को बचाने के लिए यह आवश्यक है कि पट्टी उस ढंग से बाँधी जाय जो ढंग इस चित्र में दिखलाया गया है। यदि इन सूचनाओं का ठीक तरह से

पालन किया जायगा तो नाभि बहुत जल्दी अच्छी हो जायगी और उसका घाव भर जायगा।

यदि नाल मे से खून बहता हो तो नाल को फिर से अच्छी तरह बांध देना चाहिए। जहां पहले गाँठ दी गई हो, उसके पास ही एक और गाँठ दे देनी चाहिए। इससे खून अवश्य ही रुक जायगा।

नाल को शरीर से अलग करना—बच्चे के जन्म लेने से पाँच सात दिन के अन्दर ही साधारणतः नाल उसके शरीर से अलग हो जाती है। पर कभी कभी वह दस या पन्द्रह दिन तक भी उसके साथ ही लगी रहती है। नमी और सीड़ आदि के कारण ही नाल अधिक दिनों तक शरीर के साथ लगी रहती है। यदि नाल को पानी से बचाया जाय तो वह जल्दी सूख जायगी और साधारणतः पाँचवे दिन कटकर अलग हो जायगी। नाल पर सदा पाउडर छिड़कते रहना और बोरेसिक लिण्ट या साफ़ रुई मे लपेटना (जैसा कि पहले बतलाया जा चुका है) बहुत ही लाभदायक होता है। नाल को सूखा रखना बहुत ही आवश्यक है। यदि नाल का ठीक ठीक ध्यान न रखा जाय तो अनेक प्रकार के भीषण रोगो की सम्भावना रहती है। इसके लिए बहुत तेज़ कीटाणुनाशक (Antiseptic) औषधो का प्रयोग नहीं करना चाहिए, क्योंकि उनके कारण नाल के अलग होने मे बहुत देर लगती है।

यदि एक सप्ताह तक भी नाल अलग न हो तो घबराने या चिन्ता करने की कोई बात नही है। अपनी ठीक अवस्था मे पहुँचकर वह आपसे आप गिर जायगी। उसे खींचने या और किसी प्रकार अलग करने के कारण बच्चे को बहुत कष्ट होता है और कभी कभी तो उसके प्राणों पर आ बनती है। इस क्रिया को आपसे आप होने देना चाहिए। यदि नाल के बाहर निकल आने पर भी नाभि मे कुछ घाव सा बाक़ी रह जाय, तो बराबर सबेरे और सन्ध्या लिण्ट पर थोड़ी सी बोरेसिक की मरहम (Boracic Ointment) रखकर नाभि पर लगा

देनी चाहिए, और जब तक नाभि का घाव बिलकुल अच्छा न हो जाय, तब तक ऐसा करते रहना चाहिए। जब तक नाल शरीर से बिलकुल अलग न हो जाय, तब तक बच्चे को पूरा स्नान नहीं कराना चाहिए।

यह बात सदा ध्यान में रखनी चाहिए कि बच्चे के जन्म लेने के उपरान्त उसके शरीर के साथ नाल ही एक ऐसी चीज़ रहती है जिसके द्वारा शरीर में सबसे अधिक विषों और रोगों आदि के फैलने का भय रहता है; और जब नाल गिरकर अलग हो जाती है, तब नाभि पर का घाव मानों इस प्रकार के रोगों और विषों आदि के शरीर में प्रविष्ट होने के लिए दूसरा द्वार बन जाता है। इसलिए नाल और नाभि के सम्बन्ध में सबसे अधिक सफ़ाई का ध्यान रखना चाहिए; और जिन दवाओं में नमी या चिकनाहट हो, वे कभी नाभि या नाल पर नहीं लगानी चाहिएँ। नाल या नाभि को छूने से पहले हाथ बहुत अच्छी तरह साफ़ कर लेने चाहिएँ।

सफ़ाई—प्रसूता और बच्चे दोनों के गन्दे कपड़े और सब प्रकार की गन्दी चीज़ें, जहाँ तक जल्दी हो सके, हटा देनी चाहिएँ। यह विषय इतने महत्त्व का है कि यदि इसकी उपेक्षा की जाय तो इससे बच्चे के स्वास्थ्य और जीवन को बहुत बड़ी हानि पहुँच सकती है। छोटे और गन्दे घरों में गरमी के दिनों में और विशेषतः ऐसे स्थानों में जहाँ धूल या गन्दी हवा रहती है अथवा प्रकाश ठीक तरह से नहीं पहुँचता, इस प्रकार की हानि पहुँचने की और भी अधिक सम्भावना रहती है। ताज़ी हवा से कभी सरदी नहीं लगती, न ज़ुकाम होता है। उससे तो जीवन और स्वास्थ्य आता है और प्राण-शक्ति बढ़ती है।

रूमाल—बच्चों की कमर में उनके पेशाब या पाख़ाने आदि के लिए जो रूमाल बाँधे जाते हैं, वे ज्यों ही गन्दे हों त्यों ही तुरन्त बदल दिये जाने चाहिएँ। प्रायः लोग ऐसा करते हैं कि जब बच्चा दो दो और तीन तीन बार पाख़ाना या पेशाब कर चुकता है, तब उसका

रूमाल बदलते है। यह बहुत ही बुरी बात है। इससे बच्चे के शरीर मे सूजन या पीड़ा होने लगती है और उसे बहुत कष्ट पहुँचता है। इसलिए सदा साफ़ और सूखे रूमाल हर समय तैयार रखने चाहिएँ।

बच्चे के लिए आवश्यक चीज़ों की टोकरी—पहले से ही एक अच्छी टोकरी तैयार रखनी चाहिए जिसमे बच्चे की नित्य प्रति की सभी आवश्यक छोटी छोटी चीज़े रखी रहा करें। इसमे साबुन, सेफटी पिनें, सुई, तागा, कुन्द नोकवाली कैंची, पट्टी, पाउडर, दवाओं से साफ़ की हुई रुई, कुछ छोटे रूमाल और दूसरी सभी आवश्यक चीज़े रहनी चाहिएँ। अगर सब सामान से दुरुस्त इस प्रकार की एक टोकरी पहले से ही तैयार कर रखी जाय तो समय की बहुत कुछ बचत और कठिनाइयों से बचाव हो जाता है।

चौथा प्रकरण

बच्चों को दूध पिलाना

माता के प्रति—यह प्रकरण सबसे अधिक महत्त्व का है। इसे बहुत ही ध्यान से पढ़ना चाहिए और इसमें जो छोटी से छोटी बातें कही गई हैं, उन्हें भी बहुत अच्छी तरह समझ लेना चाहिए। यह मानों बच्चे के स्वास्थ्य, बल और सुन्दरता की कुंजी है। इस प्रकरण में जो बातें बतलाई गई हैं, यदि तुम उनके अनुसार ठीक तरह से चलोगी, तो तुम्हारा बच्चा कभी बीमार न पड़ेगा। और यदि संयोग से वह कभी बीमार पड़ भी जाय तो उसकी बीमारी इतनी साधारण और हलकी होगी कि तुम्हें उसके लिए कुछ अधिक चिन्ता न करनी पड़ेगी। इसके सिवा यह प्रकरण अच्छी तरह पढ़ने से तुम्हें बहुत सी ऐसी बातें मालूम हो जायँगी जिनके कारण तुम ऐसी बहुत सी भूलों से बच जाओगी जो भूलें साधारणतः बहुत सी स्त्रियाँ किया करती हैं; और तुम उन अनेक कष्टों और कठिनताओं से भी बच जाओगी जो इन भूलों के कारण साधारण दूध पिलानेवाली माताओं और उनके बच्चों को भोगनी पड़ती हैं।

छातियों से दूध पिलाना—बच्चे को दूध पिलाने का सबसे अच्छा ढंग यह है कि उसे छातियों से दूध पिलाया जाय। यह प्रकृति का दिया हुआ भोजन है और नये जन्मे हुए बच्चे के लिए सबसे अधिक पचनेवाला और बल बढ़ानेवाला तथा उसका पोषण करनेवाला है। संसार का और कोई भोजन इसकी बराबरी नहीं कर सकता। जन्म लेने से पहले बच्चे का पोषण माता के खून से होता है और उसके जन्म के

समय प्रकृति उसकी माता की छातियो मे दूध के रूप में उसके लिए भोजन तैयार करती है। बच्चे के पोषण के लिए जिन चीज़ों की आवश्यकता होती है, वे सभी चीजें इस दूध मे होती हैं; और साथ ही यह उसकी पाचनशक्ति के भी बहुत ही अनुकूल होता है। इसलिए यदि माता का स्वास्थ्य ठीक हो तो उसे प्रायः एक बरस तक बच्चे को अपनी छातियों से ही दूध पिलाना चाहिए। कम से कम कुछ सप्ताहों तक तो उसे अवश्य ही अपनी छातियो से दूध पिलाने का प्रयत्न करना चाहिए, क्योंकि उस समय बच्चा कदाचित् और किसी प्रकार का भोजन पचा ही नही सकता। बहुत से बच्चे जन्म लेने के कुछ ही सप्ताहों के अन्दर केवल इसी लिए मर जाते है कि इसी बीच मे उन्हें अस्वाभाविक भोजन देकर उनकी पाचनशक्ति ख़राब कर दी जाती है। यदि कम से कम आरम्भ के दो या तीन महीनो तक भी बच्चे को छातियो से दूध पिलाया जाय, तो वह जीवन के मार्ग पर बहुत अच्छी तरह से चल पड़ता है। जो लड़के बहुत ही दुबले पतले और नाज़ुक हो, या जो ऐसे माता-पिता से उत्पन्न हो जिन्हे गरमी हुई हो, छातियो से दूध पिलाने से उनके जीने की सम्भावना बहुत कुछ बढ़ जाती है। इन सब कारणो से बच्चे को छातियों से दूध पिलाने का जितना अधिक महत्त्व है, उसका पूरी तरह से वर्णन हो ही नहीं सकता। बच्चे के जन्म लेने के कुछ सप्ताहो के अन्दर ही उसे और किसी प्रकार का भोजन देना बिलकुल अस्वाभाविक और प्रकृति-विरुद्ध है, और जब तक बीच मे कोई बहुत बड़ा कारण या कठिनता न आ जाय, तब तक उसे कभी दूसरा भोजन नहीं देना चाहिए।

जिन बच्चों को बहुत ही छोटी अवस्था या आरम्भ मे छातियों का दूध नहीं मिलता, वे प्रायः मर जाते हैं; और उनमे से जो बच्चे किसी प्रकार बच भी रहते है, उनकी पाचनशक्ति बिलकुल ख़राब हो जाती है। और इस प्रकार जब एक बार उनका स्वास्थ्य बिगड़ जाता है, तब वे सहज में और बहुत सी बीमारियों के शिकार हो जाते हैं।

का रूप और गुण धारण कर लेता है। छातियों में दूध आने का ठीक और निश्चित समय नहीं बतलाया जा सकता। अलग अलग स्त्रियों मे यह समय अलग अलग होता है; पर साधारणतः प्रसव के बाद दो से पांच दिन मे उनमें दूध आ जाता है।

जन्म होने के बाद बच्चे का शरीर अच्छी तरह साफ़ करके उसे नहलाकर और कपड़े में लपेटकर उसे मा के पास ही बिस्तर पर लिटा देना चाहिए। जन्म होने के समय बच्चे के शरीर पर बहुत कुछ ज़ोर और दबाव पहुँचता है, इसलिए उस समय उसे और सब बातों से बढ़कर विश्राम की आवश्यकता होती है। इसलिए उस समय उसे दूध नहीं पिलाना चाहिए। वह जितना सो सके, उसे उतना सोने देना चाहिए। अधिकांश अवस्थाओं में बच्चे को छः से बारह घंटे तक किसी प्रकार के भोजन की आवश्यकता नहीं होती। हाँ अगर वह चिल्लाने लगे और बेचैन हो, तो इससे पहले ही उसे दूध पिलाना आरम्भ कर देना चाहिए।

जन्म के दिन से बच्चे का नियमित पालन—माता को सबसे अधिक इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि दूध पिलाने में बहुत धैर्य की आवश्यकता होती है। कुछ स्त्रियों मे दूध पिलाने की क्रिया बहुत ही सहज और साधारण होती है। पर कुछ स्त्रियों में दूध का प्रवाह ठीक तरह से स्थापित होने या दूध उतरने में बहुत सी कठिनाइयां होती हैं। पर यदि माता धीरज रखे तो उसे बहुत अच्छी तरह से सफलता हो सकती है।

जन्म के दिन दूध पिलाना—सबसे पहले छातियों को खूब अच्छी तरह धोकर और साफ़ करके सुखा लेना चाहिए। जब तक बच्चे को जन्म लिये छः से बारह घण्टे तक न बीत जायँ, तब तक उसके मुँह मे स्तन नहीं देना चाहिए। छातियों मे से जो दूध सबसे पहले निकलता है, उसमें कुछ रेचक गुण होता है जिसके कारण बच्चे की आंतों

पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ता है। यदि जन्म लेने के समय से चौबीस घंटों के अन्दर बच्चे को पाखाना न हो तो उसे एक छोटे चम्मच भर रेंड़ी का तेल, बल्कि उससे भी अच्छा यह है कि एक छोटे चम्मच भर जैतून का तेल थोड़े से गरम पानी में मिलाकर दिया जाय। इससे बच्चे के पेट की वह गन्दगी बाहर निकल जायगी जो गाढ़े हरे और कुछ रंग की होती है और जो पहले २४ घंटों के अन्दर निकला करती है। रेंड़ी के तेल से जैतून का तेल अच्छा होता है; क्योंकि रेंड़ी का तेल आँतों को बाँध देता या बन्द कर देता है; पर जैतून के तेल से यह बात नहीं होती।

इसके बाद बारह घंटों में दो बार अर्थात् छः छः घंटों पर बच्चे को दूध पिलाना चाहिए। पहले चौबीस घंटों में बच्चे का छातियों को चूसना या न चूसना उसकी दूध पीने की इच्छा पर निर्भर करता है। यदि छातियों में दूध होगा और बच्चे को आवश्यकता होगी, तो वह पी लेगा; नहीं तो छोड़ देगा। यह नियम है कि उस अवसर पर बहुत ज़ोर से चूसने पर भी बहुत ही थोड़ा दूध निकलता है। उस समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि यदि छातियों में दूध न हो और इसलिए बच्चा कुछ भी न पी सके, तो भी इससे बच्चे को कोई हानि नहीं पहुँचती; और बहुत ज़ोर लगाकर चूसने पर भी पहले चौबीस घंटों में बच्चे को प्रायः कुछ भी दूध नहीं मिलता। बहुत सी स्त्रियाँ इन बातों को नहीं जानतीं और पास-पड़ोस की स्त्रियों या दाइयों के कहने पर बच्चे को गौ का थोड़ा दूध पिला देती हैं। पर वास्तव में ऐसा करने की कोई आवश्यकता नहीं है। यदि उस समय गौ का दूध दिया जाता है, तो उससे प्रायः बच्चे की पाचन-शक्ति बिगड़ जाती है जिसे ठीक करना कभी कभी बहुत कठिन हो जाता है। बच्चे को जन्म लेने के समय से छः और बारह घंटों के बीच में केवल एक बार दूध पिलाना चाहिए; और फिर उसके बाद बारह घंटों के अन्दर छः छः घंटों पर केवल दो बार दूध पिलाना चाहिए।

दूसरे और तीसरे दिन दूध पिलाना—दूसरे और तीसरे दिन बच्चे का दूध पीना उसकी इच्छा और प्रवृत्ति पर और साथ ही माँ की छातियो मे दूध होने और न होने पर निर्भर करता है। दूसरे दिन बराबर चार चार घंटों पर बच्चे के मुँह मे छाती देनी चाहिए और तीसरे दिन दो दो घंटों पर। पर यह उसी दशा मे होना चाहिए जब छातियों से दूध का प्रवाह ठीक तरह से होने लग गया हो। पहले चौबीस घंटों में बच्चे को जो थोड़ा बहुत दूध मिल जाता है, उसी से वह बहुत सन्तुष्ट हो जाता है; इसलिए दूसरे और तीसरे दिन भी उसे चूसने से जो थोड़ा बहुत दूध मिल जाता है, उसी से वह पूरी तरह मे सन्तुष्ट हो जाता है।

जो स्त्रियाँ पहले-पहल बच्चा जनती है, उनकी छातियो मे प्रायः पहले दो तीन दिन तक कुछ भी दूध नही होता। और कभी कभी तो ऐसा होता है कि कही पाचवे या छठे दिन जाकर दूध ठीक तरह से उतरने लगता है। इसके लिए कभी कोई चिन्ता नही करनी चाहिए। चिन्ता करने से तो दूध का प्रवाह रुकेगा या उसने और भी देर होगी।

छातियो से दूध को ठीक ठीक उतारने के लिए माता को चाहिए कि वह दो दो घंटे के बाद बच्चे के मुँह मे छाती दे। इस प्रकार से बच्चे के चूसने से ही दूध का ठीक ठीक प्रवाह आरम्भ हो जायगा। जिस समय बच्चा चुपचाप और शान्त रहता है, उस समय भी कुछ स्त्रियां बच्चे को भूखा समझ कर उसके मुँह मे पानी मिला हुआ थोड़ा सा गौ का दूध डाल देती हैं। पर ऐसा नहीं करना चाहिए, क्योंकि जो बच्चा दूध न पीना चाहता हो, उसे यदि ज़बरदस्ती कुछ दूध पिला दिया जायगा, तो फिर वह उस शौक़ से छातियों को न चूसेगा, जिस शौक़ से वह भूखा होने की दशा मे चूसा करता है। इसके सिवा छातियों मे से दूध उतारने के लिए उन पर जो ज़ोर पहुँचने की आवश्यकता होती है, वह ज़ोर भी न पहुँचेगा जिससे दूध उतरने मे और भी देर होगी। कुछ अवस्थाओं में तो केवल इसी कारण दूध उतरने में

देर होती है। बच्चे को दूध न पिलाने का प्रयत्न करना या थोड़ा सा पिलाकर जल्दी छुड़ा देना उसे माता के उस दूध से वंचित करना है जिसका स्थान और कोई दूध ले ही नहीं सकता। माताओं को यह भी स्मरण रखना चाहिए कि यदि आरम्भ में दो तीन दिन तक बच्चे को काफ़ी दूध न मिले, तो भी उसे कोई हानि नहीं पहुँचती। छातियों से दूध उतारने के लिए लगातार कोशिश करते रहना चाहिए और दो दो घंटे पर उसके मुँह में छाती देनी चाहिए। ठीक तरह से और पूरा पूरा दूध उतारने के लिए बहुत कुछ धैर्य, अध्यवसाय और समझदारी की आवश्यकता होती है।

यदि इतना सब कुछ होने पर भी बच्चे का शरीर ठीक तरह से न चलता हो और वह बेचैन दिखाई देता हो, तो उसे थोड़ा सा उबाला हुआ पानी ठंडा करके देना चाहिए; और उसमें थोड़ी सी चीनी भी मिला देनी चाहिए जिससे वह उसे जल्दी से पी ले। यह पानी बूँद बूँद करके नहीं देना चाहिए। चार चार घंटों पर चार से पाँच छोटे चम्मच भर ऐसा पानी बहुत काफ़ी होगा। पानी से ही बच्चे का पेट पूरी तरह से नहीं भर देना चाहिए, क्योंकि इससे फिर बच्चे को छाती चूसने की इच्छा न रह जायगी। इस बीच में बराबर धैर्य और अध्यवसायपूर्वक बच्चे को दूध पिलाते रहना चाहिए या ठीक समय पर उसके मुँह में छाती देते रहना चाहिए। इस प्रकार बिना किसी विशेष कठिनता के पाँचवें या छठे दिन तक गौ का दूध पिलाना टाला जा सकता है। और पाँचवें या छठे दिन अधिकांश स्त्रियों की छातियों में इतना दूध उतरने लगता है जो छोटे बच्चे की आवश्यकता के लिए बहुत होता है।

यदि बच्चा बेचैन हो और मीठा पानी देने से भी चुप न होता हो, तब गौ के दूध में पानी मिलाकर दो चार छोटे चम्मच भर दे देना चाहिए। इससे अधिक मात्रा में कभी दूध और पानी नहीं देना चाहिए क्योंकि उस अवस्था में बच्चे की पाचन-शक्ति के शीघ्र बिगड़ जाने का डर रहता है।

जो बच्चा स्वस्थ होगा, वह पेट भर जाने पर आप ही छाती छोड़ देगा। साधारणतः बच्चे को पाँच से दस मिनट तक पूरी तरह से पेट भरने मे लगता है; पर कुछ बच्चे पन्द्रह से बीस मिनट तक भी दूध पीते रहते है। इससे अधिक समय तक बच्चे के मुँह मे छाती रहने देना ठीक नही है। यदि बच्चा आध घंटे तक दूध पीता रहे अथवा दूध पीता पीता छाती पर ही सो जाय तो समझ लेना चाहिए कि कोई ख़राबी ज़रूर है। या तो वह दुर्बल है और या छातियो मे अधिक दूध ही नहीं है। केवल बहुत ही कमज़ोर बच्चे जो दूध चूसने मे जल्दी थक जाते हैं, बीस मिनट से अधिक समय तक छाती पर रहने दिये जाते है। जो बच्चे दूध पीने मे बहुत सुस्त हो, उन्हे इधर-उधर थोड़ा हिला डुलाकर और दूध पीने मे प्रवृत्त किया जा सकता है, और जो बच्चे बहुत जल्दी जल्दी दूध पीते हों, उनकी माताओ को चाहिए कि छाती की घुंडी की जड़ को अँगूठे और तर्जनी उँगली से पकड़े रहे, जिसमे दूध आवश्यकता के अनुसार ठीक तरह से उतरे, आवश्यकता से अधिक न उतरे।

दूध पिलाने के बीच में अन्तर—सब बच्चे एक ही से नही होते; इसलिए इस बात का कोई ठीक और निश्चित नियम नहीं बतलाया जा सकता कि बच्चो को कितनी कितनी देर के बाद दूध पिलाना चाहिए। कुछ बच्चों को दो दो घंटों और कुछ को तीन या चार घंटों पर दूध पिलाने की आवश्यकता होती है। प्रत्येक बच्चे को उसकी आवश्यकताओ के अनुसार दूध पिलाना चाहिए। पर जहाँ तक हो सके, इस बात का प्रयत्न होना चाहिए कि चार चार घंटे के अन्तर पर बच्चे को दूध पिलाना पड़े; क्योंकि इससे बच्चे का भी स्वास्थ्य ठीक रहता है और उसकी माता का भी। इस बात की शिक्षा जितनी जल्दी हो सके, आरम्भ कर दी जानी चाहिए।

अधिकांश बच्चे ऐसे भी होंगे जो पहले दिन से लेकर पहले वर्ष के अन्त तक चार चार घटे पर दूध पिलाने से ही अच्छी तरह बढ़

सकेंगे। जब दूध पिलाने का समय आवे, तब बच्चे को सदा जगा देना चाहिए और उसे दूध पिलाना चाहिए।

अधिक अन्तरों से लाभ—यदि बच्चे को समय के अधिक या बड़े अन्तर पर अर्थात् अधिक देर करके दूध पिलाया जायगा, तो उसे न तो पेट में दर्द होगा और न बेचैनी होगी। इससे मां और बच्चे दोनों को आराम मिलेगा।

छोटे अन्तर—जब चार चार घंटे के अन्तर पर दूध पिलाने का फल यह देखने में आवे कि बच्चा ठीक तरह से नहीं रहता और नहीं बढ़ता, तब यह चार घंटे का अन्तर घटाकर कम कर देना चाहिए। यदि कभी बीच में इस प्रकार अन्तर घटाने की आवश्यकता आ पड़े तो भी उसके बाद ज्यों ही वह अनावश्यक जान पड़े, त्यों ही फिर वही चार चार घंटे पर दूध पिलाना आरम्भ कर देना चाहिए।

एक या दोनों छातियों से दूध पिलाना—पहले सप्ताह में जब छातियों में दूध पूरी तरह से न उतरता हो, माता को उचित है कि वह बच्चे को दोनों छातियों से दूध पिलावे। पर जब अच्छी तरह से दूध उतरने लगे, तब यही उचित है कि एक बार एक छाती से दूध पिलाया जाय और दूसरी बार दूसरी छाती से। अर्थात् बारी बारी से हर एक छाती से दूध पिलाया जाय। कुछ स्त्रियां बच्चे को जब जिस छाती से जी चाहता है, दूध पिला देती हैं। इससे दोनों छातियां थोड़ी थोड़ी ख़ाली हो जाती हैं, पर पूरी तरह से एक भी छाती ख़ाली नहीं होने पाती; और दोनों छातियां यदि ख़ाली होती हैं तो केवल उसी दशा में जब कि दूध कम उतरता है। पर ऐसा करना बड़ी भारी भूल है। जिस समय दूध जितना चाहिए, उतना उतरता हो, उस समय ऐसा कभी नहीं करना चाहिए। पहले सप्ताह के अन्त में बलवान् बच्चों के मुँह में एक बार केवल एक ही छाती देनी चाहिए और दूसरी बार दूसरी छाती। पर यदि दूध

यथेष्ट मात्रा मे न उतरता हो, तो दुर्बल, जल्दी थक जानेवाले और ठीक समय से पहले जन्म लेनेवाले बच्चों को एक ही समय मे दोनों छातियो से दूध पिलाना चाहिए।

यदि छातिया दूध से भरी हों और पाचनशक्ति की किसी ख़राबी के कारण बच्चा छाती मे का सारा दूध पीने मे असमर्थ हो तो माता को अपनी छाती या तो पम्प की सहायता से और या हाथ से दबाकर ख़ाली कर देनी चाहिए और उसमे का दूध बाहर निकाल देना चाहिए। पम्प से दूध बाहर निकालने की अपेक्षा हाथ से निकालना अधिक उत्तम है। इसके सिवा छातियो के दूध से भर जाने के कारण जो कष्ट होता है, वह छाती पर पट्टी बांध लेने से या खूब कसी हुई अँगिया या कुरता पहन लेने से भी दूर हो जाता है। इस उपाय से असमय में ही दूध बन्द हो जाने का भी भय नही रह जाता; और छातियो के दूध से भर जाने के कारण जो कष्ट होता है, उससे भी रक्षा हो जाती है।

जब छातियो मे दूध उतरने लगता है, तब वे कड़ी हो जाती हैं और उनमें कुछ तनाव होता है, जिससे कुछ कष्ट जान पड़ता है। साधारणतः कुछ हलकी सी हरारत भी हो जाती है जिसे "दूध का बुख़ार" कहते हैं। दूध पिलानेवाली माता को इसकी कोई चिन्ता नहीं करनी चाहिए; क्योंकि ज्यो ज्यो दूध अधिक उतरता है, त्यो त्यों वह कष्ट और बुख़ार आपसे आप दूर होता जाता है। और दूध अधिक उतारने का उपाय यही है कि बच्चे को बराबर छातियो से दूध पिलाया जाय।

छातियों से दूध पिलाने की भूलें

(१) बच्चे को दूध पिलाने का ठीक ढंग—यह भी एक कला है और बहुत ही कम स्त्रियां यह कला जानती है। बच्चे को दूध पिलाते समय माता को सदा इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि

उसके दूध पीने मे किसी प्रकार की बाधा न पड़े और यह बात तभी हो सकती है जब बच्चे की नाक इस प्रकार खुली रहे जिसमे उसे सास लेने मे कोई कठिनता न हो। बच्चे को दूध पिलाने के समय प्रायः होता यह है कि उसकी नाक छाती मे लगकर इस प्रकार दब जाती है कि वह अपने नथनों से ठीक तरह से सास नही ले सकता। उसके मुँह मे छाती की घुंडी रहती है; इसलिए वह मुँह के रास्ते भी सास नही ले सकता। बच्चा थोड़ी देर तक दूध पीता है और तब सास लेने के लिए रुक जाता है। इस प्रकार वह बिना पूरी तरह से पेट भरे या छातियो को दूध से ख़ाली किये ही थोड़ी देर मे थक जाता है। यह ढंग बहुत ही दोषपूर्ण है; क्योंकि इससे बच्चा या तो थोड़ी ही देर मे बहुत सा दूध पी लेता है जिससे बाद मे अवश्य ही कै करने लगता है; और या वह इतना कम दूध पीता है कि वह उसके पोषण के लिए पूरा नही होता। इसका परिणाम यह होता है कि जीवन के आरम्भ से ही उसका विकास अपेक्षाकृत बहुत ही कम होता है और वह दुर्बल होने लगता है। इसलिए माताओ को उचित है कि वे बच्चे को ठीक तरह से दूध पिलाने की कला बहुत ही ध्यानपूर्वक सीखें। माता को सदा बैठकर बच्चे को दूध पिलाना चाहिए। घुटना कुछ ऊपर उठाकर उस पर बायां हाथ टेक देना चाहिए और उसी बाएँ हाथ से बच्चे का सिर पकड़ रखना चाहिए। दाहिने हाथ से छाती पकड़ रखनी चाहिए और इस प्रकार पकड़नी चाहिए कि जिसमे अँगूठा उसके ऊपरी तल पर रहे। इस प्रकार अँगूठा रखने से छाती बच्चे के मुँह से कुछ दूर रहती है जिसमे बच्चे की नाक सास लेने के लिए खुली रहती है। इस प्रकार माता अपने बच्चे को बिना रोक-टोक दूध पिला सकती है और बच्चा भी बहुत आराम से छाती को दूध से ख़ाली कर देगा।

(२) चिन्ता—कुछ स्त्रिया छाती से दूध पिलाने मे सफलता प्राप्त करने के लिए बहुत चिन्तित रहती है। पर यह चिन्ता ही उनकी छातियों से दूध ठीक तरह से उतरने नहीं देती; बल्कि चिन्ता

के कारण तो प्रायः दूध का उतरना बिलकुल बन्द ही हो जाता है। चिन्ता करने के कारण ही माता की छाती का दूध कम होता है; और माता उसका कारण तो जानती ही नहीं। वह समझती है कि मेरी छातियों में दूध ही नहीं होता या इतना कम होता है कि उससे बच्चे का सन्तोष ही नहीं होता; इसलिए वह बच्चे को ऊपरी दूध पिलाने लगती है। दूध पिलाने से छातियों को जो स्वाभाविक ज़ोर पहुँचता है, अब वह ज़ोर पहुँचना बन्द हो जाता है। ठीक तरह से छातियों मे दूध आने और उतरने के लिए बच्चे को दूध पिलाना बहुत ज़रूरी है। यदि आरम्भ के कुछ दिनों में दूध बिलकुल ही न पिलाया जाय या दूध पिलाने का बहुत ही थोड़ा प्रयत्न किया जाय, तो उससे केवल बच्चे के लिए ही जोखिम नहीं होती, बल्कि दूध के ठीक तरह से उतरने मे भी बाधा पहुँचती है। यदि किसी कारण से दूध पीने या पिलाने मे कोई त्रुटि हो, जैसे बच्चा ही कमज़ोर हो या माता का स्वास्थ्य ही ख़राब हो, तो दूध के बे-वक़्त ही रुक जाने का डर रहता है। चाहे दूध पिलाना कम होने के कारण हो और चाहे और किसी कारण से हो, जब एक बार दूध बन्द हो जाता है, तब वह फिर किसी प्रकार जारी नहीं होता। दूध पिलानेवाली माता को सदा इस बात का ध्यान रखना चाहिए।

(३) छातियों का पूरी तरह से ख़ाली न होना— छातियों में दूध ठीक तरह से बनता और उतरता रहे, इसके लिए यह बात बहुत ही आवश्यक है कि छातियाँ सदा नियमित रूप से दूध से ख़ाली होती रहा करें और पूरी तरह से ख़ाली होती रहा करें; क्योंकि छाती का काम ठीक तरह से होने के लिए यह बात बहुत ही आवश्यक है। साधारणतः स्त्रियां यह भारी भूल करती है कि जब बच्चा रोने-चिल्लाने लगता है, तब वे तुरन्त उसके मुँह मे छाती दे देती हैं। ऐसा नहीं होना चाहिए। यदि बच्चे को थोड़े थोड़े समय पर दूध पिलाया जायगा, तो उतनी देर मे उसे इतनी भूख ही नहीं लगेगी कि

वह पूरी तरह से छाती को दूध से खाली कर सके। इसका फल यह होता है कि थोड़े ही समय में कुछ स्त्रियो की छातियों में से दूध उतरना बिलकुल बन्द हो जाता है। यदि दूध पिलाने मे कसर की जायगी तो छातियों को इतना काफ़ी ज़ोर ही न पहुँचेगा कि वे ठीक तरह से अपना काम कर सकें। यदि बच्चे के बीमार होने के कारण माता दूध पिलाकर अपनी छातियो को खाली न कर सकती हो, तो उसे उचित है कि वह अपने हाथों से ही दबाकर उनमे का दूध निचोड़कर बाहर निकाल दे। यदि इसमे उसे कुछ कष्ट होता हो तो वह पम्प की सहायता से छातियों का दूध बाहर निकाल सकती है।

(४) आवश्यकता से अधिक दूध पिलाना—जब बच्चे के हर बार रोने-चिल्लाने पर उसके मुँह मे छाती लगाई जाती है, तब उसका फल यह होता है कि बच्चे का पेट बहुत भर जाता है। जब बच्चे को जल्दीजल्दी दूध पिलाया जाता है, तब उसके पेट में पचा हुआ और बिना पचा हुआ दोनों दूध एक मे मिल जाते है और दूध अधिक भी हो जाता है। इसलिए बच्चा फालतू दूध को कै करके बाहर निकालने का प्रयत्न करता है। इस प्रकार कै करके वह मानों अपनी रक्षा करता है। आरम्भ के महीनें मे तो प्रायः यह बात नहीं देखने मे आती, पर बाद के महीनें मे अर्थात् जब वह पाच महीने का हो जाता है, उसके बाद यह बात अक्सर देखने मे आती है। माता इस लक्षण पर तो ध्यान देती ही नही और उसे बराबर दूध पिलाती चलती है, जिससे उसे दस्त आने लगते है। जहा पहले बच्चा दिन-रात में दो या तीन बार पाखाना फिरता था, वहाँ अब वह चार पाच या इससे भी अधिक बार पाखाना फिरने लगता है।

यदि इतने पर भी माता बच्चे को बराबर पहले की ही तरह दूध पिलाये चलती है, तब वह तीसरे प्राकृतिक रूप से अपना बचाव करने लगता है; और वह रूप उसकी भूक का कम हो जाना है। अब यह होता है कि जब माता बच्चे को दूध पिलाना चाहती है, तब वह नहीं

पीता। फल यह होता है कि कै और दस्त होने तथा भूख कम लगने के कारण वह दिन पर दिन कमज़ोर और दुबला पतला होता जाता है।

उन बच्चो मे यह अवस्था और भी अधिक देखने मे आती है जिन्हें अपनी माता का दूध नहीं मिलता, बल्कि दूध पिलानेवाली दाइयों का दूध मिलता है; क्योंकि दूध पिलानेवाली दाइयों की छातियां प्रायः बड़ी और दूध से भरी हुई होती हैं। दूध पिलानेवाली दाई की छाती से बच्चा बहुत जल्दी जल्दी दूध पीता है और वह अपने अँगूठे और तर्जनी से छाती को पकड़कर दूध ठीक तरह से नहीं उतारती, बल्कि आपसे आप जितना अधिक उतरता है, उतना उतरने देती है; और बच्चा जितनी जल्दी जल्दी दूध पी सकता है, उतनी जल्दी जल्दी उसे पीने देती है।

(४) जो बच्चे अपनी माता के साथ उसी के बिस्तर पर सोते हैं, उन्हें प्रायः रात के समय भी बीच बीच मे दूध पीने को मिल जाता है और इससे भी उनका पेट आवश्यकता से अधिक भर जाता है। ऐसे बच्चों को अलग पलंगड़ी पर लेटाना ही ठीक है और उन्हे केवल निश्चित समय पर ही दूध पिलाना चाहिए। इसमे माता को एक दो दिन कुछ कठिनता हो सकती है; पर उसके बाद बच्चे को आराम से सोने की आदत पड़ जायगी और फिर वह रात को सोने के समय अन्तिम बार दूध पी लेने पर रात को माता को तंग न करेगा।

पेट अधिक भर जाने का इलाज— कभी कभी ऐसा होता है कि अधिक पेट भरने के लक्षण आपसे आप दब जाते हैं; पर केवल इस बात के आसरे कभी न रहना चाहिए कि ये लक्षण आपसे आप दब ही जायँगे। ज्यो ही यह देखने मे आवे कि दूध पिलाने के थोड़ी ही देर बाद बच्चा दूध फेंक देता या कै कर देता है, अथवा उसे बार बार दस्त आते हैं, त्यों ही माता या दूध पिलानेवाली दाई को यह समझ लेना चाहिए कि बच्चे के लिए दूध बहुत अधिक हो गया है

और बच्चे को नियमित रूप से दूध पिलाना चाहिए। ऐसी अवस्था में बच्चे को दिन में चार चार घंटे बाद और रात को पाँच पाच या छः छः घंटे बाद दूध पिलाना चाहिए। अगर इस बीच में बच्चे को कोई बेचैनी होती दिखाई दे तो उसे दो चार छोटे चम्मच भर उबाल कर ठंढा किया हुआ पानी देना चाहिए। अनजान में अधिक दूध पिलाने के कारण जो ख़राबी होती है, बहुत अवस्थाओं में वह इतने से ही ठीक हो जाती है। यदि इस ओर ठीक ध्यान न दिया जायगा तो बच्चे की शक्ति बहुत कम हो जायगी और उसे दूसरे अनेक प्रकार के रोग होने का भय रहेगा।

मतलब यह कि बच्चे को सदा नियमित समय पर दूध पिलाना चाहिए। यदि छातियों में से दूध बहुत अधिक उतरता हो तो बच्चे को जल्दी जल्दी और बहुत सा दूध नहीं पीने देना चाहिए, क्योंकि जल्दी जल्दी और बड़े बड़े घूँट पीने के कारण बच्चे के पेट में वायु भर जाती है और दर्द होने लगता है जिससे वह चीखने चिल्लाने लगता है। ऐसी अवस्था में उँगलियों से दबाकर दूध का प्रवाह कम कर देना चाहिए जिसमें बच्चा जल्दी जल्दी दूध पीकर अपना पेट आवश्यकता से अधिक न भर ले। जब ऊपर कहे हुए लक्षण दब जायँ, तब फिर उसे छाती से ठीक तरह से दूध पिलाना आरम्भ कर देना चाहिए; पर साथ ही माता को ध्यान से यह भी देखते रहना चाहिए कि कहीं वे लक्षण फिर तो नहीं उभड़ आते है।

छाती के दूध का कम होना—प्रायः ऐसी अवस्था बहुत ही कम होती है। निरी अज्ञानता के कारण ही मातायें प्रायः यह समझ बैठती है कि मेरी छातियों में बच्चे की आवश्यकता भर के लिए दूध नहीं है। इसलिए वे या तो अपने दूध के साथ साथ उसे ऊपरी दूध देने लगती हैं और या छातियों से दूध पिलाना बिलकुल बन्द ही कर देती हैं। बच्चे के लिए यह बात बहुत ही हानिकारक होती है।

(१) यह पता लगाना कि बच्चे को कम दूध मिलता है— जिस बच्चे को छाती से पूरा दूध नहीं मिलता, वह तौल मे नहीं बढ़ता; और यदि बढ़ता भी है तो अपेक्षाकृत बहुत कम बढ़ता है।

(२) उसकी त्वचा के नीचे चरबी काफ़ी नहीं होती जिससे वह दुबला पतला दिखलाई पड़ता है। वह स्वस्थ बच्चो की तरह मोटा ताज़ा नहीं होता।

(३) उसे दिन भर मे अधिक से अधिक दो बार पाख़ाना होता है और पाख़ाने का रंग भी जैसा होना चाहिए (सुनहला पीला) वैसा नहीं होता।

(४) उसे पेशाब अपेक्षाकृत कम उतरता है और रूमाल या चिथड़े पर उसका धब्बा पड़ता है।

(५) उसे छाती से दूध पिलाने का समय आवश्यकता से बहुत बढ़ जाता है। ऐसे बच्चे प्रायः अधिक समय तक छातियो से लगे रहते हैं और बराबर बीच बीच मे दूध पीते रहते हैं। वे बहुत बेचैन भी नही होते और दूध पीने के बाद बीच के समय मे रोते चिल्लाते भी नहीं। वे शारीरिक शक्ति कम होने के कारण बहुत अधिक सोते है और प्रायः दूध पिलाने के लिए उन्हें जगाना पड़ता है।

(६) वे इतने बेदम होते हैं कि जान पड़ता है कि ठीक समय से पहले ही पैदा हुए हैं। ये सब बातें बच्चे को अधिक भूख लगने के कारण ही होती है। उसका कभी पेट नहीं भरता और वह बराबर थोड़ी थोड़ी देर मे दूध पीना चाहता है। वह बहुत ही थोड़ी देर तक दूध पीता है और तब उसे छोड़कर ज़ोर से चिल्लाने लगता है। यदि ऊपर से देखने मे छातियाँ बड़ी और भारी जान पड़ें, तो इतने से ही यह नहीं समझ लेना चाहिए कि उनमे दूध काफ़ी है। कभी कभी

यह भी देखने मे आता है कि छोटी छातियो मे तो बच्चे की आवश्यकता के लिए काफ़ी दूध होता है और बड़ी या भारी छातियो में बहुत ही कम दूध होता है। आवश्यकता इस बात का पता लगाने की होती है कि उतना दूध पीने से बच्चे का शरीर ठीक तरह से बढ़ता है या नहीं। यदि दूध पीते रहने से बच्चा तौल मे बराबर बढ़ता हो तो कभी यह नहीं कहा जा सकता कि छातियो मे दूध कम है। पर यदि बच्चा दूध पीने का प्रयत्न करने पर भी तौल मे न बढता हो तो समझ लेना चाहिए कि माता के दूध मे बच्चे का पूरा पूरा पोषण करने की शक्ति नही है।

(१) दूध क्यों काफ़ी नहीं रहता—कुछ स्त्रियों की छातियाँ पहले तो ठीक तरह से काम करती रहती है, पर किसी कारण से आगे चल कर उनमे पूरा दूध उत्पन्न करने की शक्ति नहीं रह जाती। पर यह बात प्रायः बहुत ही कम देखने मे आती है और इसके एक नहीं बल्कि अनेक कारण होते हैं। तौल में बच्चा ज्यों का त्यों बना रहता है, बढ़ता नहीं है; और उसमे ऐसे लक्षण दिखाई पड़ते है जिनसे सूचित होता है कि उसका पूरा पूरा पोषण नहीं हो रहा है।

(२) बच्चों को दूध पिलाने के लिए जो दाइयाँ रखी जाती है, वे प्रायः बहुत दूर के स्थानों से चलकर आती है और जीवन की परिस्थितियों के बदलने और नये स्थान मे आ पड़ने के कारण कुछ समय के लिए उनका दूध कम हो जाता है, पर यह कमी थोड़े ही समय तक रहती है और उसके बाद फिर दूध ठिकाने आ जाता है।

(३) अच्छे घरो की जो स्त्रियाँ अपने बच्चों को आप ही दूध पिलाती हैं, वे प्रायः नाजुक और कमज़ोर होती है। पहले तो उनकी छातियों मे बहुत दूध रहता है, पर थोड़े दिनो बाद अचानक और ठीक-समय से पहले ही उनका दूध बिलकुल बन्द हो जाता है।

इलाज—बच्चे और उसकी माँ दोनों की डाक्टरी परीक्षा करानी चाहिए; और जब यह पता चल जाय कि माता की छाती मे बच्चे के पोषण के लिए काफ़ी दूध नहीं होता, तब उसके दूध की मात्रा बढ़ाने का उपाय करना चाहिए। और इस बीच मे या तो दूध पिलानेवाली दाई रख लेनी चाहिए और या माँ के दूध के साथ ही साथ उसे ऊपरी दूध देना भी आरम्भ कर देना चाहिए।

कभी कभी ऐसा होता है कि छाती मे औसत दूध रहने पर भी बच्चे का शरीर ठीक तरह से नहीं बढ़ता। इसमे माँ के दूध का कोई दोष नहीं होता, बल्कि इसका कारण यह होता है कि या तो बच्चा पूरी तरह से सो नहीं सकता या उसे काफ़ी गरमाहट या पूरी ताज़ा हवा नहीं मिलती या इसी प्रकार का और कोई कारण होता है।

छाती से दूध पिलाने में कठिनाइयाँ—अधिकांश स्त्रियों को छाती से दूध पिलाने मे सफलता हो ही जाती है; पर फिर भी बीच मे कुछ ऐसी बातें उत्पन्न हो जाती है जिनसे छातियो से दूध पिलाना कष्टदायक और चिन्ताजनक हो जाता है। दूध पिलाने के काम मे सफलता प्राप्त करने में माताओं के सामने जो कठिनाइयां उपस्थित होती हैं, वे साधारणतः इस प्रकार हैं—

(१) स्वयं माता के सम्बन्ध की कठिनाइयाँ—हो सकता है कि उसकी छातियाँ छोटी हों और पूरी तरह से उभरी न हो। ऐसा होता तो बहुत कम है, पर फिर भी कुछ स्त्रियों में होता अवश्य है। छातियों का पूरी तरह से विकास नहीं होने पाता और वे छोटी ही रह जाती हैं। उनमे से दूध बिलकुल ही नहीं उतरता। ऐसी अवस्था मे बच्चे को दूध पिलाने के लिए दाई रखना आवश्यक हो जाता है।

(२) जिन स्त्रियों को कोई भारी रोग रहता है और खूब ज़ोर से बुख़ार आता है, उनकी छातियों के दूध की मात्रा भी बहुत घट जाती है। ऐसी अवस्था मे यही अच्छा होगा कि कुछ समय के लिए बच्चे को

माता का दूध न पिलाया जाय। जिस स्त्री को बहुत तेज़ बुख़ार आता हो, फिर चाहे वह किसी कारण से क्यों न हो, उसका दूध बच्चे को पिलाना ठीक नहीं है। ऐसी बीमारियों की अवस्थाओं मे दूध की मात्रा और गुण दोनों मे बहुत अन्तर पड़ जाता है; इसलिए माताओं को उचित है कि ऐसी अवस्था मे वे अपने बच्चे को गौ का दूध पिलाया करें।

(३) प्रसूता की छातियों मे ठीक तरह से दूध बच्चा पैदा होने के पाँचवें या छठे दिन उतरने लगता है; इसलिए जो स्त्री पहले पहल प्रसव करे, उसकी छातियों मे दूध की कमी का ठीक ठीक निश्चय प्रसव के दूसरे सप्ताह ही हो सकता है। इससे पहले ही बच्चे का दूध पिलाना छोड़ देना ठीक नहीं है। प्रसव के कम से कम आठवें दिन तक बच्चे को दूध पिलाने का बराबर और बार बार प्रयत्न करते रहना चाहिए। यदि ठीक तरह से इस बात का प्रयत्न किया जायगा तो अधिकांश अवस्थाओं मे छातियो मे दूध उतरने लगेगा।

(४) कुछ स्त्रियों की छातियो की घुंडी की बनावट ही ठीक नहीं होती। मज़बूत पम्प की सहायता से उन्हें बाहर निकालना या आगे बढ़ाना चाहिए। यदि उनमे दरारे या घाव हो गये हो तो उनका इलाज करना चाहिए। इस प्रकार की दरारें या घाव साधारणतः आखो से नहीं दिखलाई देते; पर जब स्त्री बच्चे को दूध पिलाने लगती है, तब उनके कारण उसे दर्द होता है।

(५) जब छातियों मे सूजन हो जाती है, तब भी वे छातियाँ इस योग्य नहीं रह जातीं कि बच्चा उनसे दूध पी सके। बच्चे को ठीक तरह से दूध पिलाने मे सफलता होने से पहले उस सूजन का इलाज होना चाहिए। जब सूजन दूर हो जाय, तब दूध पिलाना आरम्भ करना चाहिए।

(६) यदि स्त्री को स्नायु-सम्बन्धी दुर्बलता हो, तब भी बच्चे को पूरा पूरा दूध नहीं मिलता। बच्चे को जितनी बार दूध पिलाना चाहिए,

वह उतनी बार नहीं पिला सकती। ऐसी दशा मे बच्चे को बार बार दूध पिलाना चाहिए और छातियो को पम्प भी करना चाहिए।

(७) कुछ स्त्रियों को केवल स्नायु-सम्बन्धी दुर्बलता ही नही होती, बल्कि उनका स्वभाव भी ख़राब होता है। जब ऐसी स्त्रियाँ बच्चे को दूध पिलाती हैं, तब छातियो मे दर्द होने की शिकायत करती हैं। ऐसी स्त्रियों की छातियें पर दिन मे तीन चार बार रुई के फाहे से मेथिलेटेड स्पिरिट या फिटकिरी मिला हुआ पानी लगाना चाहिए। इससे छातियाँ कड़ी हो जायँगी और बच्चे के दूध पीने के समय स्त्री को दर्द न होगा। पर दूध पिलाने से पहले छातियो को साबुन और पानी से खूब अच्छी तरह धो लेना चाहिए और सुखा लेना चाहिए; और दूध पिलाने के बाद भी यही क्रिया करनी चाहिए।

(८) मानसिक दुःख और चिन्ता से भी छातियों मे दूध कम होता है। पर यह अवस्था स्थायी नही होती; और ज्यो ही चिन्ता या दुःख कम होता है, त्यों ही फिर काफ़ी दूध उतरने लगता है। ऐसी दशा मे स्त्री की चिन्ता दूर करनी चाहिए और उसे प्रसन्न रखना चाहिए।

(१) बच्चे के सम्बन्ध की कठिनाइयाँ—यदि बच्चे की शारीरिक रचना मे किसी प्रकार का दोष होता है, जैसे बच्चे के होंठों या तालू की बनावट मे किसी प्रकार का दोष होना, तो उससे भी छातियो मे कम दूध उतरता है। ऐसी दशा मे बच्चे के उस अंग का आपरेशन कराना चाहिए।

(२) यदि बच्चे को जुकाम हो गया हो तो भी उसे दूध पिलाने में बहुत कष्ट होता है। ऐसे बच्चे को दूध पिलाने से पहले उसकी नाक में से कफ आदि बहुत अच्छी तरह निकालकर साफ़ कर देना चाहिए। यदि इस कठिनता के कारण बच्चा पूरी तरह से दूध न पी सके, तो माता को उचित है कि वह पम्प की सहायता से अपनी छातियों का दूध निकाल ले और तब चम्मच की सहायता से बच्चे को वह दूध पिलाकर उसकी कमी पूरी करे।

(३) जो बच्चे कमज़ोर होते है, वे पहले तो खूब अच्छी तरह दूध पीते है, पर जल्दी ही थक जाने के कारण छाती छोड़ देते है। ऐसी दशा मे बच्चे को कई बार करके दूध पिलाना चाहिए।

(४) जो बच्चे अच्छे ख़ासे मज़बूत और तन्दुरुस्त होते है, उनके मुँह मे जब छाती दी जाती है, तब आरम्भ मे ही वे कुछ ज्यादा शौक़ से दूध नहीं पीते। ऐसे बच्चो को कुछ अधिक अन्तर पर दूध पिलाना चाहिए।

(५) दूध पीने में भद्दापन—कभी कभी यह तो जान पड़ता है कि बच्चा भूखा है, पर फिर भी वह भद्देपन से बार बार घुंडी मुँह मे लेता है और हर बार घुंडी उसके मुँह से निकल जाती है। इस पर वह झुँझलाता है और बराबर रोता रहता है जिससे उसका भूखा होना सिद्ध होता है। ऐसे बच्चों को थोड़ी थोड़ी देर पर दूध पिलाना चाहिए; और साथ ही पम्प से दूध निकालकर चम्मच से भी पिलाना चाहिए, नहीं तो वह भूखा रहने के कारण जल्दी ही दुर्बल हो जायगा।

(६) दूध पीने के लिए तैयार न होना—कुछ बच्चे आरम्भ से ही दूध नही पीना चाहते। वे प्रायः छाती को पीछे हटा देते है। ऐसे बच्चो को अधिक अन्तर पर दूध पिलाना चाहिए और इस बीच में पम्प की सहायता से छातियों से दूध निकालते रहना चाहिए।

छातियों में दूध कम होने पर क्या करना चाहिए—ऐसी कोई दवा नहीं है जो छातियो का दूध बढ़ा सके। ऐसी बहुत सी दवाओं के विज्ञापन देखने में आते है, जिनके सम्बन्ध में यह कहा जाता है कि इनसे छातियों मे दूध आने लगता या बढ जाता है। पर यह सब धोखेबाज़ी है। दूध कम होने की दशा मे नीचे लिखे कार्य करने चाहिएँ। इनका आश्चर्यजनक फल दिखाई पड़ेगा।

(१) यदि दो एक दिन तक चुपचाप बिस्तर पर पड़े पड़े आराम किया जाय तो प्रायः बहुत अच्छी तरह दूध उतरने लगेगा। प्रायः पूरी

तरह से विश्राम न करने के कारण ही दूध उतरने मे रुकावट होती है। माता को बिना ज़रूरत शरीर से ज़्यादा मेहनत नहीं करनी चाहिए और बच्चे को छातियो से दूध पिलाने के सिवा दिन में दो तीन बार चम्मच से ऊपरी दूध भी पिलाना चाहिए।

(२) नित्य के भोजन मे दूध की मात्रा बढ़ा देनी चाहिए। दिन मे तीन बार माल्ट एक्सट्रेक्ट (Malt Extract) पीना चाहिए और रात को सोते समय कैस्करा पिल (Cascara Pill) खा लेनी चाहिए। इससे भी छातियो मे बहुत जल्दी दूध उतर आता है और उसकी मात्रा भी बहुत बढ जाती है।

(३) हर बार दूध पिलाने के समय छातियों को दूध से अच्छी तरह ख़ाली कर देना चाहिए। ऐसा करने से भी अधिक दूध उतरने लगेगा। यदि छातियों का सारा दूध बाहर न निकलेगा और उसका कुछ अंश उनमे बचा रह जायगा, तो भी दूध कम पैदा होगा। छातियों मे दूध बढ़ाने का यह बहुत ही प्राकृतिक उपाय है। दिनमे सात आठ बार दूध पिलाने से छातियाँ दूध से बिलकुल ख़ाली हो जाती है। इसके सिवा यदि दिन में चार छः बार पम्प की सहायता से छातियो का सारा दूध निकाल दिया जाय तो भी बहुत अच्छा फल हो सकता है।

(४) यदि माता बहुत अधिक मात्रा मे या अधिक भारी भोजन करती हो तो उसे काफ़ी कसरत भी करनी चाहिए; नही तो दूध की मात्रा घट जायगी।

(५) खूब पानी पीने और फल खाने से भी दूध बढ़ता है।

(६) दूध को कम होने से रोकने के लिए जहाँ तक हो सके, माता को सब प्रकार की चिन्तायें आदि छोड़ देनी चाहिएँ।

मासिक धर्म और दूध पिलाना—प्रायः प्रश्न होता है कि यदि माता को मासिक स्राव होने लगे, वह रजस्वला होने लगे, तो उस दशा मे उसे बच्चे को दूध पिलाना चाहिए या नही ?

पहली बात तो यह है कि जब तक माता बच्चे को दूध पिलाती रहती है, तब तक प्रायः वह मासिक धर्म से होती ही नहीं। पर फिर भी कुछ स्त्रियाँ अवश्य ऐसी होती है जो प्रसव के एक महीने बाद से ही और बच्चे को दूध पिलाने की दशा मे ही रजस्वला हो जाती हैं और उसके बाद बराबर होती रहती है। कुछ स्त्रियाँ ऐसी होती हैं जिन्हें प्रसव के तीन, चार या पाँच महीने बाद भी खून जाने लगता है, पर अधिकांश स्त्रिया ऐसी ही होती है जो बच्चे को दूध पिलाने के दिनों मे कभी रजस्वला नहीं होतीं। प्रायः मासिक स्राव का बच्चे पर कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ता; और इसलिए कोई कारण नहीं है कि रजः-स्राव के दिनों मे उसका दूध छुड़ा दिया जाय। पर यदि उन दिनों दूध पिलाने के कारण बच्चा बेचैन या कष्ट में दिखाई पड़े, उसके पेट में दर्द हो या उसे दस्त आने लगे और आगे भी जब जब माता रजस्वला हो और बच्चे को दूध पिलाने पर उसमे उक्त लक्षण दिखाई पड़े, तब यह समझ लेना चाहिए कि इस समय का दूध बच्चे के लिए अनुकूल और ठीक नहीं होता। ऐसी दशा मे सबसे अच्छी बात यह है कि रजःस्राव के दिनों मे बच्चे को माता का दूध न देकर गो आदि का ऊपरी दूध दिया जाय और हाथ से दबाकर या पम्प की सहायता से छातियो मे का दूध बाहर निकाल दिया जाय।

गर्भावस्था और बच्चे को दूध पिलाना—यदि बच्चे को दूध पिलाने के दिनों मे माता फिर से गर्भवती हो जाय तो यह बहुत ही आवश्यक है कि बच्चे को दूध पिलाना बिलकुल बन्द कर दिया जाय। जो बच्चे गर्भवती माता का दूध पीते हैं, उनके शरीर का पोषण प्रायः ठीक तरह से नहीं होता और उन्हे पाखाने के सम्बन्ध की बीमारियाँ होने का डर रहता है। इसके सिवा गर्भवती स्त्री को इस बात की बहुत बड़ी आवश्यकता होती है कि वह अपना सारा बल अपने गर्भ के पालन मे लगावे। ऐसी दशा मे यदि वह अपने बच्चे

को दूध भी पिलाती रहेगी, तो उसके शरीर पर बहुत ज़ोर पड़ेगा और वह दुर्बल हो जायगी।

(१) **दूध पिलाने में असमर्थता**—कुछ स्त्रियाँ ऐसी भी होती है जो अपने किसी बच्चे को दूध पिला ही नहीं सकतीं। यदि कोई स्त्री एक बच्चे को दूध न पिला सके, तो इसका यह अर्थ नहीं है कि बाद मे होनेवाले और बच्चों को भी वह दूध न पिला सकेगी। जो स्त्री आरम्भ मे होनेवाले बच्चो को सफलतापूर्वक दूध न पिला सकी हो, वह भी बाद मे होनेवाले किसी बच्चे को महीनो सफलतापूर्वक दूध पिला सकती है।

(२) कुछ धनवान् स्त्रियाँ केवल इसी लिए अपने बच्चे को दूध नहीं पिलाती कि वे दूध पिलानेवाली दाई नियुक्त कर सकती है और वे दूध पिलाने का कष्ट नहीं उठाना चाहतीं। जब स्त्री बच्चे को दूध पिलाना ही न चाहती हो और इस कष्टदायक काम से बचना चाहती हो, तो इससे भी दूध पिलाने की शक्ति जाती रहती है—दूध बन्द हो जाता है। वे केवल स्वार्थ के कारण अपना कर्त्तव्य छोड़ देती हैं। यह मानों प्रकृति के विरुद्ध पाप या अपराध करना है।

(३) बच्चे को दूध पिलाना स्त्री-जाति का सबसे बड़ा कर्त्तव्य है और इसी में उनकी सबसे बड़ी महत्ता है। कोई भी समझदार स्त्री ऐसे कर्त्तव्य से कभी मुँह न फेरेगी। कुछ स्त्रियाँ अपने आपको बहुत दुर्बल समझती हे और सोचती हे कि यदि हम अपने बच्चे को दूध पिलाएँगी तो और भी अधिक दुर्बल हो जायँगी। पर इस भय का कोई आधार नहीं है। यह भय व्यर्थ है। ऐसी स्त्रियों को यह स्मरण रखना चाहिए कि यदि वे अपने बच्चे को दूध पिलावेंगी तो उनका शरीर और भी अच्छा रहेगा। यदि अच्छी तरह से भूख लगती हो और यथेष्ट पोषक भोजन मिलता हो तो दूध पिलाने से शरीर मे होनेवाली कमी आपसे आप पूरी हो जाती है और स्वास्थ्य पर कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ता। बल्कि इससे स्वास्थ्य और भी अच्छा हो जाता है और

पीठ का दर्द, सिर का भारी रहना या दुर्बलता आदि रोग आपसे आप दूर हो जाते हैं।

(४) कुछ स्त्रियां केवल इसी लिए अपने बच्चे को दूध नहीं पिलातीं कि वे आप आराम-तलब होती हैं या चार स्त्रियों के सामने बच्चे को दूध पिलाना बुरा समझती हैं।

(५) कुछ स्त्रियां यही नहीं जानतीं कि बच्चे के शारीरिक कल्याण और रक्षा के लिए उसे आप दूध पिलाना कितना आवश्यक है; और इसलिए वे उसे दूध नहीं पिलाती। वे यह समझ लेती हैं कि बच्चे को ऊपरी दूध पिला देना ही यथेष्ट होता है। पर वे यह नहीं जानतीं कि अपने इस झूठे विश्वास के कारण वे बच्चे को कितनी जोखिम मे डालती हैं। उन्हें यह समझना चाहिए कि बच्चे को दूध पिलाना स्वयं माता के लिए भी बहुत लाभदायक है। इससे गर्भाशय के ठिकाने आने और स्वस्थ होने मे बहुत सहायता मिलती है और आगे उस अग को कोई हानि नहीं पहुँचने पाती।

(६) कुछ स्त्रियों को बहुत स्नायुओं की दुर्बलता होती है और इसी लिए वे बच्चे को दूध नहीं पिलातीं।

जो स्त्री देखने में बहुत नाज़ुक और कमज़ोर जान पड़ती हो, वह भी बच्चे को सफलतापूर्वक दूध पिलाने मे बहुत समर्थ हो सकती है। इस बात का निर्णय तो उसके साधारण स्वास्थ्य से ही हो सकता है। ऐसी स्त्रियों को यह स्मरण रखना चाहिए कि जिन बच्चों को ऊपरी दूध पिलाया जाता है, उनकी अपेक्षा वे बच्चे अधिक मज़बूत होते हैं जो अपनी माता का दूध पीते हैं। गौ आदि का दूध पीनेवाले बच्चों की अपेक्षा माता का दूध पीनेवाले बच्चे रोगों आदि का सामना करने मे बहुत अधिक समर्थ होते हैं। छाती से दूध पिलाना ही प्राकृतिक ढंग है; और दूध पिलाना स्वयं स्त्री के लिए लाभदायक होता है।

(१) माता को किस दशा में दूध नहीं पिलाना चाहिए— जिस स्त्री का स्वास्थ्य अच्छा न हो, उसे अपने बच्चे को दूध

नहीं पिलाना चाहिए; या यदि दूध पिलाने से उसका स्वास्थ्य बिगड़ता हो, तो भी उसे दूध नहीं पिलाना चाहिए। पर इस विषय का अन्तिम निर्णय डाक्टर के द्वारा होना चाहिए। स्वयं उस स्त्री को ही ऐसा निर्णय नहीं कर लेना चाहिए।

(२) यदि पुराने मलेरिया ज्वर के कारण स्त्री बहुत दुर्बल और अशक्त हो गई हो तो उसे अपने बच्चे को दूध नहो पिलाना चाहिए।

(३) **क्षय-रोग**—यदि स्त्री को क्षय-रोग हो या उसके होने के लक्षण दिखाई पड़ते हों तो उसे दूध नहीं पिलाना चाहिए। यदि वह दूध पिलावेगी तो उसका रोग बढ़ जायगा; और न हुआ होगा तो उसके जल्दी हो जाने का डर रहेगा। क्षय-रोग से पीड़ित स्त्री मे इतना बल ही नहीं होता कि वह बच्चे को दूध पिला सके। साथ ही यह भी भय रहता है कि उस रोग के कीटाणु स्वयं बच्चे के शरीर मे भी घर न कर ले।

(४) **पागलपन**—यदि दूध पिलानेवाली माता के वंश मे किसी को पागलपन का रोग रहा हो, तो उसे भी अपने बच्चे को दूध नहीं पिलाना चाहिए; क्योंकि उसके दूध पिलाने से बच्चे के मस्तिष्क मे भी ख़राबी आने का डर रहता है।

(५) **मिरगी**—जिन स्त्रियों को मिरगी का दौरा होता हो, उन्हें भी अपने बच्चे को दूध नहीं पिलाना चाहिए।

(६) **छातियों में सूजन**—यदि माता की छातियों मे सूजन हो या घुंडियों मे घाव हो गये हों या छाती मे और किसी प्रकार का रोग हो तो भी उसे साधारणतः बच्चे को दूध नहो पिलाना चाहिए।

(७) **शीघ्र आवेश में आ जानेवाला स्वभाव**—जो स्त्रियाँ ज़रा सी बात पर सहज मे ही बहुत आवेश मे आ जाती हों, उन्हे भी अपने बच्चे को दूध नहीं पिलाना चाहिए। जल्दी क्रोध आ जाने व्रत आदि करने के कारण होनेवाली बेचैनी, मानसिक, चिन्ता,

दुःख और रोज़ की झंझटों आदि के कारण भी दूध में इस प्रकार के विकार हो जाते हैं कि फिर वह बच्चे के पीने और उसका पोषण करने के योग्य नहीं रह जाता।

(८) बहुत दिनों की बीमारियों, पुराने बुख़ारों या बहुत तेज़ बुख़ारों में भी बच्चे को दूध पिलाना बिलकुल छोड़ देना चाहिए।

प्रायः जुकाम, साधारण प्रकार के और थोड़े दिनों तक रहनेवाले इन्फ़्लुएन्ज़ा आदि छोटी मोटी बीमारियों का दूध पर कोई ऐसा प्रभाव नहीं पड़ता जो देखने में आ सके। अधिक से अधिक यही होता है कि दूध की मात्रा कम हो जाती है।

दूध पिलाने के दिनों में स्वयं माता का स्वास्थ्य—दूध पिलाने के दिनों में माता को स्वयं अपने स्वास्थ्य का बहुत अधिक ध्यान रखना चाहिए, क्योंकि उन दिनो उसकी बहुत अधिक शक्ति ख़र्च होती है। उसे सदा ऐसे ढंग से रहना चाहिए और ऐसा भोजन करना चाहिए जिसमें उसका स्वास्थ्य बिगड़ने न पावे। जिस चीज़ से माता की पाचनशक्ति ख़राब होती है, उसका उसकी छातियों पर अवश्य प्रभाव पड़ता है, जिसके कारण बच्चे की पाचन-शक्ति भी बिगड़ जाती है।

साफ़ हवा और सूरज की धूप का भी बहुत अधिक महत्त्व है। यदि वह सबेरे के समय दो तीन घंटे और सन्ध्या के समय एक घंटे बाहर खुली हवा मे नित्य टहला करे, तो इतने से ही उसका स्वास्थ्य बहुत ठीक दशा मे रह सकता है। उसे कभी किसी दशा मे कोई ऐसा काम नहीं करना चाहिए जिससे वह बहुत थक जाय या उसका शरीर शिथिल हो जाय। यदि मौसिम अच्छा हो तो जहां तक हो सके, उसे अपना अधिक समय घर के बाहर खुली हवा में ही बिताना चाहिए। उसे केवल उतना ही काम करना चाहिए जिससे उसका स्वास्थ्य ठीक रहे। उसका जीवन-निर्वाह करने का ढंग और स्त्रियों से कुछ भी भिन्न नहीं होना चाहिए। साथ ही इन दिनों मे उसे सुस्त और निकम्मी भी नहीं रहना चाहिए।

दूध पिलानेवाली माता का भोजन—ठीक तरह से स्वास्थ्य बनाये रखने के लिए अच्छा और पोषक भोजन भी उतना ही आवश्यक है जितनी आवश्यक ताज़ी हवा और धूप है। बच्चेवाली स्त्री को सदा, और विशेषतः दूध पिलाने की अवस्था मे, अपने भोजन पर विशेष ध्यान देना चाहिए। उसी पर स्वयं उसका और उसके बच्चे का स्वास्थ्य निर्भर करता है।

उसे सदा यह स्मरण रखना चाहिए कि छातियों मे से दूध के निकलने के साथ ही साथ दिन पर दिन उसका शरीर क्षीण होता है; और उस कमी को पूरा करने के लिए अच्छे और पोषक भोजन की आवश्यकता होती है। उसे अच्छे और स्वादिष्ट पदार्थ खाने चाहिएँ और खाने की चीज़ों को प्रायः बदलते रहना चाहिए, जिसमे एक ही तरह की चीज़ें खाने से उसकी तबीयत उकता न जाय। वह और दिनों मे जिस तरह की चीज़ें खाती हो, उसी तरह की चीज़ें उसे इन दिनो भी खानी चाहिएँ; पर उसमे तरल पदार्थ भी होने चाहिएँ और ऐसे पदार्थ होने चाहिएँ जो हलके हो और सहज मे पच सकते हों।

मिला जुला भोजन सबसे अच्छा है। हलकी और जल्दी पचनेवाली तरकारियों और फलो के सेवन से उसे बराबर साफ़ पाखाना होता रहेगा। पर ये चीज़े भी थोड़ी ही मात्रा मे खानी चाहिएँ। टोमैटो और प्याज़ खाने से उसके दूध पीनेवाले बच्चे के पेट मे दरद हो सकता है। प्रसव के कुछ महीने बाद आगे चलकर ये चीज़ें खाई जा सकती हैं; पर उस समय भी ध्यानपूर्वक यह देखते रहना चाहिए कि इन चीज़ो का बच्चे पर क्या प्रभाव पड़ता है। आलू, लोबिया, मटर, मूली और शलजम के खाने से माता और बच्चे दोनो के पेट में वायु का विकार हो सकता है। यदि ये सब चीज़े खानी ही पड़ें तो बहुत कम और कभी कभी खानी चाहिएँ। बहुत अधिक चाय या कहवा पीना भी अच्छा नही है। कोको पीने मे कोई हानि नही है। बहुत अधिक मसालेदार या मीठी चीज़े छोड़ देनी चाहिएँ। गांठगोभी

फूलगोभी और आलू कुछ माताओं को अनुकूल पड़ते हैं; पर उन्हें भी ये सब चीज़ें बहुत कम मात्रा में खानी चाहिएँ।

अधिक मात्रा में पौष्टिक तरल पदार्थ पीने से भूख कम हो जाती है और उनका कोई लाभ नहीं होता। भोजन पचाने के लिए जो बीयर (Beer) या जौ की शराब पी जाती है, उसका शरीर पर उलटा या बुरा प्रभाव पड़ता है। दूध पिलानेवाली माता के लिए सब प्रकार की शराबें अनावश्यक और हानिकारक होती हैं।

बहुत अधिक पेट भरकर खा लेने से भी कुछ अधिक दूध नहीं उतरता। तरल पौष्टिक पदार्थों और हलके भोजन का सेवन किया जा सकता है। नीबू, खट्टी नारङ्गियाँ और इस प्रकार के और दूसरे खट्टे फल बिलकुल न खाने चाहिएँ। बहुत अधिक मसालेदार भोजन, मिर्च और सिरका आदि भी छोड़ देना चाहिए; क्योंकि इनसे गुरदों पर बहुत अधिक ज़ोर पड़ता है।

कब्ज़ियत——यदि कब्ज़ियत हो तो भोजन में सुधार करना चाहिए। खूब पानी पीना चाहिए, फल खाने चाहिएँ और कसरत करनी चाहिए। भोजन नियमित रूप से और बराबर अन्तर पर करना चाहिए। अच्छी तरह पकाई हुई हरी तरकारियाँ इस अवस्था में अधिक लाभदायक होती हैं। नित्य खुली हवा में टहलना भी बहुत अच्छा है। इसके लिए फल भी बहुत अच्छे होते हैं, क्योंकि उनमें पाखाना लाने का गुण होता है।

दूध पिलानेवाली स्त्रियों का अपने मन को वश में रखना——दूध पिलानेवाली माता को सदा इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि उसकी मानसिक अवस्था का उसके दूध की मात्रा पर ही नहीं बल्कि उसके गुण पर भी बहुत बड़ा प्रभाव पड़ता है। साधारणतः स्त्रियाँ समझती हैं कि भोजन का ही दूध पर प्रभाव पड़ता है; इसलिए वे केवल भोजन पर ही ध्यान देती हैं। वे ऐसी चीज़ें नहीं खातीं जिनके सम्बन्ध में यह माना जाता है कि इनसे दूध

पीनेवाले बच्चे के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ेगा। पर साथ ही उन्हें यह भी समझ रखना चाहिए कि उनकी मानसिक अवस्था का भी उनके दूध पर अपेक्षाकृत और भी अधिक प्रभाव पड़ता है। इसलिए जहाँ तक हो सके, उन्हें अपने मन को वश मे रखना चाहिए और किसी प्रकार की बेचैनी नही उत्पन्न होने देना चाहिए। उदाहरण के लिए दुःख, क्लेश, चिन्ता, भोग की चाह और बहुत अधिक सम्भोग या क्षोभ और थकावट आदि से भी दूध उतरना बिलकुल बन्द हो जाता है। यदि दूध न भी रुके तो भी जिन चीज़ों से वह बनता है उनमे ऐसा परिवर्त्तन हो जाता है जिससे बच्चा बीमार पड़ सकता है। यदि बच्चे का स्वास्थ्य साधारणतः ठीक रहता हो और बीच मे अचानक वह किसी कारण से बीमार हो जाय, तो माता को इस बात का पता लगाने का प्रयत्न करना चाहिए कि यह बीमारी कहीं मेरी बिगड़ी हुई मानसिक अवस्था का फल तो नहीं है। खूब आराम करने और सोने, खुली हवा मे रहने और थोड़ी बहुत कसरत करने से वह अनावश्यक चिन्ताओं से बहुत कुछ बची रह सकती है। सादा, नियमित और प्राकृतिक जीवन व्यतीत करना इतना अधिक आवश्यक और लाभदायक है कि उसका पूरा पूरा वर्णन हो ही नहीं सकता। बिना इन सब बातो के बच्चे को सफलतापूर्वक दूध पिलाने की आशा करना ही व्यर्थ है। मन एक बहुत बलवान् तत्त्व है; इसलिए सदा प्रसन्न रहने और सब प्रकार की मानसिक चिन्ता तथा बेचैनी से बचने मे कभी कोई बात उठा नही रखनी चाहिए।

पाँचवाँ प्रकरण

दूध पिलानेवाली दाई

माता के प्रति—पिछले प्रकरण मे यह बतलाया जा चुका है कि छातियो से दूध पिलाने का कितना महत्त्व है। उससे तुम्हे यह पता चल गया होगा कि दूध पिलाने मे जो जो भूलें होती हैं, उनसे किस प्रकार बचना चाहिए और अपने बच्चे को स्वयं दूध पिलाने के लिए तैयार होने पर भी तुम्हारे मार्ग मे जो कठिनाइयाँ उपस्थित होती है, उनसे किस प्रकार बचना चाहिए। यदि इतने पर भी किसी कारण से तुम्हे सफलता न हो, तब तुम्हें दूध पिलानेवाली एक अच्छी दाई रखने का चटपट प्रबन्ध करना चाहिए। स्वयं दूध पिलाने के बाद यदि और कोई अच्छे से अच्छा उपाय हो सकता है, तो वह यही है। तुम्हे चट-पट अपने बच्चे को गौ आदि का ऊपरी दूध पिलाना नहीं आरम्भ कर देना चाहिए। उसका समय तब आवेगा, जब तुमको कोई अच्छी दाई नियुक्त करने मे सफलता नहीं होगी। दूध पिलानेवाली दाई नियुक्त करने से पहले ब्योरे की उन मुख्य मुख्य बातों को अच्छी तरह समझ लो जिन पर इस प्रकरण मे विचार किया गया है; क्योकि बच्चे के भावी कल्याण के लिए अच्छी दाई चुनना बहुत अधिक आवश्यक है।

दूध पिलानेवाली दाई नियुक्त करना—यदि माता की मृत्यु अथवा बीमारी के कारण किसी नवजात बच्चे को उसकी माता का दूध न मिल सकता हो, तो घर मे दूध पिलानेवाली दाई नियुक्त करने की एक समस्या खड़ी हो जाती है; और कई कारणो से इस

समस्या पर बहुत अधिक ध्यान देने की आवश्यकता होती है। सभी बच्चों के लिए और विशेषतः कमज़ोर और नाज़ुक बच्चों के लिए एक उपयुक्त दूध पिलानेवाली दाई जितनी अच्छी हो सकती है, उतनी अच्छी और कोई बात नहीं हो सकती। किसी प्रकार का ऊपरी दूध पिलाना या बनावटी ढङ्ग से दूध पिलाना उससे आधा भी अच्छा और उपयुक्त नहीं हो सकता। ऐसे बच्चों के लिए जितनी जल्दी दूध पिलानेवाली दाई नियुक्त कर ली जाय, उतना ही अच्छा है। इसमें देर करना घातक हो सकता है। दूध पिलानेवाली अच्छी दाइयाँ बहुत ही कम मिलती हैं; इसलिए किसी अच्छी और उपयुक्त दाई का मिल जाना सहज बात नहीं है।

साधारण शारीरिक स्वास्थ्य—दूध पिलानेवाली दाई खूब हृष्ट पुष्ट और सब प्रकार के रोगों से मुक्त होनी चाहिए। दूध पिलाने के समय तो वह स्वस्थ होनी ही चाहिए, पर साथ ही शुरू से भी उसका स्वास्थ्य बहुत अच्छा होना चाहिए। दाई के साधारण शारीरिक स्वास्थ्य और स्वच्छता आदि के सम्बन्ध से पूरा सन्तोष हो जाने पर माता को विशेष रूप से और अच्छी तरह यह देख लेना चाहिए कि उसे तपेदिक और गरमी अर्थात् आतशक इन दोनों में से कोई बीमारी तो नहीं है।

स्वच्छता—दूध पिलानेवाली दाई में सफ़ाई का होना बहुत ही ज़रूरी है। पर यदि उसमें पूरी सफ़ाई न हो, तो भी उसे नियुक्त करनेवाले को विशेष निराश न होना चाहिए; क्योंकि बाद में जब उसे समझाया जायगा और साफ़ रहने पर ज़ोर दिया जायगा, तो उसका गन्दगी का दोष सहज में दूर हो जायगा।

दाई की परीक्षा—दूध पिलानेवाली दाई को नियुक्त करने से पहले एक अच्छे डाक्टर से उसकी परीक्षा करा लेना बहुत अच्छा है। कई ऐसी बीमारियाँ होती हैं जिनकी पहचान डाक्टर ही कर सकते हैं। पर यदि किसी अवसर पर ऐसा अच्छा डाक्टर न मिल

सकता हो, तो बच्चे की माता को नीचे लिखी बातें बहुत ध्यानपूर्वक देख लेनी चाहिएँ।

क्षय-रोग—रोग की आरम्भिक अवस्था मे इसका पता चलना कठिन होता है। पर फिर भी माता को उचित है कि वह दाई से उसके पिछले स्वास्थ्य के सम्बन्ध में सब बातें अच्छी तरह पूछ ले। उसे यह समझ लेना चाहिए कि कभी दाई को खाँसी या बुखार तो नहीं हुआ है या बीमारी के दिनो मे उसके शरीर का वज़न तो नहीं घटा है। उसकी गरदन विशेषरूप से देख लेनी चाहिए; और यदि उसमे बढ़ी हुई गिल्टियाँ दिखाई पड़ें तो उसे तुरन्त जवाब दे देना चाहिए।

गरमी या आतशक—यह पता लगाना बहुत कठिन होता है कि दूध पिलानेवाली दाई को यह रोग है या नहीं। इसलिए ऐसी अवस्था में सबसे अच्छी बात यह है कि उस दाई के बच्चे की अच्छी तरह परीक्षा कर ली जाय। इस रोग के लक्षण स्वयं उस दाई की अपेक्षा उसके बच्चे मे सहज मे दिखाई पड़ सकते है। यदि दाई में इस रोग का कोई लक्षण न दिखाई पड़े या ऐसे लक्षण दिखाई पड़ें, जिनसे केवल सन्देह हो सकता हो, तो उसके बच्चे मे, यदि उसकी माता को यह रोग हुआ तो, उसके लक्षण अवश्य ही दिखाई पड़ेंगे। इस विषय मे सबसे अच्छी बात यह है कि उसे किसी अच्छे डाक्टर को दिखलाकर अपना सन्तोष कर लिया जाय। यदि यह निश्चय हो जाय कि इस दाई को कभी गरमी हुई थी, तो फिर वह बच्चे को दूध पिलाने के योग्य नही रहती। बच्चा किसी ऐसी दाई को दूध पिलाने के लिए नही देना चाहिए जिसे कभी गरमी हुई हो। साथ ही जिस बच्चे मे गरमी के रोग का कुछ अंश हो, वह बच्चा भी किसी स्वस्थ दाई को दूध पिलाने के लिए नहीं देना चाहिए। जान बूझकर ऐसा करना नैतिक दृष्टि से बड़ा भारी अपराध है।

दाई की छातियों की परीक्षा—साधारणतः किसी दाई को अपनी छातियों या उनमे से निकलनेवाले दूध की परीक्षा कराने मे

कोई आपत्ति नहीं होती। दाई की छातियों का बड़ा आकार देखकर ही सन्तुष्ट नहीं हो जाना चाहिए। उनके बड़े होने का मुख्य कारण केवल चरबी भी हो सकती है; पर हमारा मुख्य उद्देश्य तो यह देखना है कि उसकी छातियों मे यथेष्ट दूध उतरता है या नहीं।

सबसे अच्छी बात यह है कि दाई के बच्चे की परीक्षा करा ली जाय; और इस प्रकार अप्रत्यक्ष रूप से यह देख लिया जाय कि वह बच्चे को दूध पिलाने के लिए कहाँ तक उपयुक्त है। यदि उसके बच्चे का ठीक तरह से पोषण हुआ हो और अपनी अवस्था के अनुसार उसके शरीर का ठीक ठीक विकास हुआ हो, तो यह मान लेना चाहिए कि जो बच्चा उसे दूध पिलाने के लिए दिया जायगा, उसका भी ठीक तरह से पोषण होगा। इस काम मे धोखे से बचना चाहिए; क्योंकि कुछ दाइयाँ अपने बच्चे की जगह किसी दूसरी दाई का बच्चा लाकर दिखला दिया करती है।

मान लो कि तुमने बच्चे को दूध पिलाने के लिए दाई नियत कर ली। अब तुम यह बात किस तरह जानोगी कि उसका दूध तुम्हारे बच्चे के लिए अनुकूल होता है या नहीं? जब बच्चा उसका दूध पीता रहे, तब तुम्हें बच्चे पर पूरा पूरा ध्यान रखना चाहिए। यदि तुम्हारा बच्चा बहुत अच्छी तरह दूध पीता हो और उस दूध से सन्तुष्ट होता हो तो समझ लेना चाहिए कि उसकी छातियों मे यथेष्ट दूध है। यदि बच्चे को बार बार दूध पीने की आवश्यकता पड़ती हो, उसे दूध पीने के लिए बहुत परिश्रम करना पड़ता हो, बीच बीच मे दूध पीना छोड़कर वह ज़ोर ज़ोर से रोने चिल्लाने लगे, तो यही समझना पड़ेगा कि सम्भवतः दाई की छातियों मे आवश्यकता से कम दूध है।

माता-पिता और दाई में मतभेद या भ्रम उत्पन्न होना—प्रायः ऐसे अनेक अवसर आया करते है जब कि दाई का दूध पीते रहने पर भी बच्चा जितना तन्दुरुस्त रहना और बढ़ना चाहिए, उतना स्वस्थ

नही रहता या उतना नहीं बढ़ता। उस समय माता-पिता के मन में कुछ भ्रम था और ही प्रकार के विचार उत्पन्न होते है और वे बच्चे के स्वस्थ न रहने का सारा दोष बेचारी दाई के सिर मढ़ते हैं। यदि माता-पिता उस अवसर पर मन को शान्त करके विचार करें तो उनमे और दाई मे किसी प्रकार का मतभेद या भ्रमपूर्ण विचार उत्पन्न होने के बहुत ही कम अवसर आवेंगे। जिस समय दाई नियुक्त की जाती है, उस समय तो उसकी छातियों मे बहुत काफ़ी दूध रहता है। पर बीच मे ही बच्चे की तबीयत किसी और कारण से ख़राब हो जाती है; और माता-पिता ऐसी अवस्था को सहन नहीं कर सकते। हमे इस अवस्था पर ज़रा और अच्छी तरह विचार करना चाहिए।

मतभेद या भ्रम उत्पन्न होने का पहला कारण और उसे दूर करने का उपाय—प्रायः ऐसा होता है कि जो बच्चा दूध पिलाने के लिए दाई को सौंपा जाता है, वह बीमार-सा और कमज़ोर हुआ करता है और वह ऐसा होता है जिसे थोड़े ही पोषण की आवश्यकता होती है। ऐसा बच्चा छातियों को अच्छी तरह दूध से ख़ाली करने के योग्य नही होता; और छातियों में अच्छी तरह दूध उत्पन्न करने के लिए यह बहुत आवश्यक है कि छातिया बराबर दूध से ख़ाली होती रहा करें। छातियों के पूरी तरह से ख़ाली न होने के कारण उनके अन्दर की गिल्टियाँ अपना ठीक ठीक काम नहीं करतीं, जिससे छातियों में दूध उतरना बन्द हो जाता है। उस समय यह कहकर दाई छुड़ा दी जाती है कि तुम्हारी छातियों में दूध तो है ही नही। यदि ऐसे अवसर पर डाक्टर को दिखलाकर उसका परामर्श लिया जाय तो कभी ऐसी बात न हो।

जब बच्चा कमज़ोर या बीमार हो, तब दाई से कह देना चाहिए कि वह स्वयं अपने बच्चे को भी दूध पिलाया करे। जब उस बीमार और कमज़ोर बच्चे के साथ दाई का स्वस्थ बच्चा भी दूध पीने लगेगा,

तब साधारणतः छाती की गिल्टियों में दूध बनना बन्द नहीं होगा और न दूध उतरना ही बन्द होगा। इस उपाय से छातियाँ दूध से अच्छी तरह खाली होती रहेंगी और दूध के बराबर उतरने में बहुत अधिक सहायता मिलेगी।

यदि बच्चा इतना अधिक कमज़ोर हो कि छातियों में से दूध बिलकुल चूस ही न सकता हो तब दाई को चाहिए कि पम्प की सहायता से अपनी छातियों में से दूध निकाल कर बोतल चम्मच या ड्रापर (Dropper) आदि की सहायता से बच्चे को दूध पिलाया करे।

भ्रम उत्पन्न होने का दूसरा कारण और उसका उपाय—प्रायः दाइयाँ दूध पिलाने के नियम आदि नहीं जानतीं। बच्चे को अपनी अवस्था के विचार से जितने दूध की आवश्यकता होती है, वह प्रायः उससे अधिक दूध पी जाया करता है। इसके सिवा वह जब जब रोता है, तब तब उसे दूध पिलाया जाता है; इस कारण भी वह आवश्यकता से अधिक दूध पी लेता है। कुछ दिनों तक इसी प्रकार चलता रहता है और तब बच्चा या तो कै करने लगता है या उसे दस्त आने लगते हैं; अर्थात् उसमें अपच के लक्षण दिखाई देने लगते हैं। बस इतने से माता-पिता तुरन्त यही समझ लेते हैं कि इस दाई का दूध बच्चे के अनुकूल नहीं होता; इसलिए वे उसे छुड़ा देते हैं। इसका उपाय यही है कि दाई को यह बात अच्छी तरह समझा दी जाय कि वह बच्चे को ठीक और नियमित समय पर ही दूध पिलाया करे।

अवस्था के सम्बन्ध में भ्रम—साधारणतः लोग यही समझते हैं कि दाई का बच्चा भी उतनी ही अवस्था का होना चाहिए जितनी अवस्था का वह बच्चा है जिसे दूध पिलाने के लिए वह नियुक्त की जाती है। पर यह कोई ज़रूरी बात नहीं है। अवस्था के कारण कोई बहुत बड़ा अन्तर नहीं पड़ता। इसके सिवा यदि इस

नियम का पूरा पूरा पालन किया जाय तो अच्छी दाई नियुक्त करना एक प्रकार से असम्भव ही हो जायगा। क्योंकि दूध पिलानेवाली दाइयाँ बहुत ही थोड़ी मिलती हैं। इसके विपरीत जो स्त्री किसी बच्चे को कई महीने तक दूध पिला चुकी होती है, वह दूध पिलाने की कला को अच्छी तरह जानती है; और यदि ऐसी दाई मे कोई दूसरी खराबी न हो तो उसका दूध पीकर बच्चा खूब अच्छी तरह बढ़ सकता है।

दाई के सम्बन्ध में चरक के विचार—चरक ने लिखा है—"दूध पिलानेवाली दाई कम अवस्था की या युवती, स्वभाव से नम्र, सब प्रकार के रोगों से मुक्त और ऐसी होनी चाहिए कि उसका कोई अंग भंग न हो। उसमे नीचे लिखे दुर्गुण या दुर्व्यसन भी न होने चाहिएँ—शिकार, जूआ, दिन के समय सोना, दूसरों की निन्दा करना, मादक द्रव्यों का सेवन, नाचने[१] गाने या बाजे बजाने का शौक़, व्यर्थ इधर-उधर घूमना, चुगली खाना, उद्दंडता, द्वेष और ईर्ष्या। वह उसी देश मे उत्पन्न हुई हो, नीच या तुच्छ स्वभाव की न हो, स्वयं उसके बच्चे हृष्ट-पुष्ट और जीवित हों, लड़कों की (लड़कियों की नहीं) माता हो, उसके स्तनों मे दूध अधिक होता हो, वह कभी लापरवाही न करती हो, जो अनुचित या अनुपयुक्त स्थान अथवा समय पर लेट या सो न जाती हो, गन्दे स्थानों मे कभी न सोती हो, अपनी से छोटी श्रेणियों के पुरुषो और स्त्रियों के साथ न मिलती-जुलती हो, सेवा करने में तत्पर हो, मन और शरीर से पवित्र हो, प्रत्येक अपवित्र पदार्थ से सदा दूर रहती हो, जिसके स्तन बड़े बड़े हों और उनमें यथेष्ट दूध होता हो।"

---

१ यहा इस सम्बन्ध में यह बतला देना आवश्यक जान पड़ता है कि चरक ने नृत्य या नाचने के सम्बन्ध में यहाँ जो आपत्ति की है, वह नृत्य-सम्बन्धी पूर्वी विचार या धारणा के अनुसार है, जो पश्चिमी लोगों के नृत्य-सम्बन्धी विचार या धारणा से एक सीमा तक भिन्न है।

"**स्तनों की अवस्था**—स्तन न तो बहुत ऊँचे होने चाहिएँ और न बहुत लम्बे, न बहुत पतले या सूखे हुए होने चाहिएँ और न बहुत मोटे या फूले हुए। उनमे की घुंडियाँ भी उनके आकार के अनुसार ही हों और ऐसी हों जिन्हे बच्चा सहज मे चूस सके।"

"**दूध की अधिकता**—दूध का रंग, स्वाद, गन्ध और स्पर्श भी प्रकृति के अनुसार ही होना चाहिए। जिस समय वह ठंढा और ताज़ा हो, उस समय वह पानी मे पूरी तरह से घुल जाना चाहिए। यदि न घुले तो समझना चाहिए कि उसमे किसी प्रकार के रोग का प्रभाव या अंश है। जो दूध साधारण पानी से भारी होता है और इसी लिए जो पानी में घुलता नहीं बल्कि उसके नीचे बैठ जाता है अथवा जिसमें किसी विशेष प्रकार की गन्ध आती हो, झाग उठती हो या जिसका रंग मैला, नीला, पीला या तांबे का सा हो, वह दूध अच्छा और ठीक नहीं होता। दूध की ये दूषित अवस्थायें प्रायः इसी कारण होती हैं कि दूध पिलानेवाली दाई का भोजन ठीक और अच्छा नहीं होता। यदि बच्चा ठीक तरह से पनपता और बढ़ता न हो तो दाई के भोजन मे तुरन्त सुधार करना चाहिए।"

ख़राब दूधवाली दाई के खान-पान के सम्बन्ध में सूचनायें—यदि दाई के खाने पीने की चीज़ों मे जौ, गेहूँ, चावल, मूँग और मांस का अंश अधिक हो और उसे अधिक दूध पिलाया जाय तो उसकी छातियो का दूध गुण और मात्रा दोनों के विचार से बहुत अच्छा हो जायगा।

छठा प्रकरण

दूध छुड़ाना

माता के प्रति—इस प्रकरण में यह बतलाया जायगा कि बच्चे का दूध छुड़ाने का ठीक और उपयुक्त समय कौन सा है। कुछ मातायें तो समय से बहुत पहले ही बच्चे को छाती से दूध पिलाना बन्द कर देती हैं; और कुछ मातायें आवश्यकता से बहुत अधिक समय तक दूध पिलाती रहती हैं। माता और बच्चे दोनों के स्वास्थ्य के विचार से इन दोनों ही चरम सीमाओं का त्याग करना बहुत ही आवश्यक है। इस प्रकरण में जो नियम बतलाये गये हैं, यदि वे अच्छी तरह समझ लिये जायँगे तो तुम उन अनेक साधारण भूलों से भी बच सकोगी जो प्रायः दूध छुड़ाने के सम्बन्ध में कुछ स्त्रियाँ किया करती हैं।

विषय का परिचय—बहुत सी माताओं को सदा इस बात की बहुत बड़ी चिन्ता लगी रहती है कि बच्चे का छातियों से दूध पीना कब छूटेगा। इस सम्बन्ध में अनावश्यक चिन्ता करना कभी ठीक नहीं हो सकता। यदि दूध छुड़ाने के सम्बन्ध के नियमों का ठीक तरह से पालन किया जायगा, तो मातायें सहज में उन कठिनाइयों से पार पा जायँगी जो साधारणतः और मातायें अनुभव किया करती हैं।

साधारणतः भारत में बच्चों को एक साल तक और यूरोप के देशों में नौ महीने तक छातियों से दूध पिलाया जाता है। प्रायः ऐसा भी होता है कि नौ महीने से पहले ही बच्चे का दूध छुड़ा दिया जाता है;

और इसके विपरीत कभी कभी ऐसा भी होता है कि बच्चे को दो बल्कि तीन बरस तक भी छाती से दूध पिलाया जाता है। पर ये दोनों ही चरम सीमाएँ ठीक नही है। बच्चे को यह प्राकृतिक भोजन तब तक मिलना चाहिए जब तक इससे उसका ठीक तरह से पोषण होता हुआ दिखाई दे और वह बढ़ता रहे। पर फिर भी साधारणतः किसी बच्चे को एक बरस से अधिक छातियों का दूध नहीं पिलाना चाहिए; क्योंकि बच्चे के भोजन के लिए जिन पदार्थों की आवश्यकता होती है, वे पदार्थ एक बरस के बाद माता के दूध मे नहीं रह जाते।

दूध छुड़ाने के सम्बन्ध मे सबसे अधिक इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि माता और बच्चे दोनों का ही स्वास्थ्य ठीक बना रहे। इस सम्बन्ध मे ध्यान रखने योग्य और महत्त्व की दूसरी बात यह है कि दूध अचानक या एकदम से नही छुड़ाया जाना चाहिए। यदि अचानक या एकदम से दूध छुड़ा दिया जायगा, तो उससे माता और बच्चे दोनों को हानि पहुँचेगी। यदि माता के स्तनो की स्वाभाविक क्रिया अचानक बन्द हो जायगी, तो उसे अवश्य बहुत कष्ट होगा।

अधिक समय तक दूध पिलाने का माता के स्वास्थ्य पर प्रभाव—यदि आवश्यकता से बहुत अधिक समय तक बच्चे को छातियों से दूध पिलाया जायगा तो माता के स्वास्थ्य को अवश्य हानि पहुँचेगी। इस प्रकार दूध पिलानेवाली माता असमय मे और जल्दी ही बड़ी उम्र की या बूढ़ी जान पड़ने लगेगी और उसका सौन्दर्य समय से बहुत पहले ही जाता रहेगा। पर निश्चित समय तक दूध पिलाने मे ये सब बातें नहीं होंगी। बहुत अधिक समय तक दूध पिलाते रहने के कारण माता की बहुत अधिक शक्ति व्यय होती है और उसी के फलस्वरूप ये सब बातें होती हैं। इस सम्बन्ध मे माताओं के लिए दूसरी बड़ी कठिनता यह होती है कि वे जितने ही अधिक समय तक बच्चे को दूध पिलाती चलती है, उतना ही वे बच्चे का दूध छुड़ाने से डरती है। उन्हें मन मे यह शंका होने लगती है कि

यदि बच्चे को ऊपरी दूध पिलाया जायगा, तो वह अच्छी तरह नहीं रह सकेगा और शायद बीमार पड़ जायगा। उनका यह विचार जितना ही दृढ़ होता जाता है, उनके लिए बच्चे का दूध छुड़ाना भी उतना ही कठिन होता जाता है।

जो बच्चे आवश्यकता से बहुत अधिक समय तक माता का दूध पीते रहते हैं, वे साधारणतः देखने मे स्वस्थ नहीं जान पड़ते और उनका रङ्ग पीला पड़ जाता है। और यदि माता ठीक समय से पहले ही उन्हें अपना दूध पिलाना बन्द कर देती है, तो ऊपरी दूध आदि के कारण जितनी जोखिमे या खराबियाँ होती हैं, उन सबका उनके सम्बन्ध मे भय बना रहता है।

(१) दूध किन अवस्थाओं में छुड़ाना चाहिए—

यदि माता का स्वास्थ्य अच्छा न जान पड़े अथवा वह स्वयं देखती हो कि मेरा स्वास्थ्य बिगड़ रहा है, तो उसे किसी अच्छे डाक्टर को दिखलाना चाहिए; और यदि डाक्टर की सम्मति हो तो उस समय छातियों में यथेष्ट दूध रहने पर भी उसे बच्चे को दूध पिलाना समय से पहले ही बन्द कर देना चाहिए।

(२) यदि बच्चा अपने दाँतों से माता की छातियों की घुंडियों को काटता हो तो समझ लेना चाहिए कि उसका दूध छुड़ाने का समय आ गया है।

(३) यदि माता को कोई भीषण रोग जैसे न्यूमोनिया आदि हो, तो उसे तुरन्त बच्चे को दूध पिलाना छोड़ देना चाहिए।

(४) यदि माता को क्षय-रोग हो जाय तो भी तुरन्त बच्चे को दूध पिलाना छोड़ देना चाहिए।

(५) यदि दूध पिलाने की दशा में माता फिर से गर्भवती हो जाय, तो ऋतु आदि का बिना कोई विचार किये तुरन्त बच्चे को दूध पिलाना छोड़ देना चाहिए।

(६) यदि हर बार दूध पिलाने के समय दोनों छातियों से दूध पिलाने और थोड़ी थोड़ी देर के बाद दूध पिलाने पर भी बच्चा तौल में न बढ़े तो उसे दूध पिलाना छोड़ देना चाहिए।

(१) दूध किन अवस्थाओं में नहीं छुड़ाना चाहिए—

गरमी के दिनों में बच्चे का दूध नहीं छुड़ाना चाहिए। ग्रीष्म के महीनों में जो गरमी पड़ती है, उसका बच्चे की पाचन-शक्ति पर बहुत प्रभाव पड़ता है; इससे यह डर रहता है कि कहीं उसे दस्त न आने लगें। जब तक कुछ ठंडक न पड़ने लगे, तब तक उसे दूध पिलाते चलना ही अच्छा है। लेकिन यदि माता का स्वास्थ्य बहुत ख़राब हो जाय, तो दूध पिलाना तुरन्त बन्द कर देना चाहिए।

(२) यदि बच्चा किसी बीमारी से तुरन्त ही अच्छा हुआ हो तो उस समय उसका दूध नहीं छुड़ाना चाहिए। हां जब वह फिर से स्वस्थ और बलिष्ठ हो जाय, तब उसे दूध पिलाना बन्द कर देना चाहिए।

(३) जिस समय बच्चे को दाँत निकल रहे हो, उस समय उसे दूध पिलाना नही बन्द करना चाहिए। दांत निकलने का समय अच्छी तरह बीत जाने देना चाहिए। दांत निकलने के समय बच्चे का स्वास्थ्य कुछ ख़राब हो जाता है। यदि उस समय अचानक उसे छातियों से दूध पिलाना बन्द कर दिया जायगा और ऊपरी दूध पिलाना आरम्भ किया जायगा, तो उसके बहुत अधिक बीमार हो जाने का डर रहेगा।

(४) यदि दूध पिलानेवाली माता मासिक धर्म से होने लगे, तब यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि वह बच्चे को अपना दूध पिलावे या न पिलावे। साधारणतः ऐसी माताओ के दूध पर किसी प्रकार का प्रभाव नहीं पड़ता; और मासिक धर्म आरम्भ हो जाने के कारण माता के दूध से बच्चे को कोई हानि नहीं पहुँचती। परन्तु यदि उस समय

दूध पीने पर भी बच्चा तौल मे न बढ़े या बीच बीच में उसके पेट में दरद हुआ करे, वह रोया करे या उसे भोजन ठीक तरह से न पचे और आँव पड़ने लगे, और जब जब स्त्री मासिक धर्म से हो, तब तब बच्चे मे ये ही बातें दिखाई पड़ें, तब केवल मासिक धर्म के दिनों में ही बच्चे को गौ का या ऊपरी दूध पिलाया जाय; और ज्यों ही मासिक धर्म बन्द हो जाय, त्यों ही उसे फिर दूध पिलाना आरम्भ कर देना चाहिए।

छातियों का दूध छुड़ाना और कृत्रिम रूप से भोजन देना—बच्चे का दूध अचानक नही छुड़ाना चाहिए, बल्कि धीरे धीरे छुड़ाना चाहिए। इससे इस बीच के समय में माता और बच्चे दोनों की ही बहुत से कष्टों और चिन्ताओं से रक्षा होगी। छातियों से दूध पिलाने के साथ ही साथ बीच बीच में उसे बराबर कृत्रिम भोजन या ऊपरी दूध आदि भी देते रहना चाहिए। पर यदि यह देखने में आवे कि बच्चा ठीक तरह से नहीं बढ़ रहा है, तो उसे फिर केवल अपना ही दूध पिलाना आरम्भ कर देना चाहिए।

बच्चे का दूध किस तरह छुड़ाना चाहिए—बच्चे का छातियों से दूध पीना छुड़ाने के लिए माता को चाहिए कि वह अपनी छातियों मे कुनीन या इसी प्रकार की और कोई कड़वी चीज़ लगा ले। इसी बीच में उसे इस बात का भी प्रयत्न करना चाहिए कि छातियों में और दूध पैदा ही न हो और उनमें से दूध निकले ही नहीं। इसके लिए उसे छातियों पर कसकर एक पट्टी बाँध लेनी चाहिए और मुलायम हाथों से दबाकर छातियों में से दूध निकाल देना चाहिए। दो तीन दिन मे यह सारी कठिनता आपसे आप दूर हो जायगी। यदि इन सब उपायों से भी काम न चले तो फिर पम्प की सहायता से छातियों में से दूध निकाल देना चाहिए।

मिला-जुला भोजन—मिले-जुले भोजन का मतलब यह है कि माता बच्चे को अपना दूध पिलाने के साथ ही साथ थोड़ा सा ऊपरी

दूध भी पिलाया करे। ऊपरी दूध गौ या बकरी का भी हो सकता है, और वह दूध भी हो सकता है जो डिब्बों मे बन्द होकर विलायत से आता और बाज़ारों में बिकता है। इस प्रकार मिला-जुला दूध देने की आवश्यकता उस समय होती है, जब माता की छातियो मे बच्चे की आवश्यकता भर को दूध नही उत्पन्न होता। इससे माता के शरीर पर ज़ोर पड़ना कम हो जाता है। प्रायः इस उपाय से बहुत अच्छी सफलता होती है; क्योंकि इससे छातियो को कुछ विश्राम मिलता है और उनमे अधिक दूध उत्पन्न होने का अवसर मिलता है, और इस प्रकार अधिक समय तक छातियो मे से दूध उतरता रहता है। बच्चा अवस्था मे जितना ही कम होता है, उसके लिए दूध की एक एक बूँद उतनी ही अधिक लाभदायक होती है; और बच्चे के जीवन के आरम्भिक सप्ताहों मे यह सिद्धान्त सबसे अधिक महत्त्व का होता है। इस प्रकार बहुत सी मातायें दूध पिलाने के योग्य हो जाती है और अपने दूध पिलाने की शक्ति या सामर्थ्य पर उन्हे विश्वास हो जाता है। पर केवल माता का दूध पीनेवाले बच्चों की अपेक्षा इस प्रकार का मिश्रित दूध पीनेवाले बच्चे प्रायः अधिक बीमार पड़ते है। ऐसी अवस्था मे बच्चे का स्वास्थ्य ठीक करने के लिए उन्हे ऊपरी दूध देना बिलकुल बन्द कर देना चाहिए। बीमारी की अवस्था मे पाचन-शक्ति यो ही कुछ दुर्बल हो जाती है; इसलिए उन दिनो उनका सबसे अच्छा पोषण केवल माता के दूध से ही हो सकता है। जब उनका रोग अच्छा हो जाय और वे भली भाँति स्वस्थ हो जायँ, तब उन्हे फिर मिला जुला दूध देना आरम्भ किया जा सकता है।

सातवाँ प्रकरण

कृत्रिम रूप से भोजन देना

माता के प्रति---बनावटी ढङ्ग से दूध पिलाने के सम्बन्ध का यह प्रकरण बहुत महत्त्व का है और तुम्हे इस पर विशेष ध्यान देना चाहिए। बच्चे को कृत्रिम रूप से दूध पिलाना कोई साधारण काम नहीं है। यह स्वयं एक कला है और यह तभी आ सकती है जब इसके सम्बन्ध मे बतलाई हुई सभी ब्योरेवार बातों का बहुत ध्यानपूर्वक अध्ययन किया जाय। कृत्रिम रूप से दूध पिलाने मे सफलता प्राप्त करने के लिए बहुत होशियारी की ज़रूरत है। यदि होशियारी से काम न लिया जायगा तो बच्चे के लिए इसका बहुत ही बुरा फल होने का डर रहेगा।

प्रायः बनावटी ढङ्ग से दूध पिलाने मे अनेक प्रकार की भूलें हुआ करती है। यदि तुमसे कुछ भूले हो भी जायँ तो भी तुम्हें हताश नहीं होना चाहिए। जहां तक हो सके, बहुत ही होशियारी और समझदारी के साथ हाथ से दूध पिलाने के सम्बन्ध की सभी बातों का अभ्यास करो। यदि तुम्हारा बच्चा कमज़ोर या बीमार हो तो तुम्हारे लिए यह और भी आवश्यक है कि तुम दूध पिलाने के सम्बन्ध की सभी बातों पर और भी होशियारी के साथ ध्यान दो और विशेषतः स्वच्छता, नियमितता आदि के नियमो का पूरा पूरा पालन करो, किसी काम मे अति न करो, सदा मध्यम मार्ग का अवलम्बन करो और सब बातो पर बहुत ही होशियारी के साथ पूरा पूरा ध्यान दो। साथ ही तुम्हे बहुत अधिक धैर्य भी दिखलाना पड़ेगा, क्योंकि आरम्भ मे जो फल दिखाई पड़ेंगे, वे सन्तोषजनक नहीं होंगे। जल्दी से कोई एक भोजन छुड़ाकर

दूसरा भोजन नहीं आरम्भ कर देना चाहिए। तुम्हें सदा इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि यदि बच्चे को पूरा पूरा अवसर दिया जायगा, तो वह नये भोजन को पचाने की अपनी शक्ति का ऐसा परिचय देगा कि तुम्हें देखकर आश्चर्य होगा। पर इसके लिए उसे समय देकर धीरे धीरे अभ्यास कराने की आवश्यकता होगी।

आरम्भिक सूचनायें—कृत्रिम रूप से भोजन देने का मतलब यह है कि बच्चे के आरम्भिक पालन पोषण के समय उसे माता के दूध की जगह कोई और भोजन दिया जाया करे। इसमें सन्देह नहीं कि छोटे बच्चे के लिए माता का दूध एक आदर्श भोजन है और उसके अभाव मे दूसरा सबसे अच्छा भोजन दाई का दूध है। पर यदि किसी कारण से ये दोनों ही दूध न मिल सकते हो, तो फिर बच्चे की जान बचाने का केवल एक यही उपाय रह जाता है कि उसे कृत्रिम रूप से भोजन दिया जाय।

यह कृत्रिम रूप से भोजन देना या तो बच्चे के जन्म के थोड़े ही समय के बाद और या उसे कुछ दिनो तक छातियो का दूध पिलाने के उपरान्त आरम्भ किया जा सकता है। यदि जन्म लेने के बाद तुरन्त ही बच्चे को ऊपरी दूध पर रखा जाय, तो बहुत बड़ी कठिनता उपस्थित होती है। हाँ यदि बच्चा पाँच छः महीने तक छातियों से दूध पी चुका हो तो यह काम अपेक्षाकृत कुछ सहज हो जाता है। और यदि बच्चे से माँ का दूध धीरे धीरे छुड़ाया जाय तो फिर यह काम और भी सहज हो जाता है। पर यदि अचानक छातियो का दूध छुड़ाकर कृत्रिम रूप से दूध पिलाना आरम्भ किया जाय तो उसमें बहुत बड़ी जोखिम होती है। यदि बच्चे को केवल कृत्रिम भोजन पर ही रखना पड़े, तो उसमें बहुत अधिक होशियारी, धैर्य और क्रियात्मक ज्ञान की आवश्यकता होती है। एक वर्ष से कम अवस्था के जितने बच्चे मरते हैं, उनमे से अधिकांश की मृत्यु का कारण यही होता है कि उन्हे बनावटी ढंग से दूध पिलाकर रखने का प्रयत्न किया जाता है। ऐसे बच्चों की मृत्यु बनावटी ढंग से

दिये जानेवाले दूध के कारण होती है और दूध देने की बुरी रीतियों के ही कारण अधिक होती है। ठीक तरह से दूध पिलाने के लिए स्वच्छता, नियमितता और मध्यम मार्ग के ग्रहण करने की आवश्यकता तो होती ही है, पर साथ ही उसमें परिणामों पर अच्छी तरह ध्यान देने की भी बहुत बड़ी आवश्यकता होती है। उसमें देखने की मुख्य बात यह होती है कि बच्चा तौल में घट रहा है या बढ़ रहा है। यदि बच्चा ठीक तरह से न बढ़ता हो तो दूध पिलाने के ढंग में ठीक तरह से सुधार करना चाहिए। बनावटी ढंग से दूध पिलाने का उद्देश्य केवल यही नहीं है कि बच्चा जीता रहे, बल्कि यह उद्देश्य है कि बच्चे को जितना बढ़ना और विकसित होना चाहिए, वह उतना ही बढ़े और फूले। यदि जीवन के आरम्भिक महीनों से ही बच्चे के स्वास्थ्य की नींव अच्छी तरह न पड़ेगी, तो आगे चलकर माता-पिता को उसके सम्बन्ध में सदा बहुत बड़ी चिन्ता बनी रहेगी। इसलिए आरम्भिक महीनों में जब बच्चे को कृत्रिम रूप से दूध दिया जाता हो, तब इस बात का बहुत अच्छी तरह ध्यान रखने की आवश्यकता होती है कि उसकी तौल और अंग आदि ठीक तरह से बढ़ रहे हैं या नहीं; और उसका ठीक ठीक विकास हो रहा है या नहीं।

सब बच्चों का ठीक ठीक विकास—बढ़ना-फूलना—एक ही तरह से दूध पिलाने से अथवा एक ही प्रकार के भोजन से नहीं होता। किसी का विकास किसी तरह के भोजन से होता है और किसी का किसी तरह के भोजन से। इसलिए माता या दाई को अच्छी तरह यह देखते रहना चाहिए कि जो भोजन दिया जाता है, उससे बच्चे को किसी प्रकार की हानि तो नहीं पहुँचती। उसे यह भी देखना चाहिए कि बच्चा कितनी बार पाखाना फिरता है, कितनी बार कै करता है आदि। ज्यों ही कोई असाधारण बात दिखलाई पड़े, त्यों ही उसमें सुधार करने का ठीक ठीक उपाय करना चाहिए।

यदि नीचे लिखे लक्षण दिखलाई पड़े, तो समझना चाहिए कि हाथ से दूध पिलाने मे सफलता हो रही है—

(१) आरम्भ के छः महीनो मे बच्चे का जैसा चाहिए, वैसा विकास होता रहे और वह तौल मे प्रतिसप्ताह चार या पाँच आउन्स बढ़ता रहे, और अपने बचपन के बाकी समय मे वह प्रतिसप्ताह तीन आउन्स बढ़ता रहे।

(२) उसमे अपच का कोई लक्षण न दिखलाई पड़े।

(३) दूध पीने के अन्तिम दिनो मे उसे भोजन अच्छी तरह पचता रहे।

कृत्रिम रूप से दूध पिलाने का ढंग—इस प्रकार दूध पिलाने का ढंग अधिकतर बच्चे की अवस्था और स्वास्थ्य पर निर्भर करता है। इन्ही दोनो बातों के अनुसार यह निश्चय किया जाता है कि बच्चे को कब और कितना कितना दूध दिया जाया करे। परन्तु दूध पिलानेवाला व्यक्ति जितनी ही समझदारी से सब बातो पर ध्यान रखेगा, उसे उतनी ही अधिक सफलता होगी; और जितना ही कम ध्यान रखेगा, उतनी ही कम सफलता होगी। पर फिर भी यदि नीचे लिखी सूचनाओ का पालन किया जायगा तो अवश्य ही बहुत कुछ सफलता होगी।

(१) दो महीने की अवस्था तक दिन-रात मे आठ बार दूध दिया जाय।

(२) तीसरे महीने मे यह ध्यान रखा जाय कि जहाँ तक हो सके, चार चार घंटे बाद दूध दिया जाय।

(३) बच्चे के स्वास्थ्य और पाचन-शक्ति के अनुसार उसके पीने के दूध से कम या अधिक पानी मिलाया जाना चाहिए। इस सम्बन्ध मे कोई एक ही निश्चित नियम नही बतलाया जा सकता। प्रत्येक बच्चे की अवस्था का अलग अलग ध्यान रखना चाहिए और उसकी ख़ास ख़ास अवस्थाओ के अनुसार ही काम होना चाहिए। इस

सम्बन्ध मे सबसे अच्छा और विश्वास के लायक रास्ता दिखानेवाला बच्चे का स्वास्थ्य ही है।

(४) प्रायः कठिनाइयाँ इसी लिए उपस्थित होती है कि बच्चे के लिए भोजन ठीक तरह से नहीं तैयार किया जाता। इसलिए इस सम्बन्ध मे जो जो बातें बतलाई जायँ, उन सबका पूरा पूरा पालन होना चाहिए।

(५) स्त्री के दूध मे तो किसी प्रकार के कीड़े आदि नहीं होते पर अधिकांश गौओं के दूध मे कीड़े आदि बहुत अधिकता से होते है; इसलिए वह दूध पिलाने से पहले खूब अच्छी तरह उबाल लेना चाहिए।

(६) हर बार दूध पिलाने से पहले गरम कर लिया जाना चाहिए। यदि दूध पिलाने के लिए बोतल का व्यवहार किया जाता हो तो पिलाने से पहले दूध-समेत वह बोतल गरम पानी मे रख देनी चाहिए जिसमें उसके अन्दर का दूध गरम हो जाय।

(७) यदि बोतल मे बच्चे के पीने से कुछ दूध बचा रह जाय, तो वह दूध दोबारा पिलाने के लिए नहीं रख छोड़ना चाहिए।

(८) यदि बच्चे को दस्त आने लगे तो दूध पिलाना तुरन्त बन्द कर देना चाहिए और उसे थोड़ा सा रेंड़ी का तेल देना चाहिए। इसी बीच मे उसे थोड़ा सा उबालकर ठंढा किया हुआ पानी या अलब्यूमिन वाटर (Albumin Water) दिया जाना चाहिए। (अलब्यूमिन वाटर के लिए देखो परिशिष्ट।)

कृत्रिम रूप से दूध पिलाने की सम्भावित हानियाँ— कृत्रिम रूप से दूध पिलाने के कारण जो जो हानिया हो सकती है, उनका माताओ को सदा ध्यान रखना चाहिए। यदि वे बीमारियाँ आदि पहचान न ली जायँ और ठीक समय पर उन्हे दूर करने का प्रयत्न न किया तो वे घातक सिद्ध हो सकती हैं; या कम से कम थोड़े या अधिक समय के लिए उनसे बालक के स्वास्थ्य को हानि पहुँच सकती है।

(१) दूध का बुरा प्रभाव—ऐसी अवस्था मे बच्चा अच्छा दूध भी नहीं पचा सकता, उसका विकास रुक जाता है और वह देखने मे बिलकुल मरियल-सा जान पड़ता है और पेट न भरने के कारण बराबर रोता रहता है। इसका मुख्य कारण यह होता है कि बच्चे को ऐसा ख़राब भोजन दिया जाता है जिसे वह पचा नही सकता अथवा जिससे उसका ठीक ठीक पोषण नहीं होता। बच्चे के शरीर के बढ़ते हुए मांसतन्तु या रेशो की आवश्यकता की पूर्त्ति नही होती और भोजन अपना बुरा प्रभाव आरम्भ कर देता है। ऐसे बच्चे प्रायः अपनी उॅगली या अँगूठा चूसा करते है। हमारे देश मे इस प्रकार के भोजन के बुरे प्रभाव प्रायः देखने मे आया करते है। अनजान माता-पिता उन्हे भूत-प्रेत या आसेब आदि का प्रभाव समझते है या इसी प्रकार के और झूठे विश्वासों मे पड़कर अनेक प्रकार के टोने टोटके या झाड़-फूॅक आदि करते कराते रहते है। इनका परिणाम प्रायः बहुत ही घातक हुआ करता है।

(२) रक्तविकार या ख़ून की ख़राबी (Scurvy)—कृत्रिम रूप से दूध पिलाने मे दूसरा डर बच्चे को रक्तविकार होने का रहता है। जिस बच्चे का ख़ून ख़राब हो जाता है, उसका रङ्ग पीला पड़ जाता है, वह बहुत दुर्बल हो जाता है और उसके हाथ पैर आदि को छूते हुए भी डर लगता है। यदि उसे ज़रा सा भी उठाया बैठाया जाय, तो वह रोने लगता है और प्रायः उसके हाथ-पैर सूज जाते है। इस अवस्था को दूर करने या इसे पहले से ही रोकने के लिए बच्चे को कृत्रिम रूप से दूध पिलाने के साथ ही साथ अंगूर या संतरे का थोड़ा थोड़ा रस भी देना चाहिए।

(३) रिकेट (Rickets)—यह एक तीसरी अवस्था है जिसमें बच्चा पीला और बेचैन दिखाई देता है और रात के समय उसके सिर पर पसीना होता है। साथ ही उसे खासी और जुकाम भी होता रहता है, उसके दात निकलने मे देर होती है, वह चलना-फिरना नही चाहता

और उसकी हड्डियों में कुछ परिवर्त्तन होने लगते हैं। यह रोग प्रायः यूरोप में अधिक होता है और हमारे देश में कम होता है। हमारे देश में इसके कम होने का कारण कदाचित् यही है कि यहाँ धूप बहुत होती है। यह दोष और कारणों से कम उत्पन्न होता है और ज़्यादा करके इसी कारण होता है कि बच्चे को कृत्रिम रूप से जो दूध पिलाया जाता है, वह ठीक ढङ्ग से नहीं पिलाया जाता—दूषित ढङ्ग से पिलाया जाता है।

विटैमिन (Vitamines)—डाक्टर थाम्सन कहते हैं—"बराबर बढ़ते रहनेवाले छोटे बच्चे को भोजन में जवान आदमियों की अपेक्षा पोषक द्रव्यों (विटैमिन) की बहुत अधिक आवश्यकता हुआ करती है। यदि बच्चे के भोजन में विटैमिन का अंश कम हो, तो उसे अधिक हानि पहुँचती है। यदि उसके भोजन में विटैमिन यथेष्ट मात्रा में न हों, तो उसी समय अथवा कुछ आगे चलकर बच्चे की बाढ़ बिलकुल रुक जाती है और रोगों का सामना करने की उसकी प्राकृतिक शक्ति अपेक्षाकृत बहुत घट जाती है। ये लक्षण चटपट नहीं दिखलाई पड़ते, क्योंकि ऐसा जान पड़ता है कि आवश्यकता के समय काम में लाने के लिए शरीर अपने मांसतन्तुओं या रेशों में विटैमिनों का कुछ अंश एकत्र कर रखता है और उन विटैमिनों के समाप्त होने में कुछ समय लगता है।

भिन्न भिन्न विटैमिनों के न रहने से शरीर में भिन्न भिन्न प्रकार के लक्षण दिखाई पड़ते हैं। यदि और दृष्टियों से भोजन में साधारण पोषक द्रव्य हों, तो भी इन विटैमिनों के अभाव के कारण शरीर की स्वाभाविक बाढ़ रुक जाती है और समय पाकर उसकी मृत्यु हो जाती है। इससे रक्तविकार (Scurvy) या रिकेट्स (Rickets) आदि जो रोग होते हैं, वे अभावजन्य रोग (Deficiency Diseases) कहलाते हैं।

यदि खाद्य पदार्थों को साधारण से बहुत अधिक गरमी पहुँचाई जाय, उनमें क्षार आदि का योग दिया जाय, उन्हें कुछ समय तक डिब्बों

आदि मे बन्द रखा जाय या उनके साथ इसी प्रकार की कुछ और क्रियायें की जायँ तो उन खाद्य पदार्थों के मूल पोषक तत्त्व नष्ट हो जाते हैं।

यहाँ यह ध्यान रखना चाहिए कि बाज़ारो मे डिब्बो मे बन्द जो जमा हुआ दूध मिलता है, वह पहले गौ आदि के दूध को उड़ाकर और तब उसमे अनेक प्रकार के परिवर्त्तन और सुधार करने के बाद जमाया जाता है। इसी प्रकार चूर्ण आदि के रूप मे जो दूध मिलता है, वह भी या तो धीमी या तेज़ आच पर उडाकर महीन चूर्ण के रूप मे लाया जाता है। इन सभी दशाओ मे उनमे के वे विटैमिन नष्ट हो जाते हैं जो बच्चे की ठीक ठीक वृद्धि और विकास के लिए बहुत ही आवश्यक होते है; और इसी लिए ऐसे दूध देने से बच्चो को रक्तविकार (Scurvy) या रिकेट्स (Rickets) आदि रोग हो जाते है।

जब बच्चे को गौ का ताज़ा दूध पिलाया जायगा, तब उसमे विटैमिनो के कम होने का उतना भय नही रहेगा। पर जब जब जमाये हुए या चूर्ण रूप मे लाये हुए दूध का व्यवहार किया जायगा, तब उससे बच्चे के बीमार होने का अवश्य ही भय रहेगा। यह विषय बहुत ही महत्त्व का है और समस्त संसार के बालकों के स्वास्थ्य का इससे बहुत अधिक सम्बन्ध है। हमारे यहां भारत मे गौ का ताज़ा दूध बहुत सहज मे मिल सकता है; इसलिए यदि यहां यह पशु इतना अधिक पवित्र माना जाता है, तो यह कोई आश्चर्य की बात नही है। डिब्बो मे बन्द दूध एक तो यो ही महँगा पड़ता है, दूसरे भारत-सरीखे दरिद्र देश मे उसका व्यवहार उपयुक्त हो ही नही सकता। इसके अतिरिक्त बच्चो के माता-पिता को यह भी ध्यान रखना चाहिए कि आज-कल लोग ऐसे दूधो का बिना समझे-बूझे और किसी डाक्टर का निश्चित परामर्श लिये जो व्यवहार करते है, उसमे बहुत सी ख़राबियां और डर है।

बनावटी भोजन के कारण जो ख़राबियाँ हो सकती है, उनका भय किसी अंश तक ताज़े फलो के रस के व्यवहार से कम किया जा सकता है। ताज़े फलो के रस मे एक विशेष प्रकार के विटैमिन होते

है जिन्हें Anti-Scorbutic Principle कहते है। विशेषतः सन्तरे और नीबू मे ये विटैमिन अधिकता से होते है। इसलिए जब कभी कृत्रिम भोजन के व्यवहार की आवश्यकता पडे, तब उसके साथ ही साथ ताज़े फलो का रस भी दिया जाना चाहिए।

फलों का रस तैयार करना—एक अच्छी ताज़ी नारङ्गी या सन्तरा लेकर उसका छिलका छील डालना चाहिए और दबाकर उसका रस निचोड़ लेना चाहिए। जितना वह रस हो, उससे दूना उबाला हुआ पानी उसमे मिला देना चाहिए और मलमल के एक साफ़ टुकडे मे वह रस और पानी छान लेना चाहिए, जिसमे बच्चे को उसके बडे बड़े टुकड़े न निगलने पड़े। तब उसमे थोड़ी सी चीनी मिला देनी चाहिए। बस अब यह रस काम मे लाने के लिए तैयार हो गया। इसी तरह नारङ्गी या सन्तरे की जगह अंगूर, आम या नीबू का रस भी तैयार किया जा सकता है। पर हा, फल ऐसा चुनना चाहिए जो प्राकृतिक रूप से मीठा हो।

चार महीने के बच्चे को इस रस का एक छोटा या चाय के ऐसा एक छोटे चम्मच देना आरम्भ करना चाहिए; और धीरे धीरे बढ़ाते हुए दो बडे चम्मचों तक देना चाहिए। बच्चे को जब जब दूध पिलाना हो, तब तब पहले यह रस दे देना चाहिए।

गौ का दूध—बच्चों के लिए सबसे अच्छा और श्रेष्ठ दूध माता का होता है। इससे हमारा अभिप्राय स्तनों के दूध से है, फिर चाहे वह माता का हो या दाई का। पर जब स्तनो का दूध नहीं मिलता, तब उसकी जगह बच्चे को प्रायः गौ का ही दूध दिया जाता है, क्योंकि उसके बाद यही सबसे अच्छा भोजन समझा जाता है और साथ ही सहज मे मिल भी सकता है। केवल दूध ही एक ऐसा भोजन है जिसमे बच्चे के बढ़ने और प्राण-रक्षा के लिए सभी आवश्यक तत्व रहते है। बल्कि बड़े मनुष्योंके लिए भी यह एक सर्वांगपूर्ण भोजन है।

यदि बच्चे की अवस्था और स्वास्थ्य का ध्यान रखते हुए उसे ठीक तरह से गौ का दूध दिया जायगा, तो अवश्य सफलता होगी। बच्चों

को जो अनेक प्रकार के रोग हुआ करते है, उनका एक मुख्य कारण यह है कि उन्हे पहले ही वर्ष गौ का दूध बिना समझे बूझे और अन्धाधुन्ध पिलाया जाता है। अधिकांश मातायें यही समझती है कि बच्चे को गौ का दूध देना बहुत ही साधारण बात है। परन्तु यह बात उतनी साधारण नहीं है जितनी ऊपर से देखने मे जान पड़ती है। इसमे सफलता प्राप्त करने के लिए बहुत बड़ी सावधानी की आवश्यकता होती है। कुछ मातायें आरम्भ से ही बच्चे को गौ का ख़ालिस और बिना पानी मिला हुआ दूध देने लगती हैं। कुछ माताएँ उसमे भिन्न भिन्न मात्राओ मे पानी मिलाती हैं और उसमे थोड़ी सी चीनी मिलाकर बाक़ी सब बातें संयोग पर छोड़ देती हैं। इन दोनों ही ढंगों में निश्चित रूप से विफलता होती है और थोड़े ही दिनो के बाद बच्चा बीमार पड़ने लगता है, क्योंकि इस प्रकार का दूध उसे अनुकूल नही पड़ता।

आगे की पंक्तियो मे जो बातें बतलाई गई है, यदि उनका ध्यानपूर्वक अध्ययन किया जायगा तो वे भूले नही होगी जो प्रायः गौ का दूध पिलाने मे हुआ करती है।

नीचे दिये हुए नक़्शे का ध्यानपूर्वक अध्ययन किया जाना चाहिए। इसमे यह बतलाया गया है कि बच्चो को दिये जानेवाले भिन्न भिन्न दूध किन किन और कितने कितने तत्वो से बने है। इस नक़्शे से भिन्न भिन्न दूधो का पारस्परिक अन्तर स्पष्ट हो जायगा।

भिन्न भिन्न दूधों के संयोजक तत्व

१०० भागो मे	पानी	चरबी	प्रोटीन	मिठास	नमक
(१) माँ का दूध	८७ ५८	३ ७४	२ ०१	६.३७	०.३०
(२) गौ का दूध	८७ ८०	३ ४२	३ ४०	४,७०	०.७१
(३) बकरी का दूध	८६ ८५	४ ३४	३ ७६	३.७८	० ६५
(४) भैंस का दूध	८४ १०	७ १०	४ ००	४ ००	०.८०
(५) गधी का दूध	८७ ५८	३ ७४	२ ०१	६ ३७	० ३०

अर्थात् माँ के दूध और गौ के दूध मे जो अन्तर है, वे अग्रलिखित इस प्रकार हैं—

पानी—यह दोनों में प्रायः समान ही है।

चरबियाँ—मां के दूध में गो के दूध की अपेक्षा यह कुछ अधिक होती है। मनुष्य के बच्चों के लिए गौ के दूध की चरबी पचाना अधिक कठिन होता है। उसे बच्चों के लिए उपयुक्त बनाने के वास्ते उसमें थोड़ा पानी मिलाने की आवश्यकता होती है।

प्रोटीन—मां के दूध की अपेक्षा गौ के दूध में इसकी मात्रा लगभग दूनी है। इसलिए गौ के दूध में पानी मिलाना आवश्यक है, नहीं तो बच्चा उसे पचा न सकेगा।

मिठास या चीनी—मा के दूध में गौ के दूध की अपेक्षा यह प्रायः एक तिहाई अधिक होती है। अतः गौ के दूध को माता के दूध के प्रायः समान बनाने के लिए उसमें कुछ चीनी मिलाने की आवश्यकता होती है।

नमक—गौ के दूध में नमक की मात्रा प्रायः दूनी होती है।

गौ के दूध में कीटाणु होते है, पर मां के दूध में कीटाणु बिलकुल नहीं होते। गौ का दूध खटास लिये हुए होता है और मा के दूध में खारापन होता है।

भिन्न भिन्न संयोजक तत्त्वों का महत्त्व इस प्रकार है—

प्रोटीन—दूध में जो प्रोटीन होते है, उनसे बच्चों के शरीर की गठन बनती है।

दूध की मिठास या चीनी—इससे पुट्ठों में शक्ति आती है और सब अंग अच्छी तरह हिलने डुलने के योग्य होते है।

चरबियाँ—इनसे गरमी और शक्ति तो प्राप्त होती ही है, पर साथ ही स्नायुओं और मस्तष्कि का विकास भी होता है।

गौ का कच्चा दूध—बच्चे को गौ का कच्चा दूध कभी नहीं देना चाहिए। ऐसा करने में बहुत सी बातों का डर रहता है, क्योंकि सम्भव है कि उनमें कुछ कीटाणु विशेषतः क्षय, टाइफायड और

अपच के दस्त लानेवाले कीटाणु हो। सबसे अच्छी बात यह है कि बच्चे को देने से पहले दूध ज़रा औटा लिया जाय। बाज़ार से लाया हुआ दूध तो ख़ास कर और भी औटा लेना चाहिए। जिन लोगो के घर मे गौ हो, उन्हे भी यही उचित है कि बच्चे को पिलाने से पहले दूध कुछ गरम कर लिया करे। इसके सिवा जितने सहज मे उबाला हुआ दूध पचता है, उतने सहज मे बिना उबाला हुआ नहीं पचता।

दूध गरम करना—पहले दूध थोड़ी देर तक अर्थात् पांच से दस मिनट तक गरम करना चाहिए। ऐसा करने से उसमे के कीटाणु नष्ट हो जाते है। दूध तभी तक गरम किया जाना चाहिए, जब तक उसमे बुलबुले न उठने लगें। यदि गो का दूध अधिक समय तक उबाला जाता है तो उसके तत्त्वो मे कुछ विशेष परिवर्त्तन हो जाते है, जिनके कारण वह बच्चो के व्यवहार के योग्य नहीं रह जाता। गरम करने के बाद दूध जल्दी जल्दी और पूरी तरह से ठंढा कर लेना चाहिए, क्योकि गरम दूध मे कीटाणु जल्दी बढ़ते है।

दूध की रक्षा—गरम करने के बाद दूध ठंढे स्थान मे रखना चाहिए, विशेषतः गरमी के दिनो मे उसे ठंढे स्थान मे रखने की और भी आवश्यकता होती है। दूध को धूल और मक्खियो आदि से खूब अच्छी तरह बचाना चाहिए, क्योकि धूल और मक्खियो के द्वारा बहुत से रोगो के कीटाणु एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचते हैं; विशेषतः उनके द्वारा वे कीटाणु और भी अधिक पहुँचते है जो बदहज़मी और टाइफ़ायड उत्पन्न करते हैं। गरमी के दिनो मे यदि बच्चे के रहने के कमरे मे किसी उपयुक्त स्थान पर बरफ़ का एक छोटा सन्दूक़ रख दिया जाय तो उससे दूध को ताज़ा रखने मे बहुत सहायता मिलती है। यदि बरफ़ का सन्दूक़ न रखा जा सकता हो तो दूध का बरतन ठंढे पानी के किसी बड़े कटोरे मे रख देना चाहिए और उसे ऊपर से अच्छी तरह ढक देना चाहिए।

शुद्ध दूध—यह ठीक है कि आरम्भ में कुछ बच्चे शुद्ध दूध पीकर भी बहुत अच्छी तरह रहते हैं, पर शीघ्र ही ऐसा समय आ जाता है, जब वे बीमार पड़ने लगते हैं। जो बच्चे ठीक समय से पहले ही उत्पन्न हुए हों अथवा नाज़ुक और कमज़ोर हों, उन्हें कभी गौ का ख़ालिस दूध नहीं दिया जाना चाहिए। हाँ जब बच्चा दस महीने का हो जाय, तब उसे ख़ालिस दूध दिया जा सकता है।

गौ के दूध में पानी मिलाना—गौ के दूध में थोड़ा पानी इसलिए मिलाया जाता है कि जहाँ तक हो सके, वह माँ के दूध के समान हो जाय। गौ के दूध में एक ऐसा तत्व रहता है जिससे वह पेट में पहुँचते ही दही का रूप धारण करने लगता है। जहाँ तक हो सके, दूध को इस प्रकार दही बनने से रोकने के लिए ही गौ के दूध में पानी मिलाने की आवश्यकता होती है। इस सम्बन्ध में कोई निश्चित नियम नहीं बतलाया जा सकता कि गौ के कितने दूध में कितना पानी मिलाना चाहिए। इस सम्बन्ध में बच्चे के स्वास्थ्य और विशेषतः उसकी पाचन-शक्ति का ध्यान रखते हुए माता को दूध में पानी मिलाना चाहिए।

यदि बच्चा बलवान् और हृष्ट-पुष्ट हो और आगे लिखी मात्रा में पानी मिलाया हुआ दूध पचा सकता हो, तो बहुत ही अच्छी बात है। पर यदि ऐसा न हो सके तो फिर जैसा अवसर पड़े, उसके अनुसार इसमें परिवर्तन किया जा सकता है। जब बच्चा तीन महीने का हो, तब माता को साधारणतः गौ के दूध में उसके बराबर ही पानी मिलाना चाहिए; और जब वह छः महीने का हो, तब दूध में आधा पानी मिलाकर देना चाहिए; और जब वह नौ महीने का हो तब दूध में एक तिहाई पानी मिलाना चाहिए। आठवें महीने के अन्त से लेकर दसवें महीने के अन्त तक पानी की मात्रा धीरे धीरे घटानी चाहिए। सब बच्चों की आवश्यकतायें अलग अलग हुआ करती हैं। एक मात्रा में पानी मिलाया हुआ दूध एक बच्चे को तो अनुकूल पड़ता है

और दूसरे को प्रतिकूल। तीन महीने की अवस्था मे दूध में उतना ही पानी मिलाकर देना चाहिए और जन्म से आरम्भ करके धीरे धीरे इस अनुपात तक इस प्रकार पहुँचना चाहिए—

अवस्था			दूध		पानी
जन्मकाल मे	...	...	१ भाग	...	४ भाग
एक सप्ताह	...	...	१ ...	...	३
एक मास	...	...	१ ...	...	२
दो मास	...	...	१ ...	...	१$\frac{1}{2}$
तीन मास	...	...	१ ...	...	१

पानी की मात्रा किस प्रकार घटानी चाहिए—आठवें महीने के अन्त से लेकर दसवें या बारहवे महीने के अन्त तक पानी की मात्रा धीरे धीरे इस प्रकार घटानी चाहिए कि अन्त मे पानी की मात्रा उतनी ही कम रह जाय, जिसमे चीनी अच्छी तरह घुल सके।

दूध के घरेलू सुधार—माता घर में ही गौ के दूध मे नीचे लिखे प्रकार से सुधार और परिवर्द्धन आदि कर सकती है।

सोडियम साइट्रेट (Sodium Citrate) मिलाना—एक आउन्स दूध मे दो ग्रेन सोडे का साइट्रेट (Sodium Citrate) मिलाने से दूध के दोष बहुत कुछ दूर हो जाते है और वह सुधर जाता है। जिस दूध मे सोडियम साइट्रेट पड़ा रहता है, वह ख़राब नहीं होता और न उससे किसी प्रकार की हानि पहुँचती है। दूध या तो दही का रूप बिलकुल धारण करता ही नहीं; और यदि करता भी है तो बहुत देर से करता है; इसलिए वह दही बनने से पहले जल्दी ही पच जाता है।

बारली का पानी (Barley Water)—दूध को सुधारने का एक और उपाय यह है कि उसमे बारली या जौ का पानी मिला दिया जाय। इसका व्यवहार धीरे धीरे और अधिक अवस्था के बच्चो

के लिए किया जाता है। यदि दूध मे सादे पानी की जगह यही बारली या जौ का पानी मिलाया जाय, तो कभी कभी और भी अधिक उपयोगी होता है, क्योंकि इसके मेल से दूध जल्दी पच जाता है। जौ का पानी दिन मे दो बार तैयार किया जाना चाहिए; क्योंकि यदि वह एक बार बनाकर बारह घंटे से अधिक रखा जाय तो खट्टा हो जाता है। जौ का पानी तैयार करके बिना दूध मे मिलाये ही अलग किसी ठंढे स्थान मे रखा रहना चाहिए और केवल आवश्यकता के समय दूध मे मिलाया जाना चाहिए। पर छोटे बच्चो के लिए यह पानी अधिक मात्रा मे देना ठीक नहीं है, क्योंकि जौ मे निशास्ते का भी अश होता है।

बच्चे को गौ का दूध देने का भारतीय ढंग—बहुत प्राचीन काल से भारत मे यह प्रथा चली आती है कि मातायें अपने छोटे बच्चों को सीपी की सहायता से गौ का दूध पिलाती है। यह सीप नामक समुद्री जन्तु का ऊपरी ढकना होता है। यह किश्ती-नुमा अर्थात् नाव के आकार का होता है और इसका भीतरी तल देखने मे सफ़ेद, चिकना और चमकदार होता है। यदि कहीं ज़रा भी धूल, मिट्टी आदि हो, तो वह तुरन्त दिखाई पड़ जाती है और जल्दी ही दूर की जा सकती है। सीपी बहुत सस्ती होती है और उसकी बनावट भी बहुत सीधी सादी होती है। इसमे एक और गुण यह होता है कि यह कड़ी होती है और उतनी जल्दी नहीं टूटती जितनी जल्दी शीशा टूटता है। यह बहुत दिनों तक काम देती है और इसमे किसी प्रकार का रासायनिक या और कोई परिवर्तन नही होता। यदि दूध मे किसी प्रकार की ज़रा भी मैल आदि हो तो बच्चे को दूध पिलाने के समय माता उसे बहुत सहज मे देख सकती है। सीपियां छोटी बड़ी अनेक आकारों की होती है, पर साधारण सीपी मे प्राय. आध आउन्स दूध आता है। आज दिन तक प्रायः सारे देश मे माताएं बच्चो को सीपी के द्वारा ही दूध पिलाती है। चम्मच और दूध पिलाने की

बोतल से सीपी कई बातों मे बहुत अच्छी होती है। माताओं को चाहिए कि वे सीपी से ही बच्चो को दूध पिलाया करे, उसकी जगह दूध पिलानेवाली बोतलों का व्यवहार न किया करें।

सीपी न हो तो मातायें चम्मच की सहायता से बच्चों को दूध पिलाया करती हैं। आज-कल बच्चो को दूध पिलाने के लिए विशेष प्रकार की बनी हुई विलायती बोतलें आती हे। उनका भी बहुत व्यवहार होता है। यहां यह बतलाया जाता है कि उनमें क्या क्या गुण और क्या क्या दोष होते है। हमारी पाठिकाएँ दोनो को ध्यानपूर्वक समझ लें।

(१) दूध पिलाने की बोतल—बोतल की बनावट जहां तक हो सके, बिलकुल सीधी सादी होनी चाहिए। जो बोतल आकार में बिलकुल सीधी हो और जिसमें कोण आदि न हो, वही सबसे अच्छी होती है; क्योंकि अन्दर के कोनों को बुरुश आदि की सहायता से साफ़ करना बहुत कठिन होता है। बाज़ार मे जो और अनेक प्रकार की बोतलें मिलती है, उनकी अपेक्षा वे बोतले बहुत अच्छी होती हैं जिनका आकार किश्ती या नाव का सा अथवा बिलकुल गोल होता है।

(२) बोतल ऐसी होनी चाहिए जिसमे ८ से १० आउन्स तक दूध आ सके और उसमे आधे आधे आउन्स का निशान लगा होना चाहिए।

(३) उसमे रबर की कोई नली नहीं लगी होनी चाहिए। जिन बोतलों मे रबर की लम्बी नलिया लगी होती हे, वे स्वास्थ्य की दृष्टि से हानिकारक होती हैं।

(४) बोतल ऐसी होनी चाहिए जो दोनों ओर से खुल सके और जिसमें एक ओर से दूसरी ओर तक पानी बहा कर अच्छी तरह सफ़ाई की जा सके।

(५) उसका गला इतना चौड़ा होना चाहिए कि वह अन्दर से खूब अच्छी तरह साफ़ किया जा सके।

(६) सदा दो बोतलें रखनी चाहिए और दोनों का पारी पारी से व्यवहार होना चाहिए।

(१) रबर की घुंडी—यह सादी और कोणाकार या लम्बोतरी होनी चाहिए। यह बोतल की गरदन पर ठीक तरह से बैठ जानी चाहिए और इतनी चौड़ी होनी चाहिए कि सहज मे उलटी जा सके।

(२) यह ऐसी होनी चाहिए जो बोतल के मुँह पर ठीक तरह से और सहज मे बैठाई जा सके और उसे किसी दूसरी चीज़ से कसने या बाँधने आदि की आवश्यकता न पड़े।

(३) इस घुंडी का छेद इतना बड़ा होना चाहिए कि यदि बोतल उलटी कर दी जाय तो उसमे से प्रति सेकेंड एक बूँद के हिसाब से दूध गिर सके। छेद इतना बड़ा नहीं होना चाहिए कि उसमे से दूध की धारा ही बह निकले। यह बात बहुत ही महत्त्व की है; क्योंकि यदि उसमे से दूध की धार बह निकलेगी तो बच्चे के जल्दी जल्दी दूध पीने के कारण उसे बदहज़मी हो जायगी। यदि बच्चा भूखा हो और बोतल से जल्दी जल्दी दूध पीने लगे तो उसका पेट अफर जायगा और इससे वह कै भी करने लग सकता है। एक बार में बच्चे को जितना दूध पीना चाहिए, यदि वह उतना न पीकर उससे कुछ कम पीए, तो उसे ज़बरदस्ती बाक़ी दूध पिलाने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए। स्वास्थ्य और भूख मे समय समय पर जो अन्तर पड़ा करते हैं, उनका सदा ध्यान रखना चाहिए।

(४) छेद बहुत छोटा भी न होना चाहिए; नही तो कमज़ोर बच्चा जल्दी थक जायगा और बिना पेट भरे ही दूध पीना छोड़ देगा।

(५) रबर की घुंडी थोड़े थोड़े समय पर बदल दी जानी चाहिए और एक साथ बहुत सी घुंडियाँ मँगाकर रख लेनी चाहिएँ। रबर की घुंडी मे प्रायः जगह जगह दरारें पड़ जाया करती है और तब उन्हें अच्छी तरह साफ़ करना असम्भव हो जाता है। उनमें के कीटाणुओं को नष्ट करने के लिए उन्हें गरम पानी में छोड़कर उबाल लेना आवश्यक है।

बोतल साफ़ करना—यदि बोतल ठीक तरह से साफ़ न की जाय तो उसमे रखा हुआ दूध गन्दा और ख़राब हो जायगा जिससे बच्चे को ऐसे दस्त आने लगेंगे जो किसी समय घातक भी हो सकते हैं। जब बोतल दूध से ख़ाली हो जाय, तब उसे पहले अच्छी तरह ठंढे पानी से और तब गरम पानी से धो डालना चाहिए। विशेषतः गरमी के दिनो मे तो ऐसा करना और भी आवश्यक होता है। बोतल को अच्छी तरह धोने के लिए सोडा बाई कार्ब (Soda bicarb) और एक बुरुश की बहुत ज़रूरत होती है। इसके बाद उसे साफ़ पानी से ख़ूब अच्छी तरह धो लेना चाहिए। बोतल उलटी करके रख देनी चाहिए और अच्छी तरह सुखा लेनी चाहिए। वह इतनी साफ़ होनी चाहिए कि यदि रोशनी में रखकर देखी जाय तो उसमें कुछ भी धुँधलापन न दिखाई पड़े। काम मे लाने से पहले बोतल फिर गरम पानी से धो लेनी चाहिए। काम मे लाने से पहले भी और बाद भी रबर की घुंडी खौलते हुए पानी मे डालकर साफ़ कर लेनी चाहिए। बुरुश किसी साफ़ जगह में टँगा रहना चाहिए और उस पर मैल या धूल आदि नहीं बैठने देनी चाहिए।

बोतल का व्यवहार—छाती से दूध पिलाने की अपेक्षा बोतल से दूध पिलाने मे नियमित रूप से और ठीक समय पर पिलाने का और भी अधिक ध्यान रखने की आवश्यकता होती है। दिन के समय ठीक चार चार घंटे पर और रात के समय ठीक छः छः घंटे पर दूध पिलाना चाहिए।

जो दूध अधिक समय तक बोतल में रखा रहा हो, वह कभी बच्चे को नहीं दिया जाना चाहिए।

बच्चे को कभी ख़ाली बोतल की घुंडी या और किसी प्रकार की चुसनी नहीं चूसने देना चाहिए। प्रायः मातायें अपने बच्चों को शान्त रखने के लिए उनके हाथ में ख़ाली बोतल या चुसनी दे दिया करती हैं। यह ठीक नहीं है। इससे बच्चों को एक बुरी आदत पड़ जाती है।

(१) दोष—जो बच्चे आरम्भ से ही बोतल की सहायता से दूध पीते हैं, उनके सम्बन्ध मे पहले दो महीने तक माता-पिता को बहुत चिन्ता रहती है, क्योंकि ऐसे बच्चे प्रायः बीमार पड़ा करते हैं। बोतल को ठीक तरह से साफ़ करने में भी उन्हें बहुत कठिनता और कष्ट होता है।

(२) जिन दिनों बच्चे को दांत निकलने लगते हैं, उन दिनों भी बोतल से दूध पिलाने में कई ख़राबिया होती हैं।

(३) बच्चे को चम्मच या सीपी की सहायता से दूध पिलाने का जो सीधा सादा ढंग है, उसकी अपेक्षा बोतल से दूध पिलाने में ख़र्च भी अधिक होता है।

बोतल से दूध पिलाने मे तो बहुत सी छोटी मोटी बातों का ध्यान रखना पड़ता है, पर सीपी या चम्मच से दूध पिलाने मे ये कठिनाइयाँ नहीं होतीं। बोतल से दूध पिलाने में बच्चे के लिए बहुत सी जोखिमे भी होती हैं; इसलिए माता को इस सम्बन्ध के सब काम बहुत सावधानी के साथ करने चाहिएँ। यदि माता खूब सतर्क रहे और पूरी सावधानी से काम ले, तो यह जोखिम बहुत कुछ कम हो जाती है। पर फिर भी जोखिम को पूरी तरह से बचाना प्रायः असम्भव ही है।

(१) बोतल से दूध पिलाने का ढग—माता को चाहिए कि ज़मीन पर बैठकर बच्चे को ठीक उसी प्रकार अपनी गोद मे रख ले जिस प्रकार उसे स्तन से दूध पिलाने के समय लेकर बैठती है।

(२) उस पर उतना ही ध्यान दे जितना कि स्तनो से दूध पिलाने के समय दिया जाता है।

(३) दूध गरम होना चाहिए और बोतल कुछ इस प्रकार झुकी रहनी चाहिए जिसमे उसकी गरदन और आगे की घुंडी दूध से भरी रहे।

(४) अधिक से अधिक पन्द्रह या बीस मिनट तक बोतल से दूध पिलाना चाहिए।

(५) दूध पिलाते समय बीच में तीन या चार बार बच्चे के मुँह के पास से बोतल हटा लेनी चाहिए जिसमें वह बहुत जल्दी जल्दी दूध न पी सके।

(६) दूध पिला चुकने के बाद बोतल साफ़ कर लेनी चाहिए।

(७) जब दूध पिलाने का समय आवे, तब बच्चे को जगा लेना चाहिए और दूध पिलाने के बाद फिर उसे बिस्तर पर लिटा देना चाहिए।

दूध की मात्रा—साधारणतः बच्चे की भूख पर ही दूध की मात्रा छोड़ दी जाती है। उसे जितनी भूख होती है, वह उतना दूध पी लेता है। पर शर्त्त यह है कि बच्चा खूब तन्दुरुस्त हो। इसका फल बहुत ही सन्तोषजनक होता है। पर यह भी देखा जाता है कि बहुत से बच्चों का इस तरह से अच्छा पोषण और वर्द्धन नहीं होता; क्योंकि साधारणतः उन्हें कम दूध मिलता है; और कभी कभी वे अधिक दूध पी लेने के कारण बीमार पड़ जाते हैं। दूध की मात्रा हर एक बच्चे की उमर और आवश्यकताओं के अनुसार होनी चाहिए। साधारणतः लड़कों की अपेक्षा लड़कियाँ अधिक दूध पीती हैं।

यद्यपि दूध की मात्रा के सम्बन्ध मे सबसे अच्छी बात यह है कि हर बार बच्चे को उतना ही दूध दिया जाय, जितनी उसे भूख हो, तो भी उसे कभी, उसकी आवश्यकता से अधिक दूध पीने के लिए प्रेरित नहीं करना चाहिए और न उसके पेट भरने से पहले उसके आगे से बोतल ही हटानी चाहिए। जन्म के समय बच्चे का पेट प्रायः एक आउन्स से और दो महीने की उमर मे प्रायः दो आउन्स से भर जाता है। इस प्रकार छः महीने की अवस्था तक हर महीने प्रायः एक आउन्स की वृद्धि होती जाती है। हर महीने के अन्त मे दूध की मात्रा अचानक नहीं बढ़ा देनी चाहिए। वह सदा धीरे धीरे और बच्चे की आवश्यकता के अनुसार बढ़ाई जानी चाहिए। इसका अच्छा उपाय यही है कि धीरे धीरे एक छोटा या चाय का चम्मच भर दूध बढ़ाते जाना चाहिए। यदि

अचानक दूध की मात्रा अधिक बढ़ा दी जायगी तो उससे बच्चे को कष्ट होगा। अगर बच्चे का वज़न बराबर अच्छी तरह बढ़ता चलता हो तो दूध की मात्रा बढ़ाने की आवश्यकता नहीं। इसके विरुद्ध यदि हर सप्ताह उसका वज़न न बढ़ता हो तो उसे अधिक मात्रा में दूध देने की आवश्यकता होती है।

दिन रात में जितनी बार और जितने समय के अन्तर पर बच्चे को छाती से दूध पिलाया जाना चाहिए, उतनी ही बार और उतने ही अन्तर पर बोतल से भी दूध पिलाना चाहिए। अर्थात् दिन में चार चार घंटे पर और रात में छः छः घंटे पर दूध पिलाना चाहिए।

दूध में चीनी—गौ के दूध में स्त्री के दूध की अपेक्षा कम मिठास होती है। इसलिए गौ के दूध में थोड़ी चीनी मिलानी चाहिए। लेकिन चीनी भी बहुत अधिक नहीं देनी चाहिए। नहीं तो उससे पेट में वायु उत्पन्न होगी, दरद होने लगेगा और दस्त आने लगेंगे।

गौ का दूध पीनेवाले बच्चों के लिए फलों के रस की आवश्यकता—जिन बच्चों को गौ का दूध पिलाया जाता हो, उन्हें थोड़ा फल का रस देना भी अच्छा होता है। इसमें सन्तरे, अंगूर, आम या नीबू का रस दिया जा सकता है। जब बच्चा चार महीने का हो जाय, तब उसे फल का रस देना आरम्भ करना चाहिए।

माता को रस के लिए वही फल चुनना चाहिए जो बच्चे को सबसे अधिक अनुकूल पड़ता हो। पहले उबालकर ठढे किये हुए पानी में दस पन्द्रह बूँद रस मिलाकर बच्चे को देना चाहिए और ध्यानपूर्वक देखना चाहिए कि बच्चे पर उसका क्या प्रभाव पड़ता है। यदि बच्चे को खाँसी आती हो तो फल का रस नहीं देना चाहिए; क्योंकि फल के रस से और विशेषत. खट्टे फल के रस से खाँसी और भी बढ़ जाती है। छः महीने तक रस की मात्रा धीरे धीरे बढ़ाकर चाय के छोटे दो चम्मच भर कर देनी चाहिए।

गौ का दूध अधिक पिला देना—ऊपर यह बतलाया जा चुका है कि यदि स्तन से बच्चे को अधिक दूध पिला दिया जाय तो उसे अपच या बदहज़मी हो जाती है। गौ का दूध आवश्यकता से अधिक पिला देना और भी बुरा है। इससे बच्चे के पेट मे बहुत वायु भर जाती है और वह बहुत देर तक दरद के मारे रोया करता है। जिन बच्चों को कृत्रिम रूप से दूध पिलाया जाता हो, वे यदि रोयें, चिल्लायें या हठ करें तो यह नहीं समझना चाहिए कि वे भूखे हैं, बल्कि यह समझना चाहिए कि उन्हें बदहज़मी हो गई है। यदि दूध पीने के बाद तुरन्त ही अथवा दूसरी बार दूध पीने के समय से कुछ ही पहले ऐसा बच्चा रोने लगे तो उसके रोने का कारण भूख हो सकती है। इसलिए बच्चे को गौ का दूध कभी अधिक नहीं पिलाना चाहिए। यह एक नियम सा है कि एक बरस के बच्चे को एक क्वार्ट (Quart) से अधिक दूध की आवश्यकता नहीं होती।

गौ का दूध सफलतापूर्वक पिलाना—जो बच्चा अच्छी तरह बढ़ता रहता है, वह सदा प्रसन्न और सन्तुष्ट रहता है। वह रात भर और अधिकतर दिन मे भी बराबर आराम से सोता रहता है। वह कभी बेचैन नही होता। वह हर बार पन्द्रह मिनट में दूध पी लेता है और दिन रात मे एक से तीन बार तक मल त्याग करता है। उसका मल भी साधारण हुआ करता है।

दूध पिलाने में विफलता—जब बच्चे में अपच के लक्षण दिखाई पड़ें अर्थात् वह अधिक रोया करे, बार बार मल त्याग करे, कै करे और तौल मे न बढ़े तो समझना चाहिए कि गौ का दूध पिलाने मे सफलता नहीं हो रही है।

गौओं को रक्षापूर्वक रखना—जिस प्रकार माता के खान पान, परिस्थिति और मनोविकारों आदि के कारण माता के स्तन के दूध मे अन्तर पड़ता रहता है और स्तनों के दूध से भरे रहने या खाली रहने के

कारण अन्तर पड़ता रहता है, उसी प्रकार गौ के चारे, परिस्थिति और नसल आदि के कारण भी उसके दूध मे समय समय पर अन्तर पड़ता रहता है। बाज़ार में जो रद्दी और ख़राब दूध मिलता है, वह दूध पिलाने के कारण भी बच्चों को बहुत सी बीमारिया हो जाया करती हैं। विशेषतः जो बच्चे बड़े बड़े शहरों मे पलने है, उनके सम्बन्ध मे तो यह बात और भी ठीक घटती है। आज-कल भारत मे बच्चो को जो बहुत अधिक क्षय या टाइफायड आदि रोग होते हुए देखे जाते हैं, उनका एक बहुत बड़ा कारण बाज़ारो में मिलनेवाला दूध और विशेषतः गरमी के दिनों मे मिलनेवाला दूध है। यह दस्तूर सा है कि दूध बड़े बडे बरतनों मे दुहा जाता है, उन्हीं बरतनों मे बहुत दूर तक ले जाया जाता है और बहुत से हाथो से गुज़रने के बाद वह बच्चे को पीने के लिए मिलता है। गौ को दुहने से ही दूध मे बहुत कुछ गन्दगी आ जाती है। दूध मे कुछ तो गौ के शरीर की मैल आदि उतर आती है और कुछ दुहनेवाले के हाथों की मैल मिल जाती है। दूध के बरतन प्रायः ऐसे पानी मे धोये जाते है जिनमे अनेक प्रकार के कीटाणु भरे होते है। ऐसी परिस्थितियों में लोगों के पास जो दूध पहुँचता है, वह इस देश मे क्षय-रोग के फैलने का एक बहुत बडा कारण है। म्युनिसिपैलिटियों को उचित है कि वे स्वास्थ्य-विभाग के द्वारा इस बात को रोकने का प्रयत्न करें और इस बात पर विशेष ध्यान दें कि दूध अधिक स्वास्थ्यकर परिस्थितियों मे दुहा और वेचा जाया करे। इन अवस्थाओं मे सुधार करने के लिए पशु-चिकित्सा-शास्त्र के जाननेवालो के ज्ञान और बुद्धि का भी प्रयोग किया जाना चाहिए।

स्वास्थ्यविभाग को उचित है कि वह गौओ के रहने के स्थानो का निरीक्षण करे, पशुओं की जाँच करे, दूध विकने के स्थानों की स्वच्छता पर ध्यान रखे और जिन स्थानो मे दूध दुहा या वेचा जाता हो, उन पर पूरी पूरी निगरानी रखे जिसमें वहाँ की गन्दगी और दोषों के कारण लोगों का स्वास्थ्य न नष्ट हो।

जिस पशु का दूध दुहा जाता हो, वह स्वस्थ और नीरोग होना चाहिए। वह जिस स्थान मे रखा जाय, वह स्थान बहुत खुलासा होना चाहिए और उसमे ख़ूब हवा और रोशनी आनी चाहिए। गौशाला की ज़मीन पक्की और अच्छी दशा मे होनी चाहिए और उसमे बहुत काफी सफ़ाई होनी चाहिए। दूध दुहनेवाले क्षय-रोग से ग्रस्त नहीं होने चाहिएँ। यदि उनके परिवार मे किसी को टाइफायड हो तो उन्हे कुछ दिनो के लिए काम से हटा देना चाहिए। जिस दूकान मे दूध बिकता हो, वहाँ ख़ूब अच्छी तरह रोशनी और हवा आनी चाहिए और बहुत सफ़ाई रहनी चाहिए। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, गौ का दूध दुहा जाने के समय से ले कर पीने के समय तक अनेक ऐसी परिस्थितियो मे रहता है जिनके कारण दूध मे अनेक प्रकार के परिवर्त्तन हो सकते हैं। जो दूध बच्चों को पिलाया जाता हो, उसकी इन सब परिवर्त्तनो से रक्षा करना बहुत ही आवश्यक है। जब तक दूध की रक्षा के लिए स्वास्थ्य-सम्बन्धी सभी भिन्न भिन्न सिद्धान्तो का ठीक तरह से पालन न किया जायगा, तब तक देश मे और विशेषतः बड़े बड़े नगरों मे क्षय-रोग का प्रसार ठीक तरह से नहीं रोका जा सकता।

बकरी का दूध—कुछ बच्चे ऐसे होते है जिन्हें गौ का दूध कितना ही सुधार कर क्यो न दिया जाय, पर फिर भी वे अच्छी तरह नहीं बढते। ऐसी अवस्था मे बकरी का दूध सहज में पच सकता है। और चाहे जो हो, पर वह डिब्बो मे आनेवाले और दूसरे अनेक प्रकार के पेटेण्ट दूधो की अपेक्षा फिर भी अच्छा ही होता है। बकरी का दूध बहुत कुछ मां के दूध से मिलता-जुलता होता है। यह ठीक है कि उसमे गौ के दूध की अपेक्षा कम और मां के दूध की अपेक्षा और भी कम मिठास या चीनी होती है, पर उसमें चरबियां और खनिज, तेजाब आदि प्रायः उतनी ही मात्रा मे होते है जितनी मात्रा मे मां के दूध में होते हैं और दोनो मे क्षार का अंश होता है। पर गौ या भैंस के दूध मे तेजाब या खटास होती है।

गौओं को तो क्षय-रोग होता है, पर बकरियों को नहीं होता। कुछ लोग माल्टा ज्वर (Malta ague) के भय से बकरी का दूध नहीं पीते; पर उसमें उतना अधिक भय नहीं है जितना लोग समझते हैं। फिर माल्टा ज्वर का परिणाम उतना भयंकर नहीं होता जितना भयंकर क्षय-रोग का परिणाम होता है; और यदि बकरी की अच्छी तरह देख-रेख की जाय, तो माल्टा ज्वर का भय बहुत कुछ कम हो सकता है। गौओं के कारण क्षयरोग तो बहुत फैलता है, पर बकरियों के कारण माल्टा ज्वर से पीड़ित होनेवाले लोगों की संख्या अपेक्षाकृत बहुत कम होती है।

बकरी रखने के लिए बहुत अधिक स्थान की भी आवश्यकता नहीं होती और उसे खिलाने-पिलाने में गौ की अपेक्षा ख़र्च भी कम पड़ता है। बकरी बहुत ही शान्त, सीधी-सादी और निरीह होती है; इसलिए बच्चे उसे अधिक पसन्द भी करते हैं। उसकी देख-रेख के लिए भी किसी विशेष ज्ञान की आवश्यकता नहीं होती। यदि कोई आदमी उसके लिए नित्य दस मिनट का भी समय दिया करे, तो उसे खिला पिला भी सकता है और दुह भी सकता है। घर के किसी कोने में बकरी बाँधी जा सकती है और उसके कारण दूसरों को बहुत ही कम कष्ट होता है। यदि लोग बाज़ार का दूध ख़रीदने की अपेक्षा बकरी पाला करें तो बहुत ही अच्छा है। और बहुत से लोग ऐसे होते हैं जो गौ तो नहीं पाल सकते, पर बकरी सहज में पाल सकते हैं।

यूरोप में और विशेषतः इटली, स्विज़रलैंड, फ़ान्स और जरमनी में लोग बकरियाँ बहुत पालते हैं। जिन बच्चों को उनका दूध दिया जाता है, उनमें से बहुत से बच्चे बहुत अच्छी तरह बढ़ते हैं। किसी समय भारत में भी लोग बहुत बकरियाँ पालते थे, पर अब यह बात कम हो रही है; क्योंकि प्रायः लोग बकरी पालना छोटा काम समझते हैं। बकरी बहुत साफ़ पशु है और प्रायः क्षय-रोग तो उसे होता ही नहीं। बकरी का भोजन भी ऐसा वैसा नहीं होता जिससे हानि की सम्भावना हो।

पर कुछ चीज़ें ऐसी भी हैं जिन्हे यदि बकरी खा ले, तो उसके दूध पर उनका प्रभाव पड़ता है; और दूध से वह बुरा प्रभाव बच्चे के स्वास्थ्य पर पड़ता है। इसलिए जिन दिनों बकरी का दूध पीया जाता हो, उन दिनों उसे इधर-उधर नहीं घूमने देना चाहिए।

कुछ ऐसी अवस्थाएँ है जिनमे बकरी के दूध का व्यवहार अधिक अच्छा और उपयुक्त होता है। वे अवस्थायें इस प्रकार हैं—

(१) जब गौ का दूध अनुकूल न पड़ता हो।

(२) जब गौ का दूध पीनेवाले बच्चे का वज़न दिन पर दिन घटता जाता हो।

(३) जब बच्चा दिन पर दिन दुर्बल होता जाता हो और सूखता जाता हो, तब बकरी का दूध अधिक लाभदायक सिद्ध होता है। जिन बच्चो मे क्षय-रोग के कुछ लक्षण दिखाई पड़ते हों, उनके लिए यह अधिक लाभदायक होता है; और जिन बच्चो को क्षय-रोग होने का भय हो अर्थात् जो बच्चे ऐसे परिवार मे उत्पन्न हुए हों जिसमे किसी को क्षय-रोग हो चुका हो, तो इसके व्यवहार से उन बच्चों की क्षय-रोग से रक्षा होती है।

गधी का दूध—जिन बच्चों को गौ का दूध अनुकूल नहीं पड़ता, उनके लिए कभी कभी गधी का दूध बहुत लाभदायक सिद्ध होता है। वह कुछ रेचक होता है, इसलिए स्वस्थ्य और नीरोग बच्चों के लिए वह उपयुक्त नहीं होता। उसके संयोजक तत्व भी प्रायः वे ही होते हैं जो माँ के दूध के होते है, पर उसमें पोषक गुण कम होता है।

बकरी की तरह गधी को भी क्षय-रोग नही होता, इसलिए इन जानवरो का दूध बिना उबाला और कच्चा भी पीया जा सकता है।

जमा हुआ दूध—बाज़ारो मे जो जमा हुआ दूध मिलता है, वह गौ के दूध को उड़ाकर तैयार किया जाता है और ज़माने से पहले उसमे अनेक प्रकार के परिवर्त्तन आदि किये जाते है। कुछ कारखानेवाले तो इसे अधिक दिनों तक रक्षित रखने के लिए उसमे

चीनी मिलाते हैं, पर कुछ लोग चीनी नहीं मिलाते। मीठे जमाये हुए दूधों मे नेसल का दूध (Nestle's Milk) अधिक प्रसिद्ध है। जो बच्चे ठीक तरह से दूध न दिये जाने के कारण गौ का दूध नहीं पचा सकते और इस कारण रोगी और दुबले हो जाते हैं, उन्हें यह दूध दिया जाता है। जब इसका व्यवहार बहुत अधिक समय तक किया जाता है, तब इससे बच्चों का ठीक तरह से पोषण होना रुक जाता है; और उसमे जो चीनी मिली हुई होती है, उसके कारण बच्चो को कुछ अधिक पाख़ाने आने लगते हैं। जितना पानी उसमें मिलाना चाहिए, यदि उससे अधिक पानी मिलाकर बच्चों को दिया जाय तो उसका पोषक गुण अवश्य ही बहुत कुछ घट जाता है।

बिना चीनीवाले दूध—इस प्रकार के दूधों का दाम अधिक होता है; और एक बार जब इनका डिब्बा खुल जाता है, तब ये दूध भी प्रायः उतनी ही देर तक अच्छी दशा में रह सकते हैं जितनी देर तक साधारण गौ का दूध रहता है। उससे अधिक नहीं ठहरते। इसलिए चौबीस घंटों के बाद बच्चों के लिए उनका व्यवहार ठीक नहीं होता।

जिन बच्चों को जमाया हुआ दूध दिया जाता है, वे प्रायः मोटे तो होते हैं, पर उनमें बल कम होता है; वे यों ही फूले हुए होते हैं और रोगों का अच्छी तरह सामना नहीं कर सकते—रोग उन्हें जल्दी दबा लेते हैं। यदि उन्हें कभी दस्त आदि छिड़ जाते हैं, तो उनके बल और तौल में घातक रूप से कमी होने लगती है। इसलिए बहुत अधिक दिनों तक ऐसा दूध देना ठीक नहीं है।

जमाया हुआ दूध केवल वहीं काम में लाना चाहिए जहाँ गौ का ताज़ा दूध न मिल सकता हो। जमाया हुआ दूध जब काम में लाना हो, तब उसमें उबाला हुआ पानी मिलाना चाहिए।

खुश्क या सुखाया हुआ दूध—इसे तैयार करने के लिए पहले गौ के दूध को हलकी अथवा बहुत तेज़ आँच पर पकाते हैं और

उसे महीन चूर्ण के रूप मे बना लेते हैं। उसे फिर तरल रूप मे लाने के लिए उसमें कुछ पानी मिलाना पड़ता है। इस देश मे इस प्रकार के जिस दूध का अधिक व्यवहार होता है, वह ग्लैक्सो (Glaxo) कहलाता है। यह मशीनो की सहायता से महीन चूर्ण के रूप मे लाया जाता है और इसे पकाने के समय ज़रूरी तौर पर अनेक प्रकार के परिवर्त्तन होते हे; इसलिए गौ के ताज़े दूध के मुक़ाबले मे यह कभी अच्छा नहीं ठहर सकता। जहा गौ का ताज़ा दूध न मिलता हो अथवा मिलने पर भी बच्चे को अनुकूल न पड़ता हो, वहा कभी कभी इसका व्यवहार लाभदायक होता हैं। इसका व्यवहार केवल कठिन अवसरों पर अस्थायी रूप से होना चाहिए। यदि इसका व्यवहार अधिक दिनो तक किया जायगा, तो इससे बच्चे को ऐसे रोग हो जायँगे जो उनका ठीक तरह से पोषण न होने के कारण होते हे।

निशास्तेवाले भोजन—जब तक बच्चा नौ महीने का न हो जाय, तब तक वह निशास्ता नहीं पचा सकता। इससे पहले बच्चे के लिए निशास्तेवाली चीज़ो के व्यवहार का विधान करना बड़ी भारी भूल है। इस प्रकार के भोजन गौ के दूध से तैयार किये जाते है और उनने पहले से पचाया हुआ निशास्ता मिलाया जाता है। व्यवहार मे लाने के समय उसमें केवल पानी मिलाने की आवश्यकता होती है और उसमे दूध नहीं मिलाया जाता। इस प्रकार का एक ऐसा दूध आता है जिसमे निशास्ता पहले से पूर्ण अथवा आंशिक रूप मे पचाया हुआ होता है। पर इस प्रकार के दूध मे दूध और पानी दोनों मिलाने की आवश्यकता होती हैं।

इस प्रकार के भोजनों का व्यवहार तभी करना चाहिए जब बच्चे को माता का दूध छुड़ा दिया गया हो और जब डाक्टर यह सलाह दे कि अब इसे निशास्ता देने मे कोई हर्ज नही हे। रोटी, अरारोट, साबूदाना, बिस्कुट और इसी प्रकार के दूसरे भोजनों मे भी निशास्ता होता है; इसलिए जब तक बच्चे के दात न निकल आवे, तब तक

उन्हें ये सब चीज़ें नहीं देनी चाहिए। जब बच्चे के पाचन करनेवाले अंग अच्छी तरह बढ़कर विकसित हो जायँ, तब इस प्रकार के भोजन लाभदायक हो सकते हैं। जिन बच्चों को नौ महीने की अवस्था से पहले ही निशास्तेवाले भोजन दिये जाते है, उन्हे अनेक प्रकार की हानियाँ पहुँचती है। जब बच्चे के दाँत इस योग्य हो जायँ कि दूध के सिवा ठोस पदार्थ भी चबा सकें, तब भी दूध छुड़ाने के बाद उन्हे एकाएक निशास्तेवाला भोजन देना ठीक नहीं है। क्योकि बच्चा धीरे धीरे ही शारीरिक दृष्टि से निशास्तेवाली चीज़ें खाने के योग्य होता है।

बच्चों के लिए पेटेण्ट भोजन——आज-कल शिशुओं और छोटे बच्चों के लिए पेटेण्ट भोजनों का बहुत अधिक व्यवहार किया जाता है। पर पाठिकाओ को इनके सम्बन्ध मे कुछ सचेत कर देना आवश्यक है, क्योकि इनके व्यवहार से बच्चो मे रोगो का सामना करने की शक्ति बहुत कम हो जाती है और उन्हे अनेक प्रकार के रोग आ घेरते है। इनके विज्ञापन लोगो को भ्रम मे डाल देते है। इनके सम्बन्ध मे प्रायः यह कहा जाता है कि ये बहुत ही उपयोगी होते है और सब जगह समान रूप से इनका व्यवहार किया जा सकता है। पर वास्तव मे यह बात बहुत बढ़ाकर कही जाती है। यह भी कहा जाता है कि इस प्रकार के भोजन माता के दूध के स्थान पर उसका पूरा पूरा काम देते है। पर यह बात भी ठीक नहीं है। वास्तव मे इस प्रकार के भोजन अपने स्वरूप और रचना दोनो मे माता के दूध से बहुत ही भिन्न होते है। इसके सिवा इस प्रकार के पेटेण्ट भोजनो का मूल्य भी बहुत अधिक होता है। भारत-सरीखे देश मे जहाँ गौ का ताज़ा दूध सहज में मिल सकता हो, इस प्रकार के डिब्बों मे बन्द भोजनों का व्यवहार करना बहुत ही बुरा है।

साथ ही इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि यदि कोई एक प्रकार का पेटेण्ट भोजन किसी एक बच्चे के लिए लाभदायक होता हो,

तो यह कोई आवश्यक बात नहीं है कि और बच्चों के लिए भी वह उसी प्रकार लाभदायक हो। जिन बच्चों का पालन इस प्रकार के भोजनों से होता है, उनमे से अधिकांश आगे चलकर दु:ख भोगते हैं। लगातार अधिक समय तक इस प्रकार के भोजनों का व्यवहार करने से रक्तविकार (Scurvy) और रिकेट्स (Rickets) आदि वे रोग हो जाते है जिनका मूल उचित पोषण का अभाव होता है। ये रोग बहुत कठिनता से अच्छे होते हैं। कुछ बच्चे इस प्रकार के भोजनो के व्यवहार से मोटे ताजे और फूले हुए दिखाई पड़ते हैं। पर उनका ऊपर से दिखाई पड़नेवाला यह स्वास्थ्य धोखा होता है, असली नहीं होता। वे देखने मे इसी लिए मोटे जान पड़ते हैं कि डिब्बों में बन्द जो भोजन आते हैं, उनमे चीनी होती है। ऊपर से उन्हें देखने मे तो ऐसा जान पड़ता है कि इनमे रोगो का सामना करने की यथेष्ट शक्ति है, पर वास्तव मे उनमे वह शक्ति बहुत ही कम होती है। यदि उन्हें कभी भारी बदहज़मी हो जाय जिससे उन्हे दस्त और कै आने लगे या न्यूमोनिया सरीखे और रोग हो जायँ, तो माता का दूध पीनेवाले बच्चों की अपेक्षा ऐसे बच्चों के जल्दी मरने का भय रहता है। इसलिए बिना अच्छी तरह समझे बूझे इस प्रकार के पेटेण्ट भोजनों का कभी व्यवहार नही करना चाहिए; और जब बच्चे को इस प्रकार का कोई पेटेण्ट भोजन दिया जाय, तब ख़ूब ध्यानपूर्वक यह देखते रहना चाहिए कि वह कहाँ तक बढ़ता और उन्नति करता है।

बच्चों के लिए पेटेण्ट भोजनों का उपयोग—ऐसे भोजनों का उसी दशा में उपयोग हो सकता है जब गौ का ताज़ा दूध न मिल सकता हो और बच्चे को और सभी प्रकार से ठीक तरह से भोजन देने में विफलता हो चुकी हो। जब कभी रेल मे बहुत लम्बा सफ़र करना हो और रास्ते मे गौ का ताज़ा दूध न मिल सकता हो, तब इस प्रकार के भोजनों का विशेष उपयोग हो सकता है। फिर भी उनका व्यवहार थोड़े ही समय के लिए होना चाहिए।

पहले वर्ष में दूध के सिवा दूसरा भोजन—जब बच्चा छः या सात महीने का हो जाता है, तब उसका पहला दांत निकलता है। जब कई दांत निकल आवें, तब यह समझ लेना चाहिए कि बच्चा दूध के साथ साथ और प्रकार के भोजन पचाने के योग्य हो रहा है। यदि बच्चा केवल दूध पीकर ही शान्त और सन्तुष्ट रहे, तब माता को चाहिए कि कुछ और ठहर जाय और उसे निशास्तेवाले भोजन देना आरम्भ न करे। पर यदि बच्चा केवल दूध से ही सन्तुष्ट होता हुआ न दिखाई दे और उसका वज़न ठीक तरह से बराबर न बढ़े, तब माता को चाहिए कि उसे और प्रकार का भी भोजन दे।

बच्चे को पकाई हुई रोटी के ऊपर का छिलका चबाने के लिए या थोड़ा मांस लगा हुआ हड्डी का टुकड़ा कुतरने के लिए दिया जा सकता है। इससे उसके जबड़े मज़बूत होंगे। इसके सिवा उसे पकी हुई नारंगी या सन्तरे की एक फाक उसमें के बीज निकाल कर भी दी जा सकती है।

अधिक अवस्था के बच्चों का भोजन—यहां तक तो छोटी अवस्था के बच्चों या शिशुओं के भोजन के सम्बन्ध में विचार हुआ है। अधिक अवस्था के बच्चों के भोजन की समस्या भी उतनी ही महत्त्व की है और उस पर भी माता-पिता को बहुत अधिक ध्यान देना चाहिए। बच्चे को ठीक तरह से भोजन देने का कर्त्तव्य पूर्ण रूप से माता का ही है। उसे चाहिए कि बच्चे की आवश्यकताओं का पता लगावे और उन आवश्यकताओं के अनुसार उसको भोजन देने का नियम बनाये या व्यवस्था करे। पर जब तक वह खाद्य पदार्थों और भोजन कराने के मूल सिद्धान्तों को अच्छी तरह नहीं समझ लेती, तब तक वह सफलता-पूर्वक अपने इस कर्तव्य का पालन नहीं कर सकती। माता को इस बात का सदा ध्यान रखना चाहिए कि बच्चों को होनेवाले बहुत से रोग उन्हें बिना समझे बूझे और ठीक ढग से भोजन न देने के कारण

ही होते है। यदि बच्चा दुबला-पतला और कमज़ोर दिखाई पड़े और उसका स्वास्थ्य उन्नति न करे, तो माता को समझ लेना चाहिए कि बच्चे को ठीक भोजन नही मिलता। माताये प्राय: ऐसी पौष्टिक औषधे जानना चाहती है जिनके सेवन से उनके दुबले-पतले और कमज़ोर बच्चे मोटे-ताज़े और बलवान् हो जायँ। पर उन्हे यह स्मरण रखना चाहिए कि ऐसी औषधो के पीछे पड़ने से कहीं अच्छा यह है कि वे भोजन कराने की समस्या पर ध्यान दे और उनका भोजन नियमित करें। जब तक अच्छा और उपयुक्त भोजन न दिया जायगा, तब तक पौष्टिक औषधों से बहुत ही कम लाभ होगा। बच्चे का बल जितना रसोईघर पर निर्भर करता है, उतना दवाख़ानों पर निर्भर नहीं करता।

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, बच्चे अपने भोजन के सम्बन्ध मे पूर्णरूप से अपनी माताओ के निर्णय और ज्ञान पर निर्भर करते है। माताये साधारणतः अपने छोटे बच्चो के भोजन का तो विशेष ध्यान रखती है, पर जब वे बच्चे दूसरे वर्ष मे प्रवेश करते हैं, तब वे कम सचेत रहती है और उन्हे मनमाना भोजन देने लगती हैं। बड़े बच्चे के भोजन पर भी उन्हे उतना ही ध्यान देना चाहिए, क्योंकि उसे अपने शारीरिक संगठन और विकास के लिए और उनकी आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए कई प्रकार के भोजन दरकार होते है। पहले पांच वर्षों मे बच्चे बहुत जल्दी जल्दी बढ़ते है। उनकी फ़ुरती और चंचलता भी उन्ही दिनों मे अधिक देखने मे आती है। उनके शारीरिक और मानसिक विकास के लिए उपयुक्त भोजन और अच्छे पोषण की बहुत अधिक आवश्यकता होती है। यह भी स्मरण रखना चाहिए कि साधारणतः इन्हीं दिनों मे उनकी आदतें भी बनती बिगड़ती है। इसलिए यह आवश्यक है कि बच्चे को अच्छी आदतें डाली जायँ और खाने-पीने के सम्बन्ध में उसे बुरी आदतें न पड़ने पावें।

बच्चे के भोजन के सम्बन्ध मे कोई एक ही और निश्चित नियम नहीं बतलाया जा सकता। इसका निश्चय बहुत कुछ जल-वायु, घर की दशा और सामाजिक अवस्थाओ आदि से होता है। लेकिन इतना होने पर भी कुछ ऐसे सिद्धान्त है जिनका पालन माताओ को अपने बच्चों के खिलाने-पिलाने और उन्हें स्वस्थ रखने तथा हृष्ट-पुष्ट और बलवान् बनाये रखने के लिए करना चाहिए। माता को यह बात भूल नहीं जानी चाहिए कि यदि बच्चे को ठीक़ भोजन न दिया जायगा अथवा ठीक तरह से न दिया जायगा, तो उसी समय अथवा कुछ आगे चलकर बच्चा बीमार पड़ जायगा, उसे बदहज़मी हो जायगी और उसका पूरा पूरा पोषण न होगा।

भिन्न भिन्न प्रकार के भोजन—सब प्रकार के भोजन नीचे लिखे चार अलग अलग भागों मे बांटे जा सकते है।

(१) प्रोटीन वाले भोजन—बच्चे के शरीर का संगठन करने के लिए इस प्रकार के भोजन बहुत ही आवश्यक होते है। उनमे नाइट्रोजन (Nitrogen) रहता है। इस वर्ग मे जो विशेष प्रकार के भोजन आते है, उनके नाम ये है—दूध, मांस, मछली, अडे, हरी तरकारियां और दाल आदि।

(२) कार्बोहाइड्रेट (Carbo-Hydrate) वाले भोजन—इनसे शक्ति उत्पन्न होती है और साथ ही इनका कुछ अश चरबी के रूप मे शरीर मे रक्षित रहता है। चीनी, शहद, मीठे फल, आलू, चावल और रोटी आदि पदार्थ इस वर्ग के अन्तर्गत है।

(३) चरबियाँ—इनसे शरीर को गरमी पहुँचती है और शक्ति प्राप्त होती है। मक्खन, घी, तेल, मलाई और अडो की ज़रदी इस वर्ग के अन्तर्गत है।

(४) खनिज पदार्थ और नमक—शरीर के स्वाभाविक कार्यों को पूरा करने के लिए इनकी बहुत अधिक आवश्यकता होती है और बचपन में शरीर की वृद्धि बहुत कुछ इन्हीं पर निर्भर करती है। ये नमक आदि दूध, तरकारियों, फलों, दालों, अंडों और मांस में मिलते हैं।

दूसरे वर्ष में बच्चों का भोजन—अभी तक हमने वे भोजन बतलाये हैं जो बच्चे को पहले वर्ष में दिये जाते हैं। माता के लिए यह जानना भी बहुत आवश्यक है कि बच्चे को दूसरे वर्ष में क्या क्या चीज़ें खाने को दी जानी चाहिएँ; क्योंकि उसके इन्हीं बातों के ज्ञान पर बच्चे का स्वास्थ्य और कल्याण एक बड़ी सीमा तक निर्भर करता है। यदि बच्चा बराबर तौल में बढ़ता रहे और ख़ूब सन्तुष्ट तथा प्रसन्न रहे, तो माता को समझ लेना चाहिए कि वह ठीक तरह से बढ़ रहा और उन्नति कर रहा है।

पहले वर्ष में बच्चे के लिए स्वाभाविक भोजन दूध है। जब दूसरे वर्ष वह और बढ़ने लगता है, तब उसकी पाचन-शक्ति भी बढ़ने लगती है और उसे अपने विकास के लिए और भोजन की आवश्यकता होती है। उसका पेट दूध के सिवा और प्रकार के भोजन भी पचाने के योग्य हो जाता है। उस समय यदि उसे केवल दूध मिले तो उसे हानि पहुँचती है। दूसरे वर्ष में माता को उसके भोजन में कुछ ठोस पदार्थ भी मिलाने की आवश्यकता जान पड़ेगी और उसे उतना दूध नहीं देना चाहिए, जितना वह पहले दिया करती थी। ज्यों ज्यों और पदार्थों की मात्रा बढ़े, त्यों त्यों दूध की मात्रा घटनी चाहिए। उस समय बोतल का व्यवहार बन्द कर देना चाहिए और बच्चे को प्याले से दूध पीना सिखलाना चाहिए। यद्यपि इस समय उसे खाने की नई नई चीज़ें भी दी जाती हैं, पर फिर भी दूसरे वर्ष में भी उसका मुख्य भोजन दूध ही रहता है।

नशास्तेवाले भोजन——जब बच्चे के कई दांत निकल आवें, तब समझ लेना चाहिए कि वह नशास्तेवाले पदार्थ खाने के योग्य हो गया है। ये चीज़ें रोटी, चावल या साबूदाने के रूप मे दी जा सकती है। पर ध्यानपूर्वक बराबर यह देखते रहना चाहिए कि बच्चे पर इन चीज़ो का क्या प्रभाव पड़ता है, क्योंकि हर एक बच्चे की पाचन-शक्ति अलग अलग हुआ करती है। ज्यों ही स्वास्थ्य के कुछ भी ख़राब होने का कोई लक्षण दिखाई पड़े, त्यों ही नशास्तेवाला भोजन देना तुरन्त बन्द कर देना चाहिए, और जब तक बच्चा पूरी तरह से नीरोग और स्वस्थ न हो जाय, तब तक उसे बराबर दूध ही देते रहना चाहिए। इसके बाद फिर नशास्तेवाली चीज़े देकर उनका परिणाम देखना चाहिए और तब उनके अनुसार आगे चलना चाहिए।

फल——जैसा कि ऊपर बतलाया जा चुका है, बढनेवाले छोटे बच्चों के भोजन मे फलों का रस एक बहुत आवश्यक अग है और विशेषतः जब कि उन्हे ऊपरी दूध दिया जाता हो। यह रस या तो सवेरे या दोपहर के भोजन के समय दिया जाना चाहिए। पर यदि नारंगी या सन्तरा दिया जाय तो इस बात का ध्यान रहना चाहिए कि उसमे बीज न हों। एक वर्ष के बच्चे को प्रायः चाय के दो छोटे चम्मच भर रस दिया जाना चाहिए और फिर धीरे धीरे बढाकर तीन या चार चम्मच तक कर देना चाहिए। अंगूर, आम या सेब का रस भी दिया जा सकता है। बच्चे केला भी पसन्द करते हैं। कुछ लोग यह समझते है कि केले से बच्चो को हानि पहुँचती है। पर यह बात ठीक नहीं है और इस झूठे विश्वास के कारण बच्चों को केला देने से डरना नहीं चाहिए। फलो के सम्बन्ध मे यह कह देना भी आवश्यक जान पड़ता है कि बच्चो को केवल ताज़े और पके हुए फल ही और वह भी थोड़ी मात्रा मे देने चाहिएँ। यदि अधिक मात्रा मे दिये जायँगे तो उनकी पाचन-शक्ति ख़राब हो जायगी। बहुत अधिक पके

हुए और बासी फल देने से प्रायः बच्चो का स्वास्थ्य बिगड़ जाता है। इसलिए ऐसे फल नहीं देने चाहिएँ।

तरकारियाँ—भारत गरम देश है, इसलिए यहाँ तरकारियों का रस बहुत ही उपयोगी होता है। इससे एक तो खाने की चीज़ो मे हेर फेर हो जाता है और दूसरे उनमे कई प्रकार के नमक होते है जो शरीर के भिन्न भिन्न रेशो की रचना के लिए बहुत आवश्यक और उपयोगी होते है। देशी तरकारियों का सदा खूब व्यवहार होना चाहिए; क्योंकि उनसे स्वास्थ्य सुधरता है। पर सभी तरकारियाँ लाभदायक नही हुआ करती। इसलिए ध्यानपूर्वक देखते रहना चाहिए कि किस तरकारी का बच्चे पर क्या प्रभाव पड़ता है और उसके अनुसार उसमे परिवर्त्तन या सुधार करते रहना चाहिए। ताज़ी तरकारियों में से बच्चे आलू बहुत पसन्द करते हैं, पर उनका बहुत अधिक व्यवहार हानिकारक होता है।

अंडे—बच्चो के लिए अंडे बिलकुल निरर्थक होते है। पर हाँ यदि दूसरे वर्ष के आरम्भ मे उन्हे अंडे की ज़रदी दी जाय और विशेषतः ऐसी अवस्था में दी जाय जब कि वे दुर्बल हो तो उससे उन्हे लाभ पहुँच सकता है। यदि नित्य एक अंडा दिया जाय तो उससे कोई हानि नहीं हो सकती। पर जिन बच्चो को दमा या खुजली और सेहुआँ आदि का रोग हो, उन्हें अंडा नहीं देना चाहिए। बहुत छोटे बच्चो को उबले हुए कड़े अंडे नही देने चाहिएँ, क्योंकि प्रायः बच्चे उन्हे पचा नही सकते। बच्चो को अंडा देने का सबसे अच्छा ढंग यह है कि या तो उन्हें नरम उबाला हुआ अंडा दिया जाय या उसकी खीर बनाकर दी जाय।

मछली—जब बच्चा साल भर का हो जाय, तब उसे उबाली हुई मछली के छोटे छोटे टुकड़े दिये जा सकते हैं।

मांस—जब बच्चे का दूसरा वर्ष पूरा होने लगे, तब उसे कभी कभी मांस भी दिया जा सकता है। पर यदि वह मांस न खाना

चाहता हो तो उसे खाने के लिए विवश नहीं करना चाहिए। डिब्बों में बन्द जो विलायती मांस आता है, वह बच्चों को कभी नहीं देना चाहिए।

घी—बच्चे की ठीक तरह से वृद्धि और विकास करने के लिए घी बहुत आवश्यक है। रोटी या चावल के साथ घी दिया जा सकता है। आरम्भ मे केवल थोड़ा ही घी देना चाहिए और वह भी उसी समय देना चाहिए जब बच्चा भूखा हो। आज-कल बाज़ारों मे जो घी मिलता है, वह शुद्ध नहीं होता और उसने कई तरह की चीज़ें मिली हुई होती है। ऐसे घी से छोटे बच्चो के स्वास्थ्य को जितनी अधिक हानि पहुँचती है, उसकी पूरी पूरी कल्पना भी नहीं हो सकती। जब गले की सूजन, पाचनशक्ति की खराबियों और बुखार आदि का पता लगाया जाता है, तब यही सिद्ध होता है कि इनका कारण बाज़ार के घी से तैयार की हुई मिठाइयों का व्यवहार है। गौ या भैंस के ताज़े दूध से मक्खन निकालकर जो घी बनाया गया हो, उसका मुक़ाबला बाज़ार का कोई घी नहीं कर सकता।

दही*—भारत में बहुत प्राचीन काल से ही दही एक बहुत ही लाभदायक भोजन माना जाता है। भारत में शायद ही कोई ऐसी जगह हो जहा के लोग दही के व्यवहार

---

*यहाँ जिस दही का ज़िक्र किया जाता है, वह वही दही है जो देशी ढंग से भारत मे तैयार किया जाता है। यहाँ का दही प्रायः वैसा ही होता है जैसा बलगेरिया में बनाया जाता है। विलायत से एक प्रकार की टिकियां आती है जिन्हें लैक्टो बैसिलस बलगेरिकस (Lacto bacillus bulgaricus) कहते हैं। ये टिकियां अंगरेज़ी दवा बेचनेवालों के यहाँ मिल सकती है और वे ही लोग यह भी बतला देते है कि कितने दूध को जमाने के लिए उसमे कितनी टिकियां डालनी चाहिएँ।

को स्वास्थ्य के लिए अच्छा न समझते हो। पाश्चात्य देशों के चिकित्सक भी उसकी उपयोगिता मानते है। भारत-सरीखे गरम देश मे दही का व्यवहार करने से आँतों के अन्दर मल सड़ने नही पाता; और कुछ विशेष प्रकार की चीज़ो के खाने से शरीर मे जो अनेक प्रकार के विष उत्पन्न हो जाते है, वे रक्त के प्रवाह मे मिलने नहीं पाते। दही मे लैक्टिक एसिड (Lactic Acid) नाम का जो एक विशेष प्रकार का तेज़ाब होता है, वह आँतो मे होनेवाले कुछ विशेष प्रकार के कीटाणुओ को नष्ट करता है। वे कीटाणु तेज़ाब मे बढ़ने और फैलने नहीं पाते। हां यदि कोई खारी पदार्थ हो तो उसमे वे अवश्य बढ़ते और फैलते है। बच्चो और बड़ी उमर के लोगों को आँतो मे मल के सड़ जाने के कारण जो दस्त आने लगते है, वे प्रायः दही या छाछ के व्यवहार से रुक जाते है। अच्छे और बढिया दही की पहचान यही है कि वह मीठा हो, खट्टा न हो। और प्रकार की जोखिमो से बचने के लिए यह आवश्यक है कि उसे तैयार करने मे कई बातो की सावधानी रखी जाय। जिस दूध का दही जमाना हो, उसे हानिकारक कीटाणुओ से बचाये रखने के लिए पहले उबाल लेना चाहिए और तब उस दूध मे किसी विश्वसनीय प्रकार का लैक्टिक एसिड छोड़ देना चाहिए। इसके बाद बरतन को अच्छी तरह से ढककर रात भर पड़ा रहने देना चाहिए। सवेरे दही तैयार हो जायगा।

प्रायः दो वर्ष की अवस्था के छोटे बच्चे दही बहुत पसन्द करते है। साधारणतः दही का व्यवहार करने से पहले उसमे थोड़ा सा नमक मिला दिया जाता है। पर कुछ बच्चे ऐसे भी होते है जो बिना नमक के ही दही खाना पसन्द करते है। कुछ बच्चे अधिक दही खाते हैं और कुछ कम। आरम्भ मे दो बडे चम्मच भर दही देना बहुत है। इसके बाद धीरे धीरे मात्रा बढ़ाई जा सकती है। माता-पिता को ध्यानपूर्वक यह देखते रहना चाहिए कि उसके व्यवहार से बच्चे को कब्ज़ियत न होने पावे। यदि कब्ज़ियत हो तो कुछ समय के लिए दही का व्यवहार

बन्द कर देना चाहिए। यदि ऐसा न किया जायगा तो पाचन के सम्बन्ध की कई भारी ख़राबियाँ उत्पन्न होने का भय रहेगा। रात के समय और ख़ासकर जाड़े के दिनों में दही का व्यवहार करना ठीक नहीं है।

मिठाइयाँ—चीनी एक अच्छी और लाभदायक खाने की चीज़ है। पर यदि चीनी और मिठाइयों आदि का बहुत अधिक व्यवहार किया जायगा, तो उससे दूसरे आवश्यक और पोषक भोजनों की भूख नष्ट हो जायगी। चीनी का अधिक व्यवहार करने से पेट और आँतों में ख़राबी पैदा होती है और शरीर का ठीक तरह से पोषण नहीं होने पाता। इससे बच्चों को उतनी ही भीषण बान पड़ जाती है जितनी भीषण बान अधिक अवस्था के लोगों में शराब का व्यवहार करने से उत्पन्न होती है। यदि बच्चों को बहुत अधिक मिठाई खिलाई जाय और विशेषतः ऐसी मिठाई खिलाई जाय जो मिलावटवाले और अशुद्ध घी या मक्खन के साथ तैयार की गई हो, तो अवश्य ही उनमें पाचन-सम्बन्धी अनेक प्रकार के विकार उत्पन्न हो जाते हैं। बच्चों को और विशेषतः मोटे बच्चों को मिठाइयाँ बहुत ही समझ-बूझ कर और कम दी जानी चाहिएँ।

बहुत अधिक चिकने पदार्थ, मसालेदार पदार्थ और अचार, चटनी आदि भी बच्चों को नहीं दी जानी चाहिएँ। छोटे बच्चों को चाय और क़हवे से भी हानि पहुँचती है।

बच्चों को भोजन देने के सम्बन्ध में कुछ उपयोगी सूचनायें—जिस प्रकार बच्चे के केवल दूध पीने के दिनों में उसे ठीक समय और अन्तर पर भोजन देने की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार कुछ बड़े होने पर भी ठीक समय पर और नियम से भोजन देने की आवश्यकता होती है। उसके भोजन करने के समय निश्चित कर देना बहुत अच्छा है। इसके सम्बन्ध में कोई निश्चित नियम नहीं बतलाया जा सकता। बच्चे की भूख और स्वास्थ्य देखते हुए माता-

पिता को आप ही उसके भोजन के समय निश्चित कर लेने चाहिए। पर उसे सदा नियमित रखने का पूरा ध्यान रखना चाहिए; और जहां तक हो सके, उसके लिए बनाये हुए नियम का पालन करना चाहिए।

बच्चे के भोजन का जो समय निश्चित हो, उससे पहले उसे कभी कुछ खाने को नहीं देना चाहिए। यहां तक कि उसे थोड़ा दूध भी नहीं पीने देना चाहिए, क्योंकि दूध को पचाने के लिए भी उतनी ही पाचन-शक्ति की आवश्यकता होती है जितनी और चीज़ों को पचाने के लिए होती है। बच्चों को अपच या बदहज़मी होने का एक बहुत ही सीधा-सादा कारण यह होता है कि भोजन के समय से पहले ही बीच बीच में उन्हें कोई न कोई चीज़ खाने को दे दी जाती है। बच्चे को यह भी सिखलाना चाहिए कि भोजन खूब अच्छी तरह चबाया करो। जल्दी जल्दी खाने की चीज़ों को निगलने से एक बुरी आदत पड़ जाती है। ज्यों ही यह देखो कि बच्चा जल्दी जल्दी भोजन को बिना अच्छी तरह चबाये ही निगल रहा है, त्यों ही उसे रोक दो, क्योंकि इस प्रकार भोजन करने से प्रायः बदहज़मी होती है। बच्चों से यह भी नहीं कहना चाहिए कि जल्दी जल्दी खा लो। उन्हें धीरे धीरे आराम से खाने देना चाहिए। जब कई बच्चे एक साथ मिलकर भोजन करने बैठते हैं, तब उन्हें बहुत आनन्द आता है जिससे भूख भी बढ़ती है और पाचन भी खूब होता है।

यह भी देखते रहना चाहिए कि बच्चा खाने की कौन सी चीज़ पसन्द करता है। कभी कभी बच्चे इसलिए कोई चीज़ खाने से इनकार कर देते हैं कि वह चीज़ उनके अनुकूल नहीं होती, उन्हें अच्छी नहीं लगती या उस समय उनकी कुछ खाने की इच्छा ही नहीं होती। बच्चों को डराकर या घुड़ककर कभी कोई चीज नहीं खिलानी चाहिए। इसके बदले में उनके मन-बहलाव का कोई सामान कर देना चाहिए जिससे

भोजन की ओर उनकी रुचि बढ़ जाती है। नई तरह की चीज़ें उन्हें धीरे धीरे खिलाना आरम्भ करना चाहिए और उनका परिणाम या फल ध्यानपूर्वक देखते रहना चाहिए। उनके भोजन की मात्रा भी धीरे धीरे बढ़ानी चाहिए।

मातायें प्रायः एक यह भी भूल किया करती है कि बच्चे को भोजन कराने के उपरान्त तुरन्त ही नहलाने लग जाती हैं। ऐसे बच्चों को प्रायः निश्चितरूप से सरदी लग जाती है और बदहज़मी हो जाती है। इस सम्बन्ध मे नियम यह होना चाहिए कि बच्चे को भोजन के उपरान्त कम से कम एक घंटे तक न नहलाया जाय।

बच्चों को भूख कम लगना—यदि बच्चे को अच्छी तरह खुलकर भूख न लगती हो और वह यथेष्ट भोजन न करता हो तो उसका पोषण और वृद्धि रुक जाती है। ऐसे बच्चों को खूब खुली हवा मे रखना चाहिए। बहुत अधिक आदमियो से भरे हुए कमरों, गन्दी हवा या वातावरण मे रहने और खुली हवा के न मिलने से भूख असाधारण रूप से कम हो जाती है। माता अपने पड़ोसियों से शिकायत करती फिरती है कि मेरा बच्चा कुछ खाता-पीता नही। पर यदि वह इस प्रकार समय नष्ट करने के बदले नित्य सवेरे और सन्ध्या अपने बच्चों को खुली हवा मे घुमाने के लिए ले जाया करे तो बच्चे को जल्दी ही खुल कर भूख लगने लगेगी। बच्चे को फिर ठीक अवस्था मे लाने के लिए माता को चाहिए कि वह उसकी रुचि देखे और समझे। यदि वह केवल बहुत अधिक चिन्ता करेगी तो बात और भी बिगड़ जायगी। जो लड़के कम खाते हो, यदि भोजन के समय उनका साथ ऐसे लड़कों से करा दिया जाय जो अधिक खाते है, तो भी बहुत कुछ लाभ होता है। यदि उन्हे नियमित रूप से छः छः घंटों पर भोजन दिया जाया करे और बीच मे कोई चीज़ खाने को न दी जाय तो इससे भी लाभ होता है। बाज़ार की बनी हुई मिठाई बच्चों को कभी नहीं देनी चाहिए।

प्रायः कब्ज़ियत के कारण भी बच्चों की भूख जाती रहती है। उसे ठीक और उपयुक्त भोजन दिया जाना चाहिए, साथ ही खूब पानी पिलाना चाहिए, खुली हवा मे रखना चाहिए, उससे कसरत करानी चाहिए और उसे खाने को फल देने चाहिएँ। जहां तक हो सके, उसे दस्त लानेवाली दवायें नहीं देनी चाहिएँ।

आठवाँ प्रकरण

बच्चों की स्वास्थ्य-रक्षा

माता के प्रति—यह एक पुरानी कहावत है कि बीमारी का इलाज करके अच्छा करने से उत्तम यह है कि वह पहले ही से रोक दी जाय या होने ही न दी जाय। किसी बीमारी को इलाज करके अच्छा करने से सहज काम यही है कि बीमारी होने ही न दी जाय—पहले से ही रोक दी जाय। यह सत्य सिद्धान्त अपने मन में बहुत अच्छी तरह बैठा लेना चाहिए, क्योंकि बच्चों के सम्बन्ध में इसका बहुत अधिक महत्त्व है। बच्चों में रोगों को रोकने या उनका सामना करने की शक्ति कम होती है; इसलिए परिस्थितियों के उस पर ऐसे प्रभाव पड़ सकते हैं जो उसके विकास में स्पष्ट रूप से बाधक हों। जिस पर बच्चों को पालने-पोसने का भार हो, उसे सब तरह से बहुत ही सचेत रहना चाहिए। यद्यपि आज-कल रोगों की चिकित्सा करने के ढंगों में बहुत कुछ सुधार और उन्नति हुई है, तथापि उसमें अभी बहुत कुछ सुधार और उन्नति होने की गुंजाइश है। इसलिए बच्चों के रोगों की चिकित्सा करने की अपेक्षा माताओं को अधिक ध्यान इसी बात पर देना चाहिए कि उन्हें रोग होने ही न पावें। इस प्रकरण में माताओं को उचित मार्ग दिखलाने के लिए स्वास्थ्यरक्षा के सम्बन्ध के मुख्य मुख्य सिद्धान्त बतलाये जाते हैं। आरम्भ से ही इन सबका महत्त्व अच्छी तरह समझ लेना चाहिए और हर एक बात पर पूरा पूरा ध्यान देना चाहिए। यदि इन नियमों का ठीक तरह से पालन किया जायगा, तो बच्चे का केवल जीवन ही रक्षित नहीं हो जायगा, बल्कि वह बड़ा होकर एक स्वस्थ, बलवान् और परिश्रमी तथा कुशल नागरिक बन जायगा।

घर या रहने का स्थान—बहुत छोटे बच्चों का स्वास्थ्य ठीक दशा मे बनाये रखने के लिए अच्छे मकान और पड़ोस से भी बहुत बड़ी सहायता मिलती है। दुर्भाग्यवश इस समस्या पर विचार करते समय माता-पिता की हीन आर्थिक अवस्था की उपेक्षा नही की जा सकती। यदि माता-पिता की आर्थिक अवस्था अच्छी हो, तो उनके रहने के मकान भी स्वभावतः ऐसे अच्छे स्थान मे होगे जहां की सब बाते स्वास्थ्यवर्धक होगी। पर इससे यह नही मान लेना चाहिए कि ग़रीब लोग अपनी हीन आर्थिक अवस्था के अनुसार और अपने ग़रीबी ढंग से अपने और अपने आस-पास के रहने के स्थानों मे कोई सुधार कर ही नही सकते। यह स्मरण रखना चाहिए कि ग़रीबी और उसके कारण स्वास्थ्यनाशक स्थानों मे निवास करने का बड़ी आयु के पुरुषो की अपेक्षा छोटे बच्चो के स्वास्थ्य पर बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ता है। यही कारण है कि घनी आबादीवाले नगरो और मकानों मे सम्पन्न लोगो के जितने बच्चे मरते है, उनकी अपेक्षा ग़रीबो के बच्चे कही अधिक संख्या मे मरते है। तंग मकानो मे रहनेवाले बच्चों को सूर्य का प्रकाश और ताज़ी साफ़ हवा न मिलने के कारण अनेक प्रकार के रोग हो जाते है।

धनवान् लोग केवल अपने धन या सम्पत्ति के कारण ही स्वस्थ नहीं रहते, बल्कि इसलिए अधिक स्वस्थ रहते है कि उन्हे स्वास्थ्य-रक्षा के सिद्धान्तो का पालन करने के लिए अधिक सुभीते प्राप्त होते है। प्रायः देखा जाता है कि धनी और सम्पन्न लोग भी अपने मकानो की भीतरी सफ़ाई पर उतना अधिक ध्यान नहीं देते। यदि धनवान् लोग स्वास्थ्य-रक्षा के नियमो का पालन न करेंगे, तो उनके बच्चो को भी उसी तरह कष्ट भोगने पड़ेगे जिस तरह ग़रीबो के बच्चे भोगते है।

बच्चों के रहने के कमरे सदा लम्बे-चौडे होने चाहिएँ, उनमे पूरा प्रकाश आना चाहिए, वे अच्छी तरह सजे हुए होने चाहिएँ और ऐसे होने चाहिएँ कि उनमे हवा के बहुत तेज़ झोके न आ सकें। वे

ऐसे होने चाहिएँ कि उनमे पशु, चूहे, कीड़े-मकोड़े और विशेषतः बिल्लियाँ न आ सकें। यदि घर में कोई बिल्ली पली हो तो उसे बच्चे के कमरे मे नहीं जाने देना चाहिए। बच्चों का चेहरा प्रायः गरम और आकर्षक होता है, इसलिए बिल्लियां प्रायः उन पर लेट जाती हैं जिससे उन्हें बहुत कष्ट होता है। इसके सिवा बिल्लियो के द्वारा बच्चों को छूतवाले रोग भी हो सकते है। जिस कमरे मे बच्चा रखा जाय, वह ख़ूब हवादार होना चाहिए और उसमे इधर-उधर व्यर्थ के सजावट के सामान नहीं बिखरे होने चाहिए, जैसे कि प्रायः घरों मे हुआ करते है। जिस कमरे मे बच्चा रहता हो, उसमें कपड़े धोने और सुखाने भी न चाहिएँ और वहां से क़ालीने आदि भी हटा देनी चाहिए; क्योंकि उनमे गर्द आकर जमती और बैठती है। बच्चों के कमरे में खाने-पीने की चीज़ें भी नहीं होनी चाहिए; क्योंकि उनके कारण घर मे चींटिया और मक्खिया आती है। यदि बच्चा मल त्याग करे तो वह भी वहां से तुरन्त हटा देना चाहिए।

भारत मे बच्चों के कमरों को सुगन्धित करने के लिए उनमे अनेक प्रकार के सुगन्धित पदार्थ जलाये जाते है। यह बात किसी अंश तक लाभदायक तो अवश्य है; पर इससे भी अधिक महत्त्व की बात यह है कि ताज़ी हवा आने के लिए मार्ग खुला रहना चाहिए।

ताज़ी हवा—स्वास्थ्य बनाये रखने के लिए साफ़ और ताज़ी हवा की बहुत बड़ी आवश्यकता होती है। बच्चे के स्वास्थ्य पर उसका बहुत ही बलकारक प्रभाव पड़ता है। मातायें प्रायः जाड़े के दिनों मे बच्चों को इसलिए बाहर नहीं ले जातीं कि कहीं उन्हे सरदी न लग जाय। पर उन्हें यह याद रखना चाहिए कि यदि बच्चा स्वस्थ और नीरोग होगा, तो उस पर ताज़ी ठंडी हवा का कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ेगा, बल्कि उसे लाभ ही पहुँचेगा। यदि बच्चा बलवान् और स्वस्थ हो तो उसे जाड़े के दिनो मे सरदी सहने के योग्य बनाना चाहिए। यदि बच्चा ख़ूब साफ़ और ताज़ी हवा मे रहेगा, तो उससे न केवल फेफड़ों

की बीमारियाँ नहीं बढ़ेंगी—बल्कि उसमे नई बीमारियाँ भी नहीं आने पावेंगी।

यदि मौसिम अच्छा हो तो गरमी के दिनो मे बच्चे को तीन सप्ताह का हो जाने के उपरान्त और जाड़े के दिनो मे चालीस दिनो का हो जाने के उपरान्त बाहर निकालना चाहिए। भारतवासियो मे यह एक पुरानी प्रथा है कि जब तक बच्चा चालीस दिन का नहीं हो जाता, तब तक उसे घर से बाहर नहीं निकालते। पर इस प्रथा मे कुछ शिथिलता लाने की आवश्यकता है। जाड़े के दिनों मे तो इस पुरानी प्रथा के अनुसार बच्चो को इतने दिनो तक बाहर न लाना ठीक ही है। पर गरमी के दिनो मे उसे इतने अधिक समय तक कमरे के अन्दर बन्द रखना ठीक नहीं है। जब वह तीन सप्ताह का हो जाय, तब वह मकान के बाहर लाया जा सकता है और इससे उसके स्वास्थ्य को कोई हानि नहीं पहुँच सकती। जिन मकानों मे बहुत अधिक लोग रहा करते हो, उनमे रहनेवाले माता-पिता को इस नियम का पूरी तरह से और अवश्य पालन करना चाहिए। बच्चो को बाहर की खुली हवा मे लाने के सम्बन्ध मे माता-पिता को नीचे लिखे हुए नियमों का ध्यान रखना चाहिए—

बच्चो को बाहर हवा मे रखने का समय धीरे धीरे बढ़ाया जाना चाहिए। पहले दिन बच्चे को पन्द्रह मिनट तक बाहर रखना चाहिए और दूसरे दिन बीस मिनट तक; और इसी प्रकार उसे बाहर रखने का समय धीरे धीरे बढ़ाते जाना चाहिए। उसे कमरे से बाहर लाने से पहले अच्छा यह होगा कि कमरे की खिड़कियां आदि खोलकर उसे तापमान की भिन्नताओं का कुछ अभ्यस्त कर लिया जाय।

माता-पिता प्रायः बच्चो को बाहर गली मे ले जाया करते है और यह समझते है कि हमने बच्चे को ताज़ी हवा खिला दी। इससे कहीं अच्छा यह होगा कि वे बच्चे को बाहर निकालने और ताज़ी हवा खिलाने के लिए किसी बाग़ बग़ीचे मे ले जाया करें।

दिन के समय और विशेषतः गरमी के मौसिम में कमरे की खिड़कियाँ और दरवाज़े खुले रखने चाहिएँ जिसमें बराबर हवा आती रहे। यदि खिड़की पूरी तरह से न खोलकर केवल थोड़ी सी खोली जायगी, तो तेज़ हवा का झोंका आवेगा जो भयंकर और हानिकारक होगा। विशेषतः जब बच्चे को खसरा, काली खाँसी या इसी प्रकार का और कोई रोग हुआ हो और वह उस रोग से अच्छा हो गया हो, तो फिर उसे बन्द कमरे में रखना और भी हानिकारक होता है। ऐसी अवस्था में कमरे में बन्द रहने से उसे क्षय रोग हो जाने का भय रहता है।

माताये प्रायः बच्चों को मक्खियों आदि से बचाने के लिए उनका मुँह किसी कपड़े या रूमाल आदि से ढक दिया करती हैं। पर उन्हें यह स्मरण रखना चाहिए कि ऐसा करके वे बच्चे की नाक और मुँह तक ताज़ी हवा पहुँचने का मार्ग बन्द कर देती हैं। जिन बच्चों को प्रायः सरदी और खाँसी आदि हुआ करती है, उन्हें इससे और भी अधिक हानि पहुँचती है। इसलिए बच्चे का मुँह सदा और विशेषतः जब कि वह सोया रहे, खुला रहना चाहिए जिसमें उसे साँस लेने के लिए ताज़ी और साफ़ हवा बराबर मिलती रहे।

नीचे लिखी बातों से सचेत रहना चाहिए—

(१) बच्चों को आँधी और तेज़ हवा से बचाना चाहिए।

(२) यदि बच्चे को छींकें या खाँसी आती हो, तो उसे लेकर बाहर नहीं निकलना चाहिए।

(३) भारत-सरीखे गरम देश में बच्चे को गरमी के दिनों में सूर्य की किरणों के हानिकारक प्रभाव से बचाना चाहिए। यहाँ हर साल बहुत से बच्चे केवल इसी लिए मर जाते हैं कि वे सूर्य की प्रखर किरणों के सामने बहुत अधिक समय तक रखे जाते हैं।

(४) बच्चों की आँखों पर सूर्य की किरणें सीधी नहीं पड़ने देनी चाहिएँ, नहीं तो उनकी आँखें आ जायँगी या दुखने लगेंगी।

(५) बच्चो को और विशेषतः ऐसे बच्चो को जिन्हें प्रायः ज़ुकाम और खाँसी हुआ करती हो, तेज़ हवा के झोकों से बहुत बचाना चाहिए ।

व्यायाम या कसरत—दूध पीते और दूसरे छोटे बच्चो के लिए व्यायाम या कसरत का जो महत्त्व है, उसे माता-पिता बहुत ही कम समझते है । साधारणतः माता-पिता यही समझते है कि छोटे बच्चो को कोई कसरत करने की आवश्यकता नहीं होती । पर उन्हें यह स्मरण रखना चाहिए कि एक छोटे बच्चे के शरीर में भी उतने ही अंग होते है, जितने किसी वयस्क पुरुष के अंग होते है; यह बात दूसरी है कि उसके वे अंग उतने अधिक विकसित न हों । उसके लिए यह आवश्यक होता है कि उसके सभी अंग समानरूप से काम करें, और यह बात कसरत करने से ही हो सकती है । शरीर के रग-पट्ठो का विकास करने के लिए कसरत करने की आवश्यकता होती है । बिना कसरत के तो भोजन का पाचन भी ठीक तरह से नहीं हो सकता । कसरत न करने से आँतें भी ठीक तरह से काम नहीं करती, पाख़ाना साफ़ नहीं होता जिससे शरीर मे अनेक प्रकार के विष फैलने लगते हैं, बच्चा बहुत ही शिथिल और अकर्मण्य या सुस्त हो जाता है, उसका मन बुझा सा रहता है और उसमे उत्साह या उमङ्ग नहीं रह जाती । हम यह भी कह सकते है कि बच्चा आपसे आप जितनी ही अधिक कसरत करता है, उसका स्वास्थ्य भी उतना ही अधिक अच्छा रहता है।

बच्चो के लिए कसरत—बच्चो को अपने रग-पट्ठो का व्यवहार करने के लिए जहाँ तक हो सके, पूरा सुभीता देना चाहिए । यदि वे रेंग सकते हों तो उन्हे रेंगने देना चाहिए । यदि वे खड़े हो सकते हों तो उन्हे खड़े होने के लिए उत्साहित करना चाहिए । हाथ-पैर इधर-उधर हिलाने से भी कसरत हो जाती है । इसका अच्छा उपाय यह है कि बच्चे को दूध पिलाने के उपरान्त यो ही लेटा दिया जाय और वह जिस प्रकार कसरत करना चाहे, उस प्रकार उसे कसरत

करने दिया जाय। बच्चे जो चिल्लाते या किलकारियाँ मारते हैं उससे भी उनकी कसरत हो जाती है और फेफड़े मज़बूत होते हैं।

जब बच्चा एक महीने का हो जाय, तब उसे पेट के बल लिटाना चाहिए। यदि इस अवस्था में उसे कुछ कष्ट जान पड़ेगा, तो वह आप ही किसी ओर करवट ले लेगा। दिन भर मे एक बार बच्चे को इस प्रकार की कसरत करानी चाहिए जिसमें उसे पीठ के पुट्ठों को मजबूत करने का अवसर मिले। यदि वह सदा पीठ के बल ही पड़ा रहेगा तो उसे इस बात का अवसर न मिलेगा। हम यहाँ यह भी कह देना चाहते हैं कि उसके शरीर का बहुत कुछ विकास उसकी पीठ के पट्ठों के विकास पर ही निर्भर करता है।

बड़े बच्चों के लिए कसरत—बच्चे स्वभावतः खेल-कूद पसन्द करते हैं। यह बात उनके लिए उचित भी है और स्वास्थ्य-वर्धक भी। बच्चों को कभी खेलने से रोकना या मना नहीं करना चाहिए। हाँ इस बात का अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि वे किसी ग़लत रास्ते पर न जायँ। बड़े बच्चों को घर से बाहर निकलकर खूब दौड़ने-धूपने और तरह-तरह के खेल खेलने देना चाहिए। दूसरे बच्चों का साथ उनके लिए लाभदायक होता है। कुछ लोग ऐसे होते है कि यदि उनके बच्चे सामाजिक दृष्टि से निम्नकोटि के लोगों के बच्चों के साथ गलियों मे खेलें तो वे इसमे अपना अपमान समझते है। पर कुछ परिस्थितियों मे बच्चों को इस प्रकार खेलने देना चाहिए। यहाँ यह स्मरण रखना चाहिए कि धनवानों के लड़के पूरी तरह से कसरत न करने और दूसरे बच्चां के साथ न खेलने के कारण कई प्रकार की हानिया उठाते है। खेल-कूद और मनोविनोद मानो बच्चों के स्वास्थ्य के लिए पौष्टिक ओषधि के समान हैं। जो बच्चे छोटी अवस्था में दूसरे बच्चों के साथ नही मिलते जुलते, वे बड़े होने पर शरमीले होते हैं जिससे उनकी मानसिक और शारीरिक सभी प्रकार की उन्नतियों मे बाधा पड़ती है। पर दूसरे बच्चो के साथ मिलने जुलने से उनकी

झिझक निकल जाती है और यह बाधा नहीं होने पाती। जो लोग बड़े होने पर सदा मनहूस और सुस्त दिखाई देते है, वे प्रायः ऐसे ही होते हैं जो बाल्यावस्था मे दूसरे बच्चो के साथ हँसने खेलने नहीं पाते। जो बच्चे दूसरे बच्चों के साथ मिलते जुलते रहने है, वे बड़े होने पर व्यवहार के सच्चे होते हैं और लोगों के साथ मित्रता स्थापित करने का भाव भी उनमे रहता है।

जब लड़का या लड़की बड़ी हो जाय तब उसे खूब चलाना फिराना और टहलाना चाहिए। दौड़ने-धूपने और उछलने-कूदने से बच्चे प्रसन्न भी रहते है और उनकी कसरत भी हो जाती है। नंगे पैर दौड़ना अच्छा होता है। रबड़ का गेद उन्हे दौड़ाने मे और भी सहायक होता है। प्रायः बच्चे घर के काम-धन्धे मे सहायता देना चाहते है। यदि वे ऐसा करें तो उनसे सहर्ष सहायता लेनी चाहिए।

जब बच्चा दो बरस का हो जाय तब उसे ऐसा अवसर देना चाहिए कि वह झूला आदि झूलकर बाँहो की कसरत कर सके। आगे और पीछे की तरफ़ झूलने से बच्चे प्रसन्न भी रहते है और उनके हाथों की कसरत भी हो जाती है। कुछ बच्चे इस प्रकार के खेल बहुत पसन्द करते है।

कसरत ऐसी नही होनी चाहिए जिसमे बच्चे बहुत अधिक थक जायँ या शिथिल हो जायँ। किसी बच्चे को उससे बड़े या अधिक बलवान् बच्चे के साथ मुक़ाबला करने या भिड़ने के लिए विवश नहीं करना चाहिए, क्योंकि इस प्रकार के मुक़ाबले मे उसके शरीर पर आवश्यकता से अधिक ज़ोर पड़ता है और वह बहुत थक जाता है। इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि खेल उजड्डपन का न हो और उसमे अधिक शोर न होने पावे।

भारत मे लोग प्रायः बच्चो के शरीर पर तेल मला करते है। यह बहुत लाभदायक होता है; क्योंकि शरीर पर तेल की मालिश करने से शरीर मे रक्त का अच्छी तरह संचार होता है।

बच्चे के शरीर की सफ़ाई—बच्चे का स्वास्थ्य ठीक दशा मे बनाये रखने के लिए शरीर की खाल का जो विशेष महत्त्व है, उसका माता-पिता को ज्ञान होना चाहिए। यह केवल शरीर का ऊपरी आवरण या उसे ढकने की ही चीज़ नहीं है, बल्कि वह साँस लेने का भी उतना ही अंग है जितना कि फेफड़े हैं। इसके सिवा इसी मार्ग से शरीर की बहुत कुछ गन्दगी भी बाहर निकलती है। यदि वह गन्दगी अन्दर ही बन्द रह जाय तो उससे आदमी बीमार पड़ सकता है। गरमी के दिनो मे यह गन्दगी पसीने के रूप मे निकलती है। शरीर के चमड़े या खाल का दूसरा काम यह है कि उससे शरीर का तापमान ठीक बना रहता है। इन सब कामों के ठीक तरह से होने के लिए यह आवश्यक है कि शरीर के ऊपर की खाल को बराबर हवा लगती रहे।

यह भी स्मरण रखना चाहिए कि बच्चों के शरीर की खाल पूरी तरह से विकसित अवस्था मे नहीं होती और इधर-उधर गिरने-पड़ने आदि के कारण उसमें प्रायः चोट और खरोच आदि लग जाया करती है। इस प्रकार की चोटों और खरोचों से बाहर की अनेक ज़हरीली चीज़ों और रोग के विषो आदि को शरीर के अन्दर पहुँचने का मार्ग मिल जाता है। बच्चों के शरीर मे उन्हें रोकने की शक्ति अपेक्षाकृत कम होती है। जन्म के समय बच्चा जितना ही कम परिपक्व होता है, उसमे बीमारियों आदि की छूत से बचने की भी उतनी ही कम शक्ति होती है। इसलिए माता को इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि बच्चे के शरीर मे इस प्रकार रोगों की छूत न लगने पावे। गन्दे कपड़े पहनाने या गन्दे पानी से नहलाने से भी इस प्रकार शरीर मे रोगों के विष प्रवेश कर जाते है।

शरीर मे रोगों के प्रवेश करने का दूसरा साधन ऐसे बच्चों का संसर्ग—मेल-जोल—है जिनकी खाल पर किसी प्रकार की सूजन या फोड़ा-फुन्सी आदि हो। जिन बच्चों के शरीर की खाल का ठीक ध्यान रखा जाता है, उनका स्वास्थ्य बहुत अच्छा बना रहता है।

स्नान—माता को बच्चे के शरीर की सफ़ाई का विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिए। स्नान के सम्बन्ध मे जो बातें नीचे बतलाई जाती है, वे अच्छी तरह समझ लेनी चाहिएँ और उनका पालन करना चाहिए।

(१) बच्चे को नित्य नहलाना बहुत आवश्यक है; पर साथ ही इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि बच्चे के स्वास्थ्य पर उसका कोई बुरा प्रभाव न पड़े। स्नान के बाद बच्चे के हाथ-पैर या नाक ठंढी नहीं रहनी चाहिए। यदि ये अंग ठंढे रहें तो समझना चाहिए कि स्नान कराने से बच्चे का बल घटता है और उसकी तबीयत ख़राब होती है। ऐसी दशा मे उसके शरीर की सफ़ाई के लिए केवल स्पंज का व्यवहार करना चाहिए।

(२) जब बचा अच्छी तरह से नहलाया जाता है, तब उसे बहुत आनन्द मिलता है। यदि सम्भव हो तो माता को चाहिए कि बच्चे को तब तक बराबर नित्य स्नान कराती रहे, जब तक उसे आप ही नित्य स्नान करने का अभ्यास न पड़ जाय।

(३) नये जन्मे हुए बच्चे को तब तक पूरा स्नान नहीं कराना चाहिए जब तक उसकी नाल गिर न जाय।

(४) बच्चे को दूध पिलाने के उपरान्त तुरन्त ही स्नान नहीं कराना चाहिए।

(५) बच्चे को स्नान कराने का पानी बहुत साफ़ होना चाहिए। गरमी के दिनो मे साधारण कल का जल या किसी साफ़ कुएँ से खींचा हुआ ताज़ा जल ही बहुत अच्छा होता है। जाड़े के दिनों मे गरम पानी का व्यवहार करना चाहिए। यह जानने के लिए कि स्नान का पानी अधिक गरम तो नहीं है, पहले उसमे से थोड़ा पानी अपनी हथेली के पिछले भाग या कोहनी पर डालकर देख लेना चाहिए। यदि वह पानी सहता हो तो उससे बच्चे को स्नान कराना चाहिए।

(६) स्नान कराने के समय बच्चे को होशियारी से पकड़े रहना चाहिए जिसमें वह हाथ से फिसल या गिर न जाय।

(७) बच्चे का सारा शरीर जल्दी जल्दी धो डालना चाहिए। नहलाने में पाँच मिनट से अधिक समय नहीं लगना चाहिए; और इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि नहलाने के समय कमरे में तेज़ हवा का झोंका न आवे। यदि तेज़ हवा न चलती हो तो धूप में नहलाना अधिक उत्तम है। उस दशा में नहलाने से पहले उसके शरीर पर थोड़ी देर तक धूप लगने देनी चाहिए। सूर्य की वे किरणें बच्चे के स्वास्थ्य के लिए लाभदायक होती हैं। सिर की सफ़ाई में विशेष ध्यान देना चाहिए, क्योंकि प्रायः उसमें बहुत सी धूल और गर्द जम जाती है। बालों में कंघी करके उन्हें भी साफ़ रखना चाहिए।

(८) अधिक साबुन मलने से खुश्की पैदा होती है। यदि साधारण तरह से धोने से ही बाल बहुत खुश्क या रूखे हो जायँ, तो उनमें थोड़ा सा चिकना पदार्थ लगा देना चाहिए जिसमें धोने से उनकी जो स्वाभाविक चिकनाहट निकल जाती है, वह फिर आजाय। इस काम के लिए किसी प्रकार के तेल का व्यवहार किया जा सकता है। ऋतु और तापमान को देखते हुए यदि बच्चे को सप्ताह में एक या दो बार सारे शरीर में पहले तेल मलकर तब नहलाया जाय, तो उससे बहुत लाभ होता है। बच्चे की गरदन और उसके आस पास का स्थान विशेष रूप से साफ़ करना चाहिए; क्योंकि प्रायः दूध पिलाने में उसका कुछ अंश गरदन पर गिरकर जम जाया करता है। इसके सिवा बगल, कोहनी, रान और कमर का पिछला भाग आदि भी खूब अच्छी तरह साफ़ करना चाहिए।

(९) बच्चे का शरीर जल्दी-जल्दी और पूरी तरह से पोंछना और सुखाना चाहिए। सबसे पहले सिर पोंछना चाहिए और तब नीचे के अंग पोंछने चाहिए। मोटे बच्चों के शरीर में अनेक स्थानों पर और पैरों तथा शरीर के बीच में और जोड़ों आदि पर जो शिकन होती

है, वे भी अच्छी तरह साफ़ की जानी चाहिएँ; क्योंकि प्रायः ऐसे ही स्थानों पर से चमड़े की बीमारियाँ पैदा होती हैं। यदि ऐसे स्थानों पर बोरेसिक पाउडर छिड़क दिया जाया करे तो चमड़े की सूजन आदि का भय कम हो जायगा।

(१०) लड़के के पेशाब करने की जगह पर जो चमड़ा आगे की ओर बढ़ा हुआ रहता है, उसमे की मैल आदि भी साफ़ करनी चाहिए। यदि ऐसा न किया जायगा तो उसमे खुजली होने लगेगी जिससे वह अग सूज जायगा। इसी प्रकार लड़कियों का यह अंग भी अच्छी तरह साफ़ किया जाना चाहिए।

(११) **नाखून**—छोटी अवस्था से ही बच्चों के नाखून बीच बीच मे काटते रहना चाहिए। यदि नाखून न काटे जायँगे और बढ़ जायँगे तो इधर-उधर हाथ पैर पटकने मे उनके कारण बच्चे के चेहरे पर खरोंच लग जायगी।

वस्त्र—शरीर के चमड़े या खाल का जो महत्त्व है, वह ऊपर बतलाया जा चुका है। हम इस बात की ओर भी पाठकों का ध्यान दिलाना आवश्यक समझते हैं कि शरीर की खाल के ठीक तरह से काम करते रहने के लिए उसमें बाहर की हवा लगती रहनी चाहिए जिसमे उसके अन्दर की गन्दगी बराबर बाहर निकलती रहे। बच्चों के लिए कपड़े पसन्द करने के समय इस सिद्धान्त का पूरा ध्यान रखना चाहिए। हाँ ऋतु आदि के प्रभाव की उपेक्षा नही की जा सकती और कपड़े भी बराबर ऋतुओं के अनुसार ही होने चाहिएँ। नीचे हम कुछ ऐसी बातें बतलाते है जिनसे माता-पिता को बच्चों के लिए कपड़े पसन्द करने मे सहायता मिलेगी।

कपड़े ऐसे होने चाहिएँ जो शरीर का ताप न हरण करें—गरमी बाहर न निकलने दें। जाड़े के दिनों मे गरम कपड़ा होना चाहिए पर ऐसा न होना चाहिए कि शरीर को हवा ही न लग सके और उसमें की गन्दगी ही भाप के रूप में बाहर न निकल सके। नहीं तो

गन्दगी को बाहर निकलने का रास्ता न मिलेगा और चमड़ा शरीर का तापमान ठीक रखने का अपना काम न कर सकेगा। इसलिए पहनने के कपड़े ऐसे होने चाहिएँ जिनमें बहुत ही छोटे छोटे सूराख़ हवा आने जाने के लिए हों। बच्चों के शरीर की खाल बहुत ही कोमल होती है और खुरदुरे कपड़ों से उन्हें बहुत कष्ट होता है, इसलिए उनके कपड़े मुलायम होने चाहिएँ। वे तौल में भी हलके होने चाहिएँ जिसमें बच्चों के शरीर पर भार न हो जायँ।

कपड़े ऐसे होने चाहिएँ जिनसे बच्चों को हाथ-पैर डुलाने में कोई कठिनता न हो। उनके तन्दुरुस्ती के साथ बढ़ने-फूलने के लिए उनके अंगों का स्वतन्त्रतापूर्वक हिलना-डुलना बहुत आवश्यक है। इसलिए लम्बे और उलझनेवाले कपड़ों का कभी व्यवहार न होना चाहिए। जो कपड़े छोटे और तंग हो गये हों, वे बच्चों को बड़े होने पर नहीं पहनाने चाहिएँ।

कपड़े ऐसे भी नहीं होने चाहिएँ जिनसे शरीर के किसी अंग पर अनावश्यक रूप से दबाव पड़ता हो। प्रायः लोग बच्चों की छाती पर बहुत से कपड़े लाद देते हैं। ऐसा नहीं होना चाहिए, क्योंकि छाती को फैलने की आवश्यकता होती है। छाती पर कपड़ों का जो भाग पड़ता हो, वह बहुत तंग या कसा हुआ नहीं होना चाहिए; और कपड़े ऐसे नहीं होने चाहिएँ जिन्हें पहनाने या उतारने में कठिनता हो। पिनों की जगह बटनों या फीतों आदि का व्यवहार करना बहुत अच्छा है।

गरमी के दिनों में कपड़े पतले या महीन होने चाहिएँ और ऐसे होने चाहिएँ जिनमें से सूर्य की किरणें बराबर अन्दर आ सकें। स्वास्थ्य के लिए धूप लाभदायक होती है। जिस प्रकार बच्चों को बिना ठीक तरह से कपड़े पहनाये हुए भिन्न भिन्न ताप-मानों में इधर-उधर बहुत घूमने देना हानिकारक है, उसी प्रकार उन्हें बहुत से कपड़ों से लाद देना भी हानिकारक है।

खद्दड़, ऊन और रेशम आदि बहुत शोषक होते हैं और उनमें से हवा बहुत अच्छी तरह आ जा सकती है; इसलिए अन्दर या नीचे पहनने के लिए इन चीज़ों के कपड़े बनाना बहुत अच्छा है।

बच्चों के कपड़े—पेट पर बाँधने की पट्टी—बच्चों के कपड़ों में पट्टी एक बहुत उपयोगी चीज़ है। विशेषतः जाड़े के दिनों में और बच्चे के जीवन के पहले दो तीन महीनों में उसका और भी अधिक उपयोग होता है। इसके बाद पट्टी बाधना बन्द किया जा सकता है। कुछ अवस्थाओं में ऐसा होता है कि बच्चे को ठंढ लग जाने पर उसके पेट में भी कुछ तकलीफ़ होने लगती है। या तो उसे दस्त आने लगते हैं और या कै होने लगती है। ऐसी दशा में उसके पेट पर केवल पट्टी बांधकर ही उसका कष्ट दूर किया जा सकता है। यदि फलालैन या खद्दड़ की पट्टी लेकर दोहरी कर ली जाय तो उससे अच्छी तरह काम चल सकता है। इससे आँतें अच्छी तरह गरम रहेंगी और सरदी होने की सम्भावना कम हो जायगी। पट्टी २० इंच लम्बी और ६ इंच चौड़ी होनी चाहिए। इसमें जोड़ की जगह ऊपर और नीचे दोनों ओर छोटी छोटी सेफ्टी पिनें लगा देनी चाहिएँ। पट्टी बहुत अधिक कसकर नहीं बाँधी जानी चाहिए, नहीं तो इससे आँतों के आवश्यक परिचालन और छाती के नीचे के भाग के परिचालन में बाधा पड़ेगी। आरम्भ के दो तीन महीनों के बाद पेट या पेड़ू पर पट्टी बाँधने की आवश्यकता नहीं रह जायगी। हाँ यदि बच्चा बहुत अधिक दुबला हो और उसके पेड़ू या पेट में इतनी चरबी न हो कि भीतरी अंगों की पूरी पूरी रक्षा कर सके, तो उस दशा में अवश्य पट्टी की कुछ और दिनों तक आवश्यकता होगी। पट्टी ऐसी होनी चाहिए जिससे सारा पेट ढक जाय।

रूमाल—ज्यों ही बच्चा पेशाब करे या पाखाना फिरे और उसका रूमाल गन्दा हो जाय, त्यों ही वह बदल दिया जाना चाहिए। वह रूमाल तुरन्त धो भी डालना चाहिए। इससे बच्चे के चूतड़ों पर

खुजली आदि नही होने पावेगी। ये रूमाल तिकोने होने चाहिएँ और आकार मे बहुत छोटे नही रहने चाहिएँ।

कमीज़ या कुरता ऐसे होने चाहिएँ जिसके बटन आगे की ओर हो। बच्चो के लिए स्वेटर भी एक अच्छा पहनावा है। स्वेटर बदन मे खूब चुस्त आता है और वह जल्दी कही फँसता या फटता नही। बहुत अधिक फैन्सी कपडों के कारण बच्चो को इधर-उधर हिलने-डोलने में कठिनता होती है। प्रायः लोग सुन्दरता के विचार से लड़कों के लिए अधिक ऊँचे निकर बनवाते है। पर ऐसे निकर अच्छे नहीं होते, क्योंकि इनके कारण बच्चो का चमड़ा छिल जाने का भय रहता है। बच्चो के लिए कमरबन्द या पेटी अच्छी नही होती। बच्चों के कपडों मे पिनें लगाना ठीक नही है। जूते भी बहुत समझ बूझकर पसन्द करने चाहिएँ। उनका पंजा चौड़ा होना चाहिए और एड़िया नीची होनी चाहिएँ। जहाँ तक हो सके बच्चो को नगे पैर दौड़ने देना चाहिए, क्योंकि इससे पैरों का स्वाभाविक आकार बना रहता है।

रात के समय बच्चो के कपडे उतार लेने चाहिएँ और उन्हे अच्छी तरह हवा मे सुखा देना चाहिए, जिसमे दिन भर का लगा हुआ उसमे का पसीना सूख जाय और वे फिर दूसरे दिन पहनने के योग्य हो जायँ। मातायें प्रायः यह एक भूल किया करती है कि रात के समय बच्चों पर बहुत अधिक कपड़े लाद देती है। इससे बच्चों को अच्छी तरह नींद नही आती। विशेषतः जो बच्चे बहुत ही नाजुक हों, उन्हे तो कभी रात के समय अधिक कपड़े नहीं पहनाने चाहिएँ।

ऋतु और समय—बच्चो के कपडे ऋतु और समय के अनुसार होने चाहिए। गरमी के दिनों मे कपड़े वज़न मे भी हलके होने चाहिएँ और उनका रग भी हलका होना चाहिए; और उनकी बनावट ऐसी होनी चाहिए जिसमें अन्दर चमड़े तक हवा सहज मे पहुँच सके। इस सम्बन्ध में सबसे अधिक आवश्यक बात यह है कि सबसे नीचे या अन्दर जो कपड़ा हो वह या तो ख़ालिस ऊनी हो

या ऊन और सूत अथवा ऊन और रेशम मिला हुआ हो। जाड़े के दिनों मे बच्चों को बहुत अधिक गरम कपड़े नहीं पहनाने चाहिएँ; क्योंकि अधिक कपड़े पहनने से अधिक पसीना होता है जिससे बच्चे को सरदी या जुकाम हो जाने का भय रहता है। जाड़े मे पैर विशेष रूप से गरम रखने चाहिएँ। उन दिनो टाँगें नंगी नहीं रहनी चाहिए। इससे भी अनेक प्रकार के रोग होने का भय रहता है। गरमी के दिनों में जब हवा गरम रहती है, बच्चो को जहाँ तक हो सके, कम कपड़े पहनाकर इधर-उधर घूमने देना चाहिए। जाड़े में उपर्युक्त गरम कपडे पहनाने से बच्चो की सरदी, जुकाम और खाँसी से रक्षा रहती है और उन्हें कै या दस्त सरीखी पाचन-सम्बन्धी बीमारिया भी नहीं होने पातीं।

बच्चों को नियमित रूप से पाख़ाने और पेशाब की आदत डालना—यह बहुत ही आवश्यक है कि बच्चो को आरम्भ से ही ठीक समय पर पेशाब करने और पाख़ाना फिरने की आदत डाली जाय। जन्म से ही उन्हें ऐसा अभ्यास डालना चाहिए कि वे ठीक समय पर पेशाब किया करें और ठीक समय पर पाख़ाना फिरा करें। इससे केवल बार बार रूमाल धोने की कठिनता से ही रक्षा नहीं होगी, बल्कि बच्चो को नियमित रूप से रहने की शिक्षा भी मिलेगी। बच्चे को ऐसी आदत डालने के लिए इस बात की आवश्यकता होती है कि माता बहुत धैर्य और अध्यवसाय से काम ले। पर यदि वह बच्चे को ऐसी आदत डाल देगी तो बच्चे को क़ब्ज़ियत का रोग नहीं होने पावेगा। यह कब्ज़ियत का रोग ऐसा बुरा होता है कि जब एक बार हो जाता है, तब जन्म भर बहुत कष्ट देता है।

जन्म लेने के बाद दो तीन दिन तक बच्चा दिन रात में तीन या चार बार पाख़ाना फिरता है। जन्म लेने से पहले ही बच्चे की आँतो मे जो मल जमा हो जाता है, वह इन दो तीन दिनो में निकलता

है। यह मल गहरे भूरे रंग का होता है। तीसरे या चौथे दिन पाख़ाने का रंग पीला हो जाता है। आरम्भ में तो एक दो दिन तक नित्य तीन चार बार पाख़ाना होता है और फिर उसके बाद प्रायः दिन मे दो बार पाख़ाना होता है।

माता को उचित है कि वह नित्य बच्चे के पाख़ाने की अवस्था देखकर अपना सन्तोष कर लिया करे। उसे नित्य स्वयं बच्चे का पाख़ाना देखना चाहिए और यह देखना चाहिए कि उसका रंग और रूप आदि जैसा चाहिए, वैसा है या नहीं। यदि उसमें कोई साधारण बात हो तो उसे उस पर ध्यान देना चाहिए। यदि इन सूचनाओं पर ध्यान दिया जाय और इनके अनुसार काम किया जाय तो बच्चों की बहुत सी बीमारियाँ रोकी जा सकती हैं। अपनी मा का दूध पीनेवाले स्वस्थ बच्चों का पाख़ाना या तो नारंगी रंग का होना चाहिए या सुनहले पीले रंग का। वह बहुत अधिक पतला, हरे रंग का या जमा हुआ और थक्के के रूप में नहीं होना चाहिए। यदि बच्चे का पाख़ाना इस प्रकार का हो तो माता को चाहिए कि वह बच्चे का भी और साथ साथ स्वयं अपना भी भोजन बदल दे। बच्चे के पाख़ाने मे किसी प्रकार की दुर्गन्ध भी नहीं होनी चाहिए। अगर उसमे तेज़ और अप्रिय गन्ध हो तो समझ लेना चाहिए कि पाख़ाने मे कुछ ख़राबी है। बच्चो को कभी कभी तो हरे रंग का पाख़ाना हो जाया करता है; पर यदि माँ का दूध पीनेवाले बच्चे को प्रायः हरे रंग का पाख़ाना हुआ करता हो तो डाक्टर से सलाह लेनी चाहिए। माता को यह भी देखते रहना चाहिए कि रूमाल पर बच्चे के पेशाब का दाग तो नही पड़ता है। प्रायः बच्चो के रोने का कारण यह हुआ करता है कि उनका रूमाल पेशाब आदि से तर हो जाता है जिससे उन्हें कष्ट होता है। इसलिए रूमाल थोड़ी थोड़ी देर पर बदले जाने चाहिएँ; क्योंकि पेशाब से तर रूमाल के कारण बच्चों को बहुत जल्दी कष्ट मालूम होने लगता है। बच्चे के शरीर का ऊपरी चमड़ा बहुत नाज़ुक होता है और पेशाब या पाख़ाने आदि

के लगने से उसमें बहुत जल्दी खुजली होने लगती है, जिससे वह बेचैन हो जाता है और खिजलाने लगता है। इसलिए माता को चाहिए कि वह बच्चे के शरीर का ऊपरी चमड़ा खूब अच्छी तरह साफ़ रखा करे। जिन बच्चों की अवस्था कुछ अधिक हो गई हो, माता को चाहिए कि उन्हें नित्य ठीक समय पर पाख़ाने जाने के लिए विवश किया करें, चाहे उन्हें पाख़ाना आता मालूम हो या न हो। उन्हें सवेरे के समय पाख़ाने जाने के लिए कहना बहुत अच्छा है। इसके बाद उनका पाख़ाना देख लेना चाहिए और यह भी समझ लेना चाहिए कि उसमें कोई असाधारण बात तो नहीं है। भारत में स्त्रियाँ प्रायः बच्चों को अपने पैरों पर बैठाकर पाख़ाना फिराती हैं। यह ढंग विलायती कमोड पर पाख़ाने फिराने के ढंग से कहीं अच्छा और स्वाभाविक है। भारतीय ढंग में यह विशेषता है कि बच्चे की दोनों जाँघें आकर पेट के साथ सट जाती है जिससे पेट के उन दो दुर्बल भागों को सहारा मिलता है जहाँ से आँतें उतरती हैं। जिस बच्चे के पेट की भीतरी दीवार कमज़ोर हो, उसे जब इस प्रकार का सहारा मिलेगा तो उसे आँतें उतरने का उतना भय न रह जायगा। पर कमोड पर पैर लटकाकर बैठनेवाले कमज़ोर लड़कों को इस प्रकार आँतें उतरने का कहीं अधिक भय रहेगा।

माता को इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि ज़बरदस्ती पाख़ाना फिरने के लिए बच्चा बहुत अधिक ज़ोर न लगावे या न काँखे। उसे बच्चे के सिर पर सवार भी नहीं रहना चाहिए और यह नहीं कहना चाहिए कि अगर तुम कुछ भी पाख़ाना न फिरोगे तो मार खाओगे। यदि पाख़ाना होने को होगा, तो बहुत ही थोड़ा ज़ोर लगाने से हो जायगा। और यदि उस समय पाख़ाना न होने को होगा और उसके लिए बहुत ज़ोर लगाया जायगा, तो उससे लाभ तो कोई होगा ही नहीं, हाँ हानि बहुत कुछ हो सकती है।

पेशाब के सम्बन्ध में ध्यान रखना—बच्चों को इस बात की आदत डालनी चाहिए कि वे दिन में कई बार नियमित समय पर पेशाब किया करें। माता को इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि बच्चा सोने से पहले एक बार पेशाब कर लिया करे।

बिस्तर पर पेशाब करना—दुर्बल बच्चे प्रायः बिस्तर पर ही पेशाब कर दिया करते हैं। पर यदि बच्चों को बहुत ही छोटी अवस्था में अच्छी तरह शिक्षा दी जाय तो फिर वे शायद ही कभी बिस्तर पर पेशाब करेंगे। जो बच्चे सोये सोये बिस्तर पर पेशाब कर दिया करते हों, उन्हें खुली हवा में कसरत करने की आवश्यकता होती है। इससे उनका स्वास्थ्य सुधरेगा और यह आदत छूट जायगी। ऐसे बच्चों को बहुत ही सादा भोजन दिया जाना चाहिए। यदि इतनी बातों का ध्यान रखने पर भी उनकी अवस्था में सुधार न हो, तब डाक्टर को दिखलाना चाहिए। हम यह भी बतला देना चाहते हैं कि बच्चों का यह दोष दूर करने के लिए उन्हें कभी मारना पीटना नहीं चाहिए। इससे बच्चों की आदत तो छूटेगी ही नहीं, उलटे वे और अधिक दुर्बल तथा डरपोक हो जाते हैं और उनका यह दोष पहले से और भी बढ़ जाता है।

मुँह की रक्षा—जब तक बच्चे के दाँत न निकलें, तब तक उसके मुँह की कोई विशेष रक्षा करने की आवश्यकता नहीं होती। उस समय उसका मुँह धोना या पोंछना बिलकुल अनावश्यक होता है। इससे लाभ कुछ भी नहीं होता, हाँ हानि अवश्य होती है। वह बच्चे के मुँह पर जितना ही कम ध्यान देगी, उसे वहाँ उतनी ही कम खराबी दिखाई देगी। बच्चे का मुँह साफ़ रखने के लिए माता को चाहिए कि वह उसे दूध पिलाने से पहले और बाद अपने स्तनों की घुंडियाँ अच्छी तरह धो डाला करे। यदि बोतल या शीशी से दूध पिलाया जाता हो तो उसका रबरवाला मुँह पानी में उबाल देना चाहिए। यदि इन सब बातों का ध्यान रखा जायगा तो बच्चे के मुँह

में कोई रोग आदि न होगा। बड़ी अवस्था के बच्चो के लिए स्वास्थ्य के उन्ही नियमों के पालन की आवश्यकता होती है जिनका पालन बड़ी अवस्था के लोग करते है। स्थायी दांतो का स्वस्थ और ठीक रहना बहुत कुछ दूध के दांतों के स्वस्थ रहने पर ही निर्भर करता है। इसलिए माता को दूध के दातों पर पूरा पूरा ध्यान देना चाहिए। इसके सिवा दूध के दात ही स्थायी दांतों की नीव होते है और उनका ढंग निश्चित करते है, इसलिए जितने अधिक समय तक हो सके, दूध के दांतो को बना रहने देना चाहिए। बच्चे का मुंह नियमित रूप से तो साफ़ कराना ही चाहिए, पर साथ ही उससे खूब अच्छी तरह कई कुल्ले कराने चाहिएँ जिससे दांतों की सतह के ऊपर खाने पीने की चीज़ों का जो अंश जमा हुआ हो, वह भी बाहर निकल जाय।

बच्चों की नींद—न सोने या कम सोनेवाले बच्चो की अपेक्षा अधिक सोनेवाले बच्चे जल्दी बढ़ते और बलवान् होते है। बच्चे का जीवन गरमी, भोजन और नीद पर ही निर्भर करता है। यदि इन तीनों मे से किसी एक मे कोई बाधा पड़ती है तो बाकी दोनों बातो मे भी आपसे आप बाधा पड़ जाती है। इसलिए माता को सदा ध्यान-पूर्वक यह देखते रहना चाहिए कि बच्चा अच्छी तरह सोता है या नही। और यदि वह अच्छी तरह न सोता हो तो उसके न सोने के कारण का पता लगाना चाहिए।

साधारणतः कितनी देर तक सोना चाहिए—जन्म लेने पर दो या तीन दिनों तक बच्चा प्रायः हर दम सोया करता है। और पहले सप्ताह मे वह चौबीस घंटों मे से प्रायः बाईस घंटे सोया करता है। इस बीच मे वह केवल भूख, बेचैनी और पीड़ा आदि के कारण ही जागता है। प्रायः वह दूध पीने के लिए जागता है और दूध पी कर फिर सो जाता है। आरम्भ के तीन महीनों मे बच्चे को नित्य दिन रात मे प्राय. इक्कीस घंटे सोना चाहिए। उसके बाद के तीन

महीनों मे दिन रात मे उन्नीस घंटे और छः महीने की अवस्था होने पर सोलह घंटे नित्य सोना चाहिए। एक से पाच वर्ष तक की अवस्था के बच्चों को दिन रात मे चौदह घंटे सोने की आवश्यकता होती है। इससे पाठकों को यह पता चल गया होगा कि बच्चा जितना ही छोटा होता है, उसे उतना ही अधिक सोने की आवश्यकता होती है।

उचित समय से कम सोना—बच्चों को जितने समय तक सोना चाहिए, यदि वे उससे बहुत कम सोयें तो यह कहा जाता है कि उन्हें नींद न आने का या उन्निद्र रोग हो गया है। इसके कारण का तुरन्त पता लगाना चाहिए और उसका इलाज करना चाहिए। नही तो उसका स्वास्थ्य कुछ समय के लिए अथवा सम्भव है कि सदा के लिए ख़राब हो जाय।

बच्चे बहुत जल्दी और सहज मे सो जाते हैं। उन्हें अधिक अवस्थावाले आदमियों की तरह नींद की प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती। जब बच्चे के साधारण जीवन-क्रम मे किसी प्रकार का विघ्न पड़ता है, तभी उसे नींद न आने का रोग होता है। इसलिए बच्चे को नियमित रूप से और ठीक समय पर सोने की आदत डालनी चाहिए; और माता को चाहिए कि वह बच्चे को ऐसी आदत डालने पर ज़ोर दिया करे।

(१) बच्चों को नींद न आने के कारण—यदि बच्चे को दूध ठीक तरह से न पचता हो, उसकी ठीक तरह से व्यवस्था न की जाती हो, उसके शरीर मे पेशाब या पाख़ाना आदि लगा हो या वह ऐसी अवस्था मे हो कि उसे कष्ट पहुँचता हो तो उसे नींद नही आती। यदि वह मा का दूध पीता हो तो भूखे होने के कारण भी उसे नींद नहीं आती।

(२) कभी कभी ऐसा होता है कि बच्चे के सोने के कमरे मे बहुत गरमी होती है। इससे भी बच्चों को ठीक तरह से नींद नहीं आती। इसलिए कमरे का तापमान मध्यम और सुखद होना चाहिए।

(३) कमरे मे खूब अच्छी तरह हवा आना बहुत आवश्यक है।

(४) यदि कमरे में अँधेरा न होगा तो भी बच्चे को नींद न आवेगी।

(५) जिस कमरे मे बच्चा सोता हो, यदि उसमे बहुत से आदमी मिलकर बातचीत करेंगे और शोर मचावेंगे तो भी उसे नींद न आवेगी। इसलिए ऐसा नही करना चाहिए।

(६) प्रायः बच्चे प्यास लगने के कारण भी जाग उठते हैं; पर उनकी इस आवश्यकता पर बहुत ही कम ध्यान दिया जाता है। बच्चा तो प्यास के मारे बार बार रोता है और माँ उसके मुँह मे छाती देती है। यदि ऐसे समय उसे थोड़ा सा ताज़ा ठंढा पानी पिला दिया जाय तो वह सन्तुष्ट हो जाता है। यदि बच्चे को दूध पिलाने से पहले उसके सामने थोड़ा पानी रखा जाय तो वह शायद ही कभी पानी पीने से इनकार करेगा।

(७) कुछ मातायें अपने काम के सुभीते के विचार से बच्चो को उनके ठीक समय पर सोने नहीं देतीं और उसके कुछ देर बाद सुलाती हैं। इससे भी बच्चो की नींद जाती रहती है। ऐसे बच्चो का स्वभाव बहुत चिड़चिड़ा हो जाता है और वे सहज मे शान्त नही होते।

(८) जिस बच्चे को ठीक तरह से और नियत समय पर दूध नहीं पिलाया जाता वह भी प्रायः असमय ही जाग उठता है। पर जिस स्वस्थ बच्चे को बराबर ठीक समय पर दूध पिलाया जाता है और जिसे ठीक तरह से दूध पीने और सोने आदि की शिक्षा दी जाती है, वह बराबर ठीक समय पर सो जाया करता है।

बच्चों को ठीक तरह से सोने की आदत डालने का पूरा प्रयत्न—प्रायः मातायें और दाइयाँ बच्चों को झूला झुला कर सुलाया करती हैं। पर झूला या पालना बच्चो में स्नायु-सम्बन्धी दुर्बलता उत्पन्न करता है और उसका कभी व्यवहार नहीं होना चाहिए। उसके कारण बच्चे को पूरी और सुख देनेवाली नींद नहीं आती।

इसके सिवा जब बच्चे को पालने मे या झूले पर सोने की आदत पड़ जाती है, तब फिर वह बिना उसके सोता ही नही। आगे चल कर इससे माता या दाई को बहुत अधिक कष्ट होता है, इसलिए बच्चे को पालने पर झुला कर कभी नहीं सुलाना चाहिए।

कुछ मातायें बच्चों को सुलाने के लिए थोड़ी सी अफ़ीम दे दिया करती है। उनका मतलब यह होता है कि बच्चा जाग कर हमे कष्ट न पहुँचावे, हमें भी आराम करने को मिले। इससे बहुत अधिक हानि होती है। बच्चे को सुलाने के लिए जो अनेक प्रकार के शरबत आदि आते है, उनका भी कभी व्यवहार नहीं करना चाहिए।

बच्चों को सोने मे मक्खियां भी कष्ट देती है। इससे बचाने के लिए उनके मुँह पर रूमाल नहीं डालना चाहिए बल्कि जाली का कोई टुकड़ा डाल देना चाहिए। रूमाल की अपेक्षा जाली मे से बच्चा सहज मे सांस ले सकता है।

प्रायः माता बच्चे को दूध पिलाती पिलाती सो जाती है। थोड़ी देर बाद अबोध बच्चे के मुँह से छाती की घुंडी तो छूट जाती है और वह बिछौने पर के कपड़ों मे अपना सिर गड़ा कर पड़ जाता है। जो स्त्रियां शराब आदि पीती है, वे ऐसी अवस्था में सोकर उठने पर देखती है कि दम घुटने के कारण बच्चा मर गया है। जब तक बच्चा दूध पीना समाप्त न कर ले, तब तक ऐसी माताओं को स्वयं कभी नही सोना चाहिए। उचित यह है कि बच्चे के लिए एक अलग छोटी खटोली का प्रबन्ध कर दिया जाय जिसमे उसे काफ़ी ताज़ी हवा मिलती रहे। इससे बच्चे के दबने या कुचले जाने का भी भय न रह जायगा। एक ही बिस्तर पर दो बच्चों को एक साथ नही सुलाना चाहिए; क्योंकि बहुत पास पास और मुँह के साथ मुँह सटा कर सोने से दोनो को उतनी अच्छी और मीठी हवा नहीं मिलेगी जितनी मिलनी चाहिए।

प्रायः मातायें बुरे बुरे आदमियों या हौवा आदि का नाम लेकर बच्चों को डराया करती है। ऐसा कभी नहीं करना चाहिए।

बच्चे के दाँत निकलना—साधारण नियम यह है कि जब बच्चा छः या सात महीने का हो जाता है, तब उसके दाँत निकलने लगते है। पर कुछ बच्चो के दाँत इसके और भी बाद निकलते हैं। पहले अस्थायी रूप से जो दाँत निकलते हैं, वे संख्या मे बीस होते हैं और दूध के दाँत कहलाते है; और प्रायः तीसवें महीने के अन्त तक ये सब दाँत निकल आते हैं। छठे वर्ष मे दूध के दाँत टूटने लगते हैं और उनके स्थान पर स्थायी दाँत निकलने लगते हैं। पहले या दूध के दाँत प्रायः दो दो साथ निकलते है।

भिन्न भिन्न दाँतों के निकलने का औसत समय और क्रम इस प्रकार है—

(१) नीचे के दो बीचवाले सामने के दांत . .. ..६ से ९ महीने तक
(२) ऊपर के चार बीचवाले सामने के दांत .८ ,, १२ ,, ,,
(३) नीचे के दो आस-पास के दांत और
चार अगली डाढ़े ... .१२ ,, १५ ,, ,,
(४) चार कुचलियाँ .. . . . . १८ ,, २४ ,, ,,
(५) चार पिछली दाढ़े . . २४ ,, ३० ,, ,,

० ० ० ० ०

एक वर्ष की अवस्था मे बच्चे के ६ दांत होने चाहिएँ
डेढ़ वर्ष ,, ,, १२ ,, ,, ,, ।
दो वर्ष ,, ,, १६ ,, ,, ,, ।
ढाई वर्ष ,, ,, २० ,, ,, ,, ।

इन दाँतो के निकलने के क्रम मे कभी कभी कुछ अन्तर भी पड़ जाता है।

यदि बच्चे का स्वास्थ्य अच्छा हो तो उसे दाँत निकलने के समय कोई कष्ट नही होता। प्रायः दाँत निकलने के समय बच्चो को कुछ बुख़ार हो जाया करता है। यदि यह बुख़ार २४ घंटे से अधिक रहे और उसके बाद बढ़े तो डाक्टर को दिखलाना चाहिए।

दाँत निकलने में कष्ट—साधारणतः दांत निकलने के समय बच्चों को कोई कष्ट नहीं होता। पर कभी कभी कुछ ऐसे लक्षण भी दिखाई पड़ते हैं जिनसे यह सूचित होता है कि बच्चे के मुँह में किसी प्रकार का कष्ट है या उसका स्वास्थ्य बिगड़ रहा है।

बच्चों को अनेक प्रकार के जो साधारण रोग हुआ करते हैं, उनके सम्बन्ध में पुराने ढङ्ग के चिकित्सक प्रायः यही कहा करते हैं कि ये रोग दाँत निकलने के कारण ही होते है। पर आज-कल के डाक्टरों का विचार यह है कि दांत निकलना एक बिलकुल स्वाभाविक कार्य्य है और उससे बच्चे के स्वास्थ्य में कोई परिवर्तन नहीं होता। यदि दाँत निकलने के समय बच्चे का स्वास्थ्य कुछ बिगड़ जाय तो यह समझना चाहिए कि दांत निकलने के साथ ही साथ उसे कोई और रोग भी हो रहा है और यह उसी का लक्षण है। आज-कल पढ़े-लिखे लोगों का भी विश्वास है कि दाँत निकलने के कारण बच्चे को बुखार, हलकी खासी या दस्तों आदि की शिकायत हो ही जाया करती है। इसलिए पहले कई दिन तक लोग इन रोगो का कोई इलाज नहीं करते और यही समझते है कि ये सब अस्थायी लक्षण है और दांत निकलने के कारण ही उत्पन्न हुए हैं।

(१) उपयोगी सूचनायें—दांत निकलने के समय बच्चे के मुँह से प्रायः लार टपकती है। ऐसी अवस्था में उसकी छाती पर गद्दी बाँध देनी चाहिए और जब एक गद्दी भीग जाय, तब दूसरी बदल देनी चाहिए।

(२) यदि हर बार दात निकलने के समय बच्चे को कोई कष्ट होता हो तो उसकी आबहवा बदल देनी चाहिए, उसे किसी दूसरे स्थान पर ले जाना चाहिए। इससे उसका स्वास्थ्य सुधर जायगा और दाँत निकलने के समय उसे जो कष्ट होता है, उससे वह बच जायगा।

(३) यदि बच्चा कुछ बीमार हो जाय तो केवल दाँत निकलने को ही उसका एक-मात्र कारण नहीं समझ लेना चाहिए। दाँत निकलने के कारण मसूड़ों मे जो दर्द होता है, यदि उस दर्द के कारण बच्चा

दूध न पी सकता हो तो छातियों मे से दूध निकालकर चम्मच की सहायता से उसे पिलाना चाहिए।

(४) बाज़ार मे कई तरह के शरबत और चूर्ण बिक्ते हैं जिनके सम्बन्ध में यह कहा जाता है कि इनके व्यवहार से बच्चो के दाँत बहुत सहज में निकल आते हैं और उन्हें कोई कष्ट नहीं होता। ऐसी दवाओ का कभी व्यवहार नहीं करना चाहिए। जिस दवा के बारे में यह पता ही न हो कि वह किन किन चीज़ो से बनी है, अपने बच्चे पर कभी उसकी परीक्षा मत करो।

चेचक का टीका और उसका इतिहास—जब पहले लोगो को यह पता चल गया कि एक बार चेचक निकल चुकने पर आदमी सदा के लिए इस रोग से बच जाता है, तब संसार के भिन्न भिन्न भागों मे लोग इस बात की जाँच करने लगे कि कौन सा ऐसा उपाय है जिससे कृत्रिम रूप से इस रोग का विष शरीर में पहुँचा कर सदा के लिए मनुष्य की इस रोग से रक्षा की जा सकती है। वियना के प्रो० क्लेमेन्स वान पिर्केट साहब लिखते हैं कि चेचक का टीका लगाने का सबसे पुराना ढङ्ग वह है जो बहुत आदि-काल से भारत के ब्राह्मण (भारतवासी) काम में लाते रहे हैं। उनका कथन है—"उनके यहाँ का चेचक के टीके का ढङ्ग हमारे आज-कल के ढङ्ग से बहुत कुछ मिलता-जुलता है और चोन, अरब तथा सरकेशियन जातियों मे जो ढङ्ग प्रच-लित है, उनकी अपेक्षा वह कहीं अधिक ध्यान देने योग्य है। इँगलैंड के जेनर नामक एक चिकित्सक ने अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध मे चेचक के टीके का वह ढङ्ग निकाला जो इस समय संसार के सभी सभ्य देशो में माना और काम मे लाया जाता है। इस महान् आविष्कार के लिए मानव-जाति पर इस महान् चिकित्सक का जितना अधिक और स्थायी ऋण है, उतना शायद और किसी का नहीं है। चेचक के टीके के सम्बन्ध में अब तक माता-पिताओं मे अनेक प्रकार के मिथ्या भ्रम फैले हुए है। पर जब बच्चे को यह रोग हो जाता है और उसके प्राण

संकट में पड़ जाते है, तब उन लोगों को तुरन्त अपनी भूल मालूम हो जाती है। यद्यपि चेचक के टीके के कारण मानव-जाति का बहुत अधिक कल्याण हुआ है; पर फिर भी लोग ठीक समय पर बच्चे को चेचक का टीका नहीं लगवाना चाहते। इससे बच्चे की जान पर आ बनने का भय होता है। यदि एक वर्ष से कम अवस्था के बच्चे को चेचक का टीका न लगा हो और इस बीच मे उसे छोटी माता निकल आवे, तो यह बात प्रायः निश्चित है कि वह मर जायगा। और पाँच वर्ष से कम अवस्था वाले ऐसे बच्चों में से प्रायः आधे बच्चे मर जायँगे। जो थोड़े से बच भी रहेगे, वे शायद अन्धे हो जायँगे। केवल टीका लगाने से ही चेचक से रक्षा हो सकती है।

यदि पास-पड़ोस मे किसी को माता या चेचक निकले तो वहाँ के सब लोगो को फिर से टीका लगवाना चाहिए। यहाँ तक कि जो लोग पहले टीका लगवा चुके हों, उन्हे भी लगवा लेना चाहिए। उस समय जो कुछ थोड़ी बहुत झंझट होगी, उसके सिवा फिर उन्हे और कोई झंझट न सहनी पड़ेगी। अस्पतालों में जो डाक्टर और दाइयाँ आदि चेचक के रोगों की चिकित्सा या सेवा-शुश्रूषा करती हैं, उनकी रक्षा केवल टीका लगवाने से और दोबारा टीका लगवाने से ही होती है।

यदि पास में कहीं किसी को चेचक निकली हो तो बच्चे को जहां तक जल्दी हो सके, टीका लगवा देना चाहिए। यदि बच्चे का स्वास्थ्य ठीक न हो और पास-पड़ोस में कहीं चेचक भी न फैली हो तो टीका लगवाने का काम तब तक टाला जा सकता है जब तक बच्चा पूरी तरह से अच्छा न हो जाय।

चेचक के टीके से होनेवाली बीमारी—टीका लगवाने के पाँचवें दिन बच्चे को कुछ थोड़ा सा ज्वर चढ़ता है और उसके बाद तीन चार दिन तक बना रहता है। वह कुछ क्रोधी और चिड़चिड़ा हो जाता है और रात को चैन से नहीं सोता। कभी कभी कुछ दस्त भी आने लगते हैं और नवे या दसवें दिन उसकी बाँह कुछ सूज आती है;

वह स्थान कुछ लाल हो जाता है और जलने लगता है। टीके के निशान के चारों ओर एक इंच या इससे कुछ अधिक दूरी तक यह सूजन बढ़ती है। पर धीरे धीरे ये सब बातें जाती रहती हैं और यह डर की कोई बात नहीं होती। यदि गरदन या बगल की गिल्टियाँ कुछ बढ़ जायँ तो भी कोई चिन्ता नहीं करनी चाहिए। ज्यों ही शरीर में से टीके का ज़ोर कम होगा, त्यों ही गिल्टियाँ भी अपने पुराने रूप में हो जायँगी। इसलिए जब तक डाक्टर कोई दवा देने के लिए न कहे, तब तक माताओं को उचित है कि वे बच्चे को इस बीच में कोई दवा न दें। उन्हें केवल इतना ही ध्यान रखना चाहिए कि कोई गन्दी चीज़ टीके के निशानों तक नहीं पहुँचनी चाहिए और बच्चे की बाँह पर कोई चोट-चपेट नहीं लगनी चाहिए। ऊपर जो खुरंड जमे हुए हों, उन्हें कभी छेड़ना नहीं चाहिए। वे आप से आप गिर जायँगे। जब बच्चा दस वर्ष का हो तब या उसके कुछ ही बाद उसे फिर से टीका लगवा देना चाहिए।

बच्चे का स्नायु-सम्बन्धी स्वास्थ्य—मस्तिष्क का अच्छी तरह से विकास होने—बढ़ने-फूलने—के लिए इस बात की आवश्यकता होती है कि आस-पास की परिस्थिति बहुत ही शान्तिपूर्ण और सुखद हो और कोई ऐसी बात न होने पावे जिससे अनावश्यक उत्तेजना या आवेश उत्पन्न हो।

कुछ लोग बच्चों के साथ खेलते समय उन्हें बहुत अधिक हँसाते हैं और अनेक प्रकार के दृश्य दिखाकर, शब्द सुनाकर और चेष्टाएँ कर के उन्हें इतना उत्तेजित करते हैं कि वे किलकारी मारकर हँसते और चिल्लाने लगते हैं जिससे ऊपर से देखने से यह जान पड़ता है कि वे प्रसन्न हो रहे हैं। ऐसी बातों से माता-पिता और देखनेवाले दूसरे लोगों को भले ही बहुत आनन्द आता हो, पर यह निश्चय है कि इन बातों से बच्चों के स्नायुओं पर बहुत ही हानिकारक प्रभाव पड़ता है। विशेषतः यदि सन्ध्या के समय इस प्रकार की बातें की जायँ तो इनसे

बच्चों को और भी अधिक हानि पहुँचती है। बच्चों को प्रायः शान्त रखना ही अच्छा होता है और कम से कम बच्चे की अवस्था के पहले वर्ष में तो इस प्रकार के खेल-तमाशे आदि बिलकुल ही न होने चाहिएँ। (होल्ट का मत)

बच्चे को चरित्रवान् बनाना—बहुत कम माता-पिता ऐसे होते हैं जो बहुत बचपन में ही बच्चे की मानसिक स्थिरता की नींव रखने की आवश्यकता समझते हैं। इस प्रकार की मानसिक साम्य स्थिति पर ही आगे चलकर बच्चे के चरित्र की दृढ़ता निर्भर करती है। जैसा कि डा० गेसेल ने कहा है—"जिस प्रकार नींव और चौखटे आदि से किसी मकान का स्वरूप निश्चित होता है, ठीक उसी प्रकार बच्चे के जीवन के आरम्भ के वर्षों में उसका चरित्र निश्चित होता है।" आरम्भ के छः वर्षों मे ही बच्चे की सब आदतें बन या बिगड़ जाती है और इन्हीं आदतों से चरित्र बनता या बिगड़ता है। प्रायः माता-पिता ये बातें जानते ही नहीं; और यदि उनमे से कुछ लोग ये बातें जानते भी है तो वे भी ऐसी महत्त्व की बात की ओर विशेष ध्यान नहीं देते। पर यह बात ऐसी है जो बच्चे के स्वस्थ और पूर्ण विकास का एक बहुत बड़ा अंग है। यदि वे यह समझते हों कि चरित्र सुधारने की शिक्षा बच्चे को कहीं और जगह से या बाहर से मिलेगी तो वे बड़ी भूल करते हैं। बच्चे के चरित्र पर ही उसका भावी कल्याण बहुत कुछ निर्भर करता है और उसका यह चरित्र केवल उसके माता-पिता ही बना सकते है। बच्चे के अगले जीवन मे जो सफलता या विफलता होती है, यदि उसके मूल का पता लगाया जाय तो वह मूल घर के आरम्भिक जीवन की शिक्षा मे ही मिलेगा और उसके लिए मुख्य रूप से माता-पिता ही उत्तरदायी हैं। इस विषय में माता पिता को बच्चों के सामने स्वयं एक बहुत अच्छा आदर्श उपस्थित करना चाहिए। बच्चों का चरित्र बनाने में यह बात अधिक महत्त्व की है। उसे आरम्भ से ही आत्मगौरव, आज्ञाकारिता, आत्म-निर्भरता, सत्यता, स्वार्थत्याग और

सेवा-भाव आदि का बहुत बड़ा महत्त्व बतलाना चाहिए। इसके विपरीत अनाज्ञाकारिता, आत्म-निरोध का अभाव, स्वार्थपरता और इसी प्रकार की दूसरी बुरी प्रवृत्तियों का बिलकुल आरम्भ मे ही नाश कर देना चाहिए। बच्चे के चरित्र का विकास करने मे घर के उदाहरण का बहुत बड़ा प्रभाव पड़ता है। घर की शान्ति का भी कुछ कम महत्त्व नही है। इससे बच्चे मे मन की शान्ति और सामंजस्य आदि का भाव उत्पन्न होगा। पर यदि घर मे माता-पिता और दूसरे सम्बन्धियों आदि मे प्रायः लड़ाई-झगड़ा हुआ करता हो तो उससे बच्चे मे भी अनिश्चितता और लापरवाही आदि बातें आ जाती है। यदि बच्चों को बराबर झिड़की-घुड़की मिला करे तो वे हर एक बात का दुर्भाव अपने मन में रखने लगते है। इससे वे बहुत दुःखी रहने लगते है और उनकी जीवनी शक्ति बहुत घट जाती है, जिसके कारण आगे चलकर कभी कभी उनका मस्तिष्क बहुत दुर्बल हो जाता है। बच्चे के केवल शारीरिक कल्याण का ही ध्यान रखने से काम नहीं चलता, बल्कि माता-पिता का यह भी कर्त्तव्य है कि वे उसकी आत्मिक आवश्यकताओं की भी पूर्त्ति किया करें। बचपन मे ही इन सब बातों का पूरा पूरा ध्यान रखने की आवश्यकता होती है जिसमे आगे चलकर उसका बहुत अच्छा और दृढ़ मानसिक तथा नैतिक विकास हो। बच्चे की निरीक्षणशक्ति, विवेक, स्मरणशक्ति, इच्छाशक्ति तथा उसके भावों और आत्मा को बलवान् बनाना चाहिए जिसमे वह अच्छी और सुन्दर बातों का आदर करके उन्हे ग्रहण कर सके। बच्चे की आत्मिक शिक्षा के अन्तर्गत यही सब बातें आती है।

बच्चे का चरित्र बनाने मे घर के बाद दूसरा महत्त्वपूर्ण-प्रभाव परिस्थितियों का पड़ता है। यह एक बहुत प्रसिद्ध कहावत है कि किसी आदमी का अच्छा या बुरा होना उसके संगी-साथियों से ही जाना जाता है। इसलिए माता-पिता का यह एक बहुत महत्त्व-पूर्ण कर्त्तव्य हो जाता है कि वे ध्यानपूर्वक उन परिस्थितियों आदि को देखते रहें जिनमे

घर के प्रभाव-क्षेत्र के बाहर बच्चा रहता है। अर्थात् वे उसके संग-साथ आदि पर पूरा पूरा ध्यान रखें। यदि वह अबाधित रूप से बुरे लड़कों के साथ रहने दिया जायगा तो घर की शिक्षा के सभी अच्छे प्रभाव नष्ट हो जायँगे और उसके चरित्र के उचित विकास मे बहुत बड़ी बाधा पड़ जायगी।

यदि सभी बातो मे बच्चे को मनमाना काम करने दिया जायगा तो फिर न तो उसमे आत्मनिरोध की शक्ति रह जायगी और न अपने से बड़े और श्रेष्ठ पुरुषो के प्रति उसके मन मे कोई आदरभाव ही रह जायगा। बड़े होने पर ऐसे बच्चो से माता-पिता को बहुत ही कष्ट और सन्ताप पहुँचता है। इसलिए यह बात बहुत ही आवश्यक है कि माता-पिता आरम्भ से ही इस सम्बन्ध मे बच्चे पर पूरा पूरा नियन्त्रण रखें। बच्चे को सुधारते समय उसे कभी झिड़की-घुड़की या मारने-पीटने की धमकी नही देनी चाहिए। किसी ने बहुत ठीक कहा है कि बच्चो को ठीक तरह से शिक्षा आदि देने के लिए यह बहुत ही आवश्यक है कि उसके माता-पिता बहुत ही स्वच्छतापूर्वक रहें, उसे बराबर सज्जन और योग्य बनाने का प्रयत्न करें, उसके खान-पान की बहुत बुद्धिमत्तापूर्वक व्यवस्था करें और दृढ़तापूर्वक उनका परिचालन करें।

बुरी आदतें

आरम्भिक सूचनायें—जीवन के आरम्भिक वर्षों मे और विशेषतः आरम्भ के छः वर्षों मे ही बच्चों की आदते बनती बिगड़ती है। अच्छी आदतो की अपेक्षा बुरी आदते जल्दी पड़ जाती है। इस बात का ध्यान रखना माता-पिता का कर्त्तव्य है कि आरम्भ मे ही बच्चों को बुरी आदते न पड़ जायँ। इस प्रकार की बुरी आदतों को रोकने का सबसे अच्छा उपाय यही है कि उन आदतों का विकास ही न होने

दिया जाय—उन्हे आरम्भ मे ही नष्ट कर दिया जाय। यही बात हम इस प्रकार भी कह सकते है कि ज्यो ही बच्चे मे कोई बुरी आदत देखी जाय, त्यो ही वह रोक दी जानी चाहिए।

जो बच्चा बिलकुल अकेला रहता है, वह प्रायः ख़राब आदते सीख लेता है। पर जो बच्चा और कई बच्चो के साथ रहता है, वह प्रायः आमोद-प्रमोद मे लगा रहता है और इसलिए उसके बुरी आदतें सीखने की कम सम्भावना रहती है। इसलिए माता पिता को उचित है कि वे ऐसी व्यवस्था करें जिसमे उनके बच्चो को अच्छे लड़कों की सोह-बत में रहने का अवसर मिले और वे अच्छी अच्छी बातो मे लगे रहे। बच्चों को सुधारने की दृष्टि से मारना पीटना या और कोई दण्ड देना न तो उचित ही है और न आवश्यक ही। पर हां कुछ ऐसे अवसर भी आ सकते हैं जब कि उन्हे केवल सलाह देने की अपेक्षा कुछ अधिक कठोर उपायो का अवलम्बन करना पड़ता है। पर माता-पिता के लिए सबसे अच्छा उपाय यही है कि वे बच्चो को प्रेमपूर्वक और सतर्क होकर ही सब बाते समझावें बुझावे।

मिट्टी खाना—प्रायः बच्चे मिट्टी खाते हुए देखे जाते है। पुरानी बदहज़मी या बार बार मलेरिया ज्वर के आक्रमण के कारण जिन बच्चो का स्वास्थ्य नष्ट हो जाता है, उनमे यह आदत बहुत अधिक देखी जाती है। पर कुछ बच्चे ऐसे भी होते है जो बिलकुल स्वस्थ होते हुए भी मिट्टी खाते है। यदि आरम्भ मे ही इस आदत को रोकने का प्रयत्न न किया जाय तो यह आदत महीनो क्या बल्कि बरसों तक बनी रहती है। मिट्टी खाने से बच्चे का चेहरा पीला पड़ जाता है, वह बोदा हो जाता है और उसका पेट बढ़ जाता है। स्वस्थ बच्चों के चेहरे पर जो चमक और गुलाबी रङ्गत होनी चाहिए, उसका उसमे अभाव होता है। जो बच्चे मिट्टी खाया करते हैं, उनकी भूख बिलकुल मारी जाती है, उन्हे ठीक तरह से पाख़ाना नहीं होता और कब्ज़ियत बनी रहती है। ऐसे बच्चों का स्वभाव भी चिड़चिड़ा हो

जाता है। उन्हें अच्छी तरह से नींद नहीं आती और वे सोये सोये चौंक उठते हैं। उनके शरीर का वज़न साधारणतः बढ़ने के बदले दिन पर दिन घटने लगता है। माताओं को उचित है कि जब वे अपने बच्चे में मिट्टी खाने की आदत देखें, तब डाक्टर से उसके स्वास्थ्य की परीक्षा करावें।

इस बुरी आदत से कोई बहुत भारी हानि नहीं होती, क्योंकि साधारणतः चिकित्सा करने से यह दूर हो जाती है। यह आदत प्रायः उन्हीं बच्चों को पड़ती है जो अपने आस-पास के स्थानों को पसन्द नहीं करते; इसलिए यदि उन्हें पुराने स्थान से हटाकर किसी नये और अच्छे स्थान पर रखा जाय तो यह आदत जल्दी छूट जाती है। लड़के को सदा प्रसन्न और किसी काम में लगाये रखना चाहिए जिसमे उसे मिट्टी खाने का अवसर ही न मिले। ज्यो ही बच्चे मे यह आदत देखी जाय, त्यों ही यदि उसे इस प्रकार रोकने का प्रयत्न किया जाय तो यह जल्दी छूट जाती है। पर यदि यह आदत महीनों बनी रही तो फिर उसे छुड़ाना सहज नहीं होता। यह आदत प्रायः उस समय लगती है जब बच्चा दो बरस का हो जाता है। और जब वह तीन या चार बरस का हो जाता है और संसार की और और बातो में लगने लगता है, तब यह आदत आपसे आप छूट जाती है। कुछ बच्चों में तो यह आदत कुछ बड़े होने तक या पूर्ण वयस्क होने तक भी बनी रहती है।

दाँत पीसना—यह एक दूसरी बुरी आदत है। प्रायः बच्चे सोने की दशा मे दांत पीसते हुए देखे जाते हैं। इसका कारण या तो अनुपयुक्त भोजन के कारण होनेवाली बदहज़मी होती है और या पेट मे कीड़ों का होना। माताओं को उचित है कि वे ध्यानपूर्वक बच्चे का पाखाना देखा करें और बच्चे का ठीक ठीक इलाज करावें। अधिकांश अवस्थाओं में बच्चे के भोजन में विचारपूर्वक परिवर्त्तन करने से ही यह बात दूर हो जाती है।

नाख़ून कुतरना—जब कभी बच्चे को दांत से नाख़ून कुतरते हुए देखा जाय, तो इसे दूर करने का सबसे सहज उपाय यह है कि

बच्चे के नाखूनों पर कुनीन का घोल या इसी प्रकार का और कोई कड़ुवा पदार्थ लगा दिया जाय।

अँगूठा चूसना—जब बच्चा अँगूठा चूसता हुआ देखा जाय, तब उसे तुरन्त रोक देना चाहिए, नहीं तो उसे इसकी आदत ही पड़ जायगी। यदि बच्चे मे इस प्रकार की प्रवृत्ति देखी जाय तो उसके अँगूठे और उँगलियों पर एलुआ या इसी प्रकार का और कोई कड़ुवा पदार्थ लगा देना चाहिए। बस उसके कड़वे स्वाद के कारण ही बच्चा अँगूठा चूसना छोड़ देगा।

नक़ल उतारना—बच्चों मे एक बुरी आदत यह भी पड़ जाती है कि वे दूसरे लोगो की नक़लें उतारने लगते है। ज्यों ही उनमे यह बात देखी जाय, त्यों ही रोक दी जानी चाहिए।

हकलाकर बोलना—प्रायः दूसरो की नक़ल उतारने के कारण बच्चो को इसकी भी आदत पड़ जाती है।

नाक से गुनगुना कर बोलना—बच्चो को यह आदत भी नहीं पड़ने देनी चाहिए।

चुसनी चूसना—बच्चे प्रायः चुसनी चूसते हुए देखे जाते है। मातायें बच्चे के हाथ से चुसनी छीनकर सहज में उनकी यह आदत छुड़ा सकती है। यह स्मरण रखना चाहिए कि चुसनी चूसने से प्रायः क्षय-सरीखे भीषण रोग हो जाते हैं जिनका बचपन में कोई इलाज ही नहीं हो सकता। बच्चो के गले मे जो घंटी बढ़ आती है या अन्दर की जो गिल्टियाँ सूज जाती है, वह कभी कभी इसी आदत के कारण होती है। कुछ बच्चो में यह बुरी आदत पड़ जाती है कि जब तक उन्हें कोई दूसरा आदमी न खिलावे, तब तक वे खाते ही नहीं। इस आदत को रोकने के लिए बीच मे कुछ परिवर्त्तन करने की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार और भी बहुत सी बुरी आदते हैं जिनका पूरा पूरा वर्णन नहीं हो सकता और जिनका कई प्रकार से बच्चे के स्वास्थ्य और चरित्र पर

बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। ज्यों ही इस प्रकार की बुरी आदतें देखने में आवें, त्यों ही उन्हें रोक देना चाहिए।

परिवार के डाक्टर—पाश्चात्य देशो मे यह प्रायः देखा जाता है कि हर परिवार का एक विशेष डाक्टर होता है। इस प्रकार एक विशिष्ट डाक्टर रखने से जो लाभ होते है, उन्हें वे बहुत अच्छी तरह समझते हैं। कहते है कि चीन मे परिवार के डाक्टर को बीमारी रोकने और घर के लोगो का स्वास्थ्य बनाये रखने के लिए ही कुछ धन दिया जाता है। यह नहीं होता कि जब कोई बीमार पड़े, तभी डाक्टर को कुछ मिले। इस प्रथा से बहुत से लाभ होते हैं; क्योंकि परिवार का डाक्टर केवल एक विश्वसनीय डाक्टर ही नही रहता, बल्कि परिवार का मित्र भी हो जाता है। ज्यो ही घर मे किसी के स्वास्थ्य मे कुछ भी ख़राबी दिखाई पड़े, त्यो ही उससे काम लिया जा सकता है। कोई विशेष आवश्यकता पड़ने पर डाक्टर को बुलाने या दिखलाने मे जो व्यय पड़ता है, उसकी अपेक्षा परिवार का एक डाक्टर बना लेने में व्यय भी कम ही पड़ता है। जो डाक्टर किसी परिवार मे प्रायः आता-जाता रहता है, वह उस परिवार के सब लोगों के शारीरिक संगठन और पैत्रिक तथा अर्जित रोगों आदि से इतना अधिक परिचित हो जाता है कि दूसरे डाक्टरों की अपेक्षा उसका काम बहुत सहज हो जाता है और उसे सफलता भी अधिक होती है। भारत में प्रायः पारिवारिक डाक्टर रखने की प्रथा नहीं है। अधिकांश लोग उसी समय डाक्टर के पास जाते या उसे बुलाते है, जब उनका अपना अनाड़ीपन का इलाज कुछ काम नहीं करता और जब वे जीवन और मरण के मध्य की अवस्था में पहुँच जाते हैं। साधारणतः यह बात सभी अवस्थाओं में और विशेषतः बच्चे के स्वास्थ्य का प्रश्न उपस्थित होने की दशा मे बहुत भूल की है। बच्चों का जीवन बहुत ही कोमल होता है और यदि उनके रोग की उपेक्षा की जाय तो वे जल्दी ही मर सकते है। पर यदि उनका ठीक तरह से इलाज किया जाय तो उनका

जीवन बहुत सहज मे बच सकता है। वयस्क पुरुषों की अपेक्षा बच्चों पर ठीक ठीक दवाओं का इतना अच्छा और जल्दी प्रभाव पड़ता है कि जहाँ बच्चे के प्राण बचने की बहुत ही कम आशा रहती है, वहाँ भी दवा का प्रभाव देखकर स्वयं डाक्टरों को बहुत अधिक आश्चर्य होता है। इसलिए बच्चों के स्वास्थ्य और रक्षा की दृष्टि से भी और किफ़ायत के विचार से भी परिवार के लिए एक डाक्टर रखना बहुत ही अच्छा और लाभदायक होता है। जहाँ कोई असाधारण लक्षण दिखाई पड़े, वहाँ यदि तुरन्त उसकी उचित चिकित्सा की जाय तो बच्चे का रोग भीषण रूप नहीं धारण करने पाता और वह बलवान् तथा हृष्ट-पुष्ट रहता है। बच्चों का इलाज टालना बहुत ही घातक होता है। केवल समय पर इलाज न होने के कारण ही बहुत से बच्चों के रोग बहुत भीषण रूप धारण कर लेते है और कुछ बच्चे तो उन रोगो से मर भी जाते हैं। पेटेण्ट दवाओं के सम्बन्ध मे न तो यही पता रहता है कि वे किन चीज़ों से बनी होती है और न उनका प्रभाव या गुण ही ज्ञात होता है। पर कुछ लोग डाक्टर की फ़ीस बचाने के लिए इन्हीं पेटेण्ट दवाओं का व्यवहार करते है, जिसका प्रायः बहुत ही घातक परिणाम होता है। ऐसे लोगों को आप ही यह बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि बच्चे के जीवन का मूल्य डाक्टर की फ़ीस से अधिक है या नहीं।

यह जानने के लिए कि बच्चा शारीरिक और मानसिक दोनों ही दृष्टियों से ठीक तरह से उन्नति कर रहा है या नहीं, बच्चे की साल मे दो बार किसी डाक्टर से परीक्षा करा लेना बहुत ही लाभदायक होता है। यदि उसमे कोई असाधारण बात दिखलाई पड़ेगी तो डाक्टर ठीक समय में उसे सुधार लेगा अथवा माता-पिता को यह सूचना दे देगा कि बच्चे का जीवन किस प्रकार नियमित और व्यवस्थित किया जाना चाहिए। बच्चे के भोजन, कसरत, कपड़े, स्नान आदि अर्थात् उसके जीवन की सभी बातों का पूरा पूरा विचार करना होगा और

समय रहते ही उपयुक्त उपायों का अवलम्बन करना होगा। अन्त मे इससे माता-पिता लाभ मे ही रहेंगे और उन्हें इस बात का इतमीनान हो जायगा कि बच्चे के स्वास्थ्य की अनुपयुक्त भोजन आदि के प्रभाव से ठीक तरह से रक्षा हो रही है।

परिवार के लिए डाक्टर बहुत ही सचेत होकर और सावधानी से चुनना चाहिए। पर जब एक बार कोई डाक्टर चुन लिया जाय, तब उसके निर्णय और चिकित्सा पर पूरा पूरा विश्वास और भरोसा रखना चाहिए; क्योंकि डाक्टर की चिकित्सा मे सफलता होने के लिए उसकी योग्यता पर पूरा पूरा विश्वास होना बहुत ही आवश्यक है।

आज दिन तक भारत में एक बहुत बड़ी सीमा तक केवल विश्वास के बल पर चिकित्सा करने की प्रथा प्रचलित है। इसकी जड़ मे एक विशेष मनोविज्ञान भरा है। विश्वास से मन बलवान् होता है और मन का शरीर पर रोग की दशा मे भी और स्वस्थ रहने की दशा में भी बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। विशेषतः जब कि रोग का कारण मानसिक या आत्मिक होता है, तब विश्वास की चिकित्सा का इतना अधिक आश्चर्यजनक प्रभाव देखने मे आता है कि उसका वर्णन नहीं हो सकता। इसका कारण यह है कि रोग के अच्छे होने मे भय, चिन्ता आदि जो भाव और परिस्थितिया रुकावट होती है, वे परिस्थितियाँ इस विश्वास के कारण आपसे आप दूर हो जाती हैं। प्रायः बहुत से शारीरिक रोग इस दृढ़ विश्वास के कारण ही अच्छे हो जाते हैं। पर इस विश्वासवाली चिकित्सा की भी कुछ सीमा है। जब शरीर का रोग इतना बढ़ जाय कि रोगी अपने विश्वास का उपयोग करने मे समर्थ ही न रह जाय, तब इस प्रकार के विश्वास की चिकित्सा का कुछ भी फल नहीं होता।

यह भी हो सकता है कि किसी परिवार मे कुछ ऐसे घातक प्रभाव काम कर रहे हों जिनका उस परिवार के लोगों के स्वास्थ्य पर बुरा परिणाम होता हो। जब परिवार के लिए एक डाक्टर नियत और

निश्चित कर लिया जाता है, तब इस प्रकार के प्रभाव सहज मे दूर किये जा सकते है। जब घर के सब लोग उस पर विश्वास रखने लगते हैं, तब उसकी स्थिति बहुत दृढ़ हो जाती है और लोगों को अपनी रक्षा का पूरा पूरा विश्वास हो जाता है। इस विश्वास के कारण रोग केवल अच्छा ही नही हो जाता, बल्कि सदा के लिए नष्ट हो जाता है। अपनी रक्षा के इस विचार का जो मूल्य या महत्त्व होता है, वह प्रायः साधारण आदमी नही समझते। पर फिर भी बहुत से लोग इसके लाभदायक प्रभाव देखते और उनका अनुभव करते हैं। यह भी वैसा ही है जैसा ईश्वर अथवा मनुष्य पर होने-वाला विश्वास। इस प्रकार के विश्वास से कल्पित और वास्तविक सभी प्रकार के भय नष्ट हो जाते हैं और जीवन का भार बहुत कुछ हलका हो जाता है।

जब डाक्टर यह समझता है कि यह सारा परिवार मेरे ही निर्णय और परामर्श पर निर्भर करता है, तब वह अपने कर्त्तव्य का पालन बहुत ही उत्सुकता और निष्ठा या ध्यान के साथ करता है। पर जब वह समझता है कि इन लोगो का मुझ पर कोई विशेष विश्वास नहीं है और ये यों ही मुझसे अपना काम चला रहे हैं, तब वह भी यों ही अपना काम चलता करता है। यदि रोग भीषण रूप धारण कर ले तो किसी दूसरे अच्छे डाक्टर या विशेषज्ञ की व्यवस्था भी उसी के द्वारा करानी चाहिए और उसी के द्वारा परामर्श लेना चाहिए। बिना उस डाक्टर से कहे और उसके पीछे कभी किसी दूसरे डाक्टर को बुलाकर नहीं दिखलाना चाहिए और न उसकी सलाह लेनी चाहिए। डाक्टर के प्रति तो यह व्यवहार सज्जनोचित होता ही नही, पर इससे स्वयं रोगी को भी बहुत ही कम लाभ पहुँचता है। इसका कारण यह है कि नया डाक्टर अपने ही ढंग से इलाज करना शुरू करता है और उसे यह पता ही नहीं चलता कि पहले इस रोगी की किस प्रकार चिकित्सा हुई है।

सारे संसार मे यह देखा जाता है कि माता-पिता अपने बच्चों के लिए डाक्टर को हौआ बना देते हैं। यदि बच्चा खाने-पीने की चीज़ या दवा आदि नहीं खाता तो उससे कहा जाता है कि तुम तुरन्त इसे खा लो; नहीं तो डाक्टर साहब तुमको मारेंगे या कोई दंड देंगे। इस प्रकार की धमकियाँ देना बहुत बुरा है। पुलिस के सिपाही से भी बच्चे उतना नहीं डरते जितना उन्हे बेचारे डाक्टर से डराया जाता है। माता-पिता के लिए उचित तो यह है कि वे बच्चे के मन मे डाक्टर के प्रति आदर और प्रेम का भाव उत्पन्न करें। पर वे ऐसा न करके बच्चे के मन मे उसके प्रति दुर्भाव उत्पन्न कर देते है। बच्चो की चिकित्सा करनेवाला डाक्टर उनका सबसे अच्छा मित्र होता है, और बच्चो को ऐसी शिक्षा देनी चाहिए कि वे उसे अपना सबसे अच्छा मित्र समझा करें।

नवाँ प्रकरण

बच्चों की उचित वृद्धि और विकास

माता के प्रति—इस प्रकरण मे यह बतलाया जायगा कि साधारणतः उचित रूप से बच्चे के शरीर की किस प्रकार वृद्धि और विकास होना चाहिए। इसमे ऐसी बातें बतलाई गई हैं जिनका आधार बहुत दिनों का निरीक्षण और अनुभव है। इन सब बातों को जान लेने के बाद तुम्हारे लिए यह सम्भव हो जायगा कि तुम सहज मे यह समझ सको कि तुम्हारे बच्चे का जैसा चाहिए, वैसा विकास हो रहा है या नहीं। इसलिए इस प्रकरण मे बतलाई हुई बाते तुम्हें बहुत अच्छी तरह समझ लेनी चाहिएँ; और यदि तुम्हारे बच्चे मे कोई असाधारण बात दिखलाई पड़े तो तुम्हे तुरन्त डाक्टर से सलाह लेनी चाहिए।

विषय-प्रवेश—इस प्रकरण मे यह बतलाया जाता है कि बच्चे के शरीर का साधारणतः कब, कितना विकास होना चाहिए, वह कब कितना बढ़ना चाहिए। सब बच्चो के शरीर की वृद्धि और विकास एक-सा नही होता और सबमे बहुत अधिक अन्तर देखने मे आते है। पर फिर भी यहाँ जो बाते बतलाई जाती है, वे सारे ससार मे बहुत अधिक बच्चो की जांच और परीक्षा करके निश्चित की गई है। इसलिए माता-पिता के मार्ग-दर्शन के लिए ये बहुत ही विश्वसनीय हैं।

ऊँचाई—नया जन्मा हुआ बच्चा प्रायः २० इंच लम्बा होता है और पहले वर्ष प्रतिमास प्रायः $\frac{3}{4}$ इंच बढ़ता है। अर्थात् पहले

एक वर्ष मे वह औसत ९ इंच बढ़ता है। इस प्रकार जब बच्चा एक वर्ष का होता है, तब वह २१ इंच लम्बा होता है। दूसरे वर्ष औसत ४ इंच, तीसरे वर्ष प्रायः ३½ इंच और चौथे वर्ष तीन इंच लम्बाई बढ़ती है। पांचवे वर्ष से लेकर लड़कियों मे ग्यारहवें वर्ष तक और लड़कों मे तेरहवें वर्ष तक प्रतिवर्ष दो इंच लम्बाई बढ़ती है। इसके बाद दोनों का यौवन-काल आरम्भ होता है जिसमे वे बहुत जल्दी जल्दी बढ़ते हैं।

यदि माता-पिता लम्बे होते है तो उनकी सन्तान भी प्रायः लम्बी होती है; और यदि वे नाटे होते है तो सन्तान भी नाटी होती है। यदि बच्चे को ठीक तरह से पोषक भोजन न मिले तो उसकी बाढ़ कम होती है।

तौल—जन्म के समय बच्चो की ऊँचाई तो प्रायः कम या अधिक भी होती है, पर तौल में प्रायः सभी बच्चे औसत ७ पाउंड या ३½ सेर होते हैं। जो दो बच्चे एक साथ उत्पन्न होते हैं, अथवा जो बच्चे ठीक समय से पहले ही पैदा होते है, वे तौल में इसकी अपेक्षा बहुत कम होते है। यदि जन्म के समय बच्चा तौल मे ६ पाउंड या तीन सेर से कम हो तो माता-पिता को बहुत सावधान रहना चाहिए, क्योंकि इस प्रकार के अधिकाश बच्चे वही होते है जो समय से पहले ही पैदा होते है और जिनके पालन-पोषण मे विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होती है। यह एक नियम है कि लड़कों की अपेक्षा लड़किया तौल में कम होती है। नाटे आदमियो की सन्तान भी तौल में कम होती है। जन्म लेने के कुछ ही दिनों के अन्दर बच्चे तौल मे कुछ घट जाते है। यह कमी जाकर दसवें दिन तक पूरी हो जाती है और तब उसके बाद वे तौल मे धीरे धीरे बढ़ने लगते हैं। पांचवे महीने के अन्त मे बच्चे की तौल जन्म-समय की तौल से दूनी हो जानी चाहिए। यदि जन्म के समय बच्चा तौल में ७ पाउंड हो तो पांचवें महीने के अन्त मे वह १४ पाउंड का हो जाना चाहिए।

इसी प्रकार बारहवे महीने वह तौल मे तिगुना और दो वर्ष मे चौगुना हो जायगा।

बच्चे को बराबर ध्यानपूर्वक तौलते रहना चाहिए और उसका ठीक लेखा रखना चाहिए। इससे यह ठीक ठीक अनुमान किया जा सकता है कि उसकी उन्नति या विकास किस ढंग से हो रहा है। आरम्भ के कुछ महीनों मे बच्चे को प्रति सप्ताह तोलना चाहिए और उसके बाद महीने मे दो बार। यदि उसकी बाढ सन्तोषजनक हो तो फिर महीने मे एक बार तोलना चाहिए। पर यदि उसकी बाढ़ ठीक तरह से न होती हो तो उसे बीच बीच में जल्दी जल्दी तोलना चाहिए।

सिर का घेरा—बच्चे के सिर का घेरा नापने का जो महत्त्व और मूल्य है, वह माता-पिता प्रायः समझते ही नहीं या बहुत कम समझते है। साधारणतः जन्म के समय वह १३ इंच होना चाहिए। नाप ठीक मस्तक की सतह से लेनी चाहिए। यदि सिर का घेर तेरह इंच से बहुत कम हो तो बच्चे की मानसिक दृष्टि से बहुत दुर्बल होने की सम्भावना रहती है और इसके लिए माता-पिता को आरम्भ से ही सावधान रहना चाहिए। यदि घेरा इससे बहुत बड़ा हो तो डाक्टर को दिखलाना चाहिए, क्योंकि यह रोग की अवस्था का लक्षण है, और यदि इसकी उपेक्षा की जायगी तो यह आगे चलकर भीषण रूप धारण करेगा। एक वर्ष की अवस्था मे सिर का घेरा प्रायः १८ इंच होता है। पहले वर्ष में सिर बहुत ही जल्दी जल्दी बढ़ता है। पहले वर्ष के अन्तिम महीनों मे वह हर महीने प्रायः आध इंच के हिसाब से बढ़ता है। तीसरे वर्ष के अन्त मे यह घेरा प्रायः १६ इंच होता है।

दाँत—बीच के निचले दो दांत छः से नौ महीने के बीच मे निकलते है और ऊपर के बीच के चार दांत आठ से बारह महीने के बीच मे निकलते हैं। जब बच्चा एक वर्ष का हो जाय, तब उसके छः दांत होने चाहिएँ। अठारह महीने की अवस्था मे उसे बारह,

दूसरे वर्ष के अन्त में सोलह और ढाई वर्ष का होने पर बीस दाँत होने चाहिएँ।

छाती—छातियों की घुंडी की सतह से छाती नापनी चाहिए। पन्द्रह वर्ष की अवस्था तक प्रतिवर्ष एक इंच छाती बढ़नी चाहिए।

पेट—बचपन में पेट का घेरा भी प्रायः उतना ही रहता है जितना छाती का होता है। दूसरे वर्ष के अन्त में सिर, छाती और पेट तीनों की नाप प्रायः एक समान ही होती है। पर इसके बाद छाती की नाप बाक़ी दोनों चीज़ों की नाप की अपेक्षा बहुत तेज़ी के साथ बढ़ती है।

दृष्टि—ज्यों ही बच्चा जन्म लेता है, त्यों ही उसकी दृष्टि ऐसी होती है कि वह अन्धकार और प्रकाश में अन्तर समझ लेता है। वह बहुत चमकीले प्रकाश से बचना चाहता है, क्योंकि उससे उसे कष्ट होता है। इसलिए जिस कमरे में बच्चा रखा जाय, वह कमरा कुछ अँधेरा होना चाहिए और उसमें बहुत अधिक प्रकाश नहीं होना चाहिए। बच्चे को बहुत चमकीली रोशनी में नहीं ले जाना चाहिए और न उसकी आँखों पर धूप की किरणें सीधी पड़ने देनी चाहिएँ। इन बातों का ध्यान बच्चे के सोने के समय भी रहना चाहिए और जागने के समय भी।

अपने जीवन में छठे दिन बच्चा दीए पर निगाह जमा सकता है और जिधर दीआ ले जाओ, उधर ही वह भी देखता है। चौथे महीने बच्चा अपने माँ-बाप को देखकर पहचान लेता है और किसी अजनबी आदमी को देखकर कुछ डर-सा जाता है।

सुनने की शक्ति—जन्म के बाद पहले कुछ दिनों तक बच्चे में सुनने की शक्ति बहुत ही कम होती है। पर उसके बाद धीरे धीरे वह शक्ति बढ़ने लगती है। कुछ महीनों में उसे यह शक्ति बहुत कुछ प्राप्त हो जाती है। यदि बहुत साधारण या हलका शोर भी हो तो उसकी नींद खुल जाती है। तीसरे महीने के अन्त में वह प्रायः उस

ओर अपना सिर घुमा देता है जिस ओर से कोई आवाज़ आती है। बहुत तेज़ शोर से बच्चे को कष्ट होता है, इसलिए आरम्भ के कुछ महीनों मे इस बात का ध्यान रहना चाहिए कि उसके आस-पास बहुत शोर न हो। उसके मस्तिष्क पर ऐसे शोर का जो प्रभाव पड़ता है, वह प्रायः बहुत हानिकारक होता है, क्योंकि उसके कारण उसके मन मे डर समा जाता है।

स्पर्श की शक्ति—नये जन्मे हुए बच्चे के होठो और ज़बान मे स्तन से दूध पीने के लिए तो स्पर्श की शक्ति बहुत तेज़ होती है परन्तु साधारणतः और अंगों मे उसकी यह शक्ति बहुत ही कम, प्रायः नहीं के समान होती है। पर जब वह तीन महीने का हो जाता है, तब उसके सारे शरीर मे स्पर्श की शक्ति आ जाती है।

रसना या स्वाद लेने की शक्ति—बच्चे मे यह शक्ति बहुत विकसित होती है। जन्म लेने के समय से ही वह समझ सकता है कि कौन सी चीज़ मीठी, खट्टी या कड़वी है। मीठे स्वाद के कारण ही वह स्तनों को चूसने लगता है और यदि उसके मुँह मे कोई कड़वी चीज़ लगा दी जाय तो वह मुँह बना लेता है और उसे कष्ट होता है। यदि खाने-पीने की चीज़ों के स्वाद मे ज़रा भी अन्तर पड़ जाय, तो छोटा बच्चा उसे तुरन्त पहचान लेता है, और यदि वह स्वाद उसे अच्छा न लगता हो तो वह स्तन या बोतल मे से दूध नही पीता, उसके सामने से मुँह हटा लेता है।

गन्ध लेने की शक्ति—जन्म लेने के समय बच्चे मे गन्ध लेने की थोड़ी बहुत शक्ति तो रहती ही है, पर आगे चलकर और शक्तियों के अच्छी तरह विकसित होने के बाद बढ़ती है।

बोलने की शक्ति—कुछ बच्चो मे तो बोलने की शक्ति बहुत जल्दी आ जाती है और कुछ बच्चो मे बहुत देर मे आती है। इस-लिए इसका कोई निश्चित समय नही बतलाया जा सकता। लड़कों की अपेक्षा लड़कियो प्रायः तीन चार महीने पहले ही बोलने लगती

हैं। साधारणतः बच्चा पहले वर्ष के अन्त मे मामा, बाबा, दादा आदि शब्दो का उच्चारण करने लगता है। दूसरे वर्ष के अन्त मे वह दो तीन शब्दो को जोड़कर एक छोटा सा वाक्य बनाने के योग्य हो जाता है। इसके बाद उसके बोलने की शक्ति बहुत जल्दी जल्दी बढ़ने लगती है और हर महीने मे उसकी विशेष उन्नति दिखाई पड़ती है। साधारणतः वह पहले आदमियों के नाम लेना सीखता है; चीज़ों के नाम लेना उसे बाद मे आता है।

जब माता-पिता देखते हैं कि हमारा बच्चा ठीक तरह से बोलना नहीं सीख रहा है, तब उन्हें चिन्ता होने लगती है। मातायें इसका कारण प्रायः यह बतलाया करती है कि बच्चे की ज़बान के नीचे की झिल्ली अधिक सटी हुई है और वही उसे बोलने नहीं देती। पर यह बात ठीक नहीं है; क्योंकि इसके कारण बच्चे के बोलना सीखने मे देर नहीं होती। हा इसके कारण उसके दूध पीने मे कुछ कुछ बाधा हो सकती है और वह कुछ विशिष्ट शब्दों का उच्चारण नहीं करने पाता। वे ही बच्चे देर में बोलना सीखते है जिनका दिमाग़ कुछ कमज़ोर या ख़राब होता है। बोलने का सम्बन्ध तो वास्तव में ध्यान देने से है। यदि बच्चा ठीक तरह से ध्यान देने के योग्य होगा तो वह बोलना भी जल्दी सीख जायगा। यदि यह सन्देह हो कि बच्चे के कानों मे ही कोई ख़राबी है और वह ठीक तरह से नहीं सुन सकता तो किसी डाक्टर को उसके कान दिखलाने चाहिएँ। पर यदि कानों मे कोई विशेष या असाधारण बात न हो तो यही समझना चाहिए कि बच्चे मे किसी बात पर ठीक तरह से ध्यान देने की शक्ति नहीं है और इसी कारण उसके बोलना सीखने मे देर हो रही है।

यदि बच्चे का शरीर बहुत कमज़ोर हो और उसका स्वास्थ्य ठीक न हो और उसने कोई बड़ी बीमारी भोगी हो तो उसके बोलना सीखने में कुछ देर होती है। पूरी तरह से नीरोग और स्वस्थ हो जाने पर वह साधारण रूप में बोलना सीख लेगा। इसलिए ऐसी अवस्थाओ

में माता-पिता को किसी प्रकार की चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है।

अंगों का विकास—आरम्भ में बच्चों में एड़ियाँ रगड़ने और हाथ-पैर पटकने आदि की जो गतियाँ होती हैं, वे आपसे आप होती हैं; वे जान बूझकर नहीं की जातीं। ज्यों ज्यों बच्चों की अवस्था बढ़ती है, त्यों त्यों वे अपनी इच्छा से गतियाँ और अंगों का संचालन करने लगते हैं; जैसे सिर ऊपर उठाना, चीज़ों को हाथों से पकड़ना, बैठना, रेंगना, खड़े होना और चलना आदि।

बच्चा तीसरे या चौथे महीने तक अपना सिर उठाने लगता है। रग-पट्ठों के विकास की कमी या बेशी के अनुसार इस समय में कुछ अन्तर भी पड़ता है। पर जीवन के आरम्भ के महीनों में ही उसके हाथ में कोई चीज़ या उँगली आदि रख दी जाय तो वह उसे पकड़ सकता है। पाँचवें महीने वह किसी चीज़ को हाथ से पकड़कर मुँह तक ले जाने लगता है। यदि बच्चे की हथेली पर कोई चीज़ रख दी जाय और वह उसे ठीक तरह से न पकड़ सकता हो तो माता-पिता को समझ लेना चाहिए कि या तो बच्चा बहुत कमज़ोर है और या इसके मस्तिष्क में कोई दोष है। बच्चे के उठकर बैठने की शक्ति उसकी पीठ के रग-पट्ठों के बल पर निर्भर करती है। साधारणतः छः महीने से पहले उसमें बैठने की शक्ति नहीं आती। जब वह प्रायः एक वर्ष का हो जाता है, तब वह बिना किसी सहारे के बैठने के योग्य हो जाता है। नवें या दसवें महीने वह रेंगने के योग्य हो जाता है। जिस बच्चे के अंगों का ठीक तरह से विकास हुआ हो, वह ग्यारहवें या बारहवें महीने खड़ा हो सकता है। जब वह प्रायः चौदह महीने का होता है तब उसमें आपसे आप चलने की शक्ति आती है। यदि चौदहवे महीने बच्चा चलने के योग्य न हो तो समझना चाहिए कि इसे किसी प्रकार की बीमारी है। जो बच्चा अपने हाथ-पैर आदि अंग अच्छी तरह और स्वतन्त्रतापूर्वक न हिलाता हो और जिसे ऐसा करने में आनन्द न आता हो साधारणतः

उसके मस्तिष्क मे किसी प्रकार का विकार होता है। माता के ध्यान रखने योग्य दूसरी बात यह है कि यदि बच्चा कुछ दिनो तक चलने के बाद फिर चलना छोड़ दे, तो उसे डाक्टर को दिखलाना चाहिए कि यह कमी किस कारण से हुई है।

किसी बच्चे के अंगो का विकास जल्दी और किसी का देर से होता है; और यह अंगों का विकास उसके स्वास्थ्य और परिस्थिति आदि पर निर्भर करता है।

पहले वर्ष में बच्चे की उन्नति और विकास—नीचे हम संक्षेप मे यह बतलाते है कि पहले वर्ष मे हर महीने बच्चे मे किन किन बातों का विकास होता है। इससे मातायें यह अच्छी तरह समझ सकेंगी कि उनके बच्चे ठीक तरह से बढ़ रहे है या नहीं।

पहला महीना—बच्चा प्रकाश या रोशनी देखकर कुछ घबराता है। बहुत तेज़ रोशनी उसे अच्छी नहीं लगती। आरम्भ के कुछ दिनो मे ही उसमे सुनने की अच्छी शक्ति आ जाती है और शोर होने पर जल्दी वह जाग उठता है।

दूसरा महीना—बच्चा मुस्कराने लगता है और प्रसन्नता प्रकट करता है।

तीसरा महीना—तीसरे महीने के अन्त मे वह उस ओर सिर घुमाता है जिस ओर से आवाज़ आती है।

चौथा महीना—बच्चा बिना किसी सहारे के सिर उठा सकता है। अपने माता-पिता को देखकर और उनकी आवाज़ सुनकर वह उन्हें पहचानने लगता है। उस समय वह अजनबी आदमियो को बहुत जल्दी पहचान लेता है; और यदि वे उसके पास आते हैं तो वह प्रायः रोने लगता है।

पाँचवाँ महीना—वह चीज़ो को पकड़ने और उन्हे अपने मुँह मे डालने लगता है। खिलौनों से वह प्रसन्न होता है।

छठा महीना—वह बैठने का प्रयत्न कर सकता है।

सातवाँ महीना—छठे और सातवें महीने के बीच मे उसके दाँत निकलने लगते है। पहले नीचे के बिचले दो दाँत निकलते हैं।

आठवाँ महीना—ऊपर के बीचवाले दाँत निकलने लगते हैं।

नवाँ महीना—कुरसी या किसी दूसरी चीज़ को पकड़कर वह उठकर खड़े होने का प्रयत्न करता है। यदि वह ऐसा प्रयत्न करे तो उसे बिना किसी बाधा के ऐसा करने देना चाहिए।

दसवाँ महीना—लड़कियाँ कुछ शब्द बोलना सीखती है। यह नियम है कि लड़कियाँ जल्दी बोलना सीखती हैं और लड़के देर से बोलना आरम्भ करते है।

ग्यारहवाँ महीना—बच्चा खड़े होने के योग्य होता है और सहारे से चलने भी लगता है।

बारहवाँ महीना—पहले वर्ष के अन्त मे बच्चे के छः दाँत होते है—चार ऊपर और दो नीचे। उस समय उस पर पूरी निगाह रखनी चाहिए, क्योकि वह जो चीज़ देखता है, वही पकड़ लेता है।

बच्चों को तौलना—जिन बच्चो का पालन बनावटी भोजन से होता हो, विशेषत. उन्हे तौलना बहुत ही आवश्यक होता है। थोड़े थोड़े अन्तर पर यह पता लगा लेना बहुत अच्छा होता है कि इस कृत्रिम भोजन से बच्चा तौल मे बढ़ता है या नही। अर्थात् यह समझ लेना चाहिए कि बच्चे को वह भोजन ठीक तरह से पचता है या नहीं। यदि बच्चा तौल मे बराबर न बढ़ता हो तो समझना चाहिए कि ऊपर से देखने मे भोजन चाहे जितना अनुकूल क्यो न जान पड़ता हो, पर फिर भी वह बच्चे के लिए अनुकूल नही पड़ रहा है, फिर चाहे कै या दस्त आदि ऊपरी चिह्न न भी हों। इसलिए माताओ को उचित है कि जिन बच्चो को ऊपरी दूध पिलाया जाता हो, उन्हे हर महीने तौल लिया करे। यदि बच्चा तौल मे कम हो जाय या तौल बढ़े नही, तो

समझ लेना चाहिए कि बच्चे का यह भोजन बदलने की आवश्यकता है; फिर चाहे उसे और किसी तरह का रोग या और कोई शिकायत हो या न हो।

पहले वर्ष बच्चे को नियमित रूप से तौलना चाहिए। इस तौल मे उसके कपड़े का भी ध्यान रखना चाहिए जिसमे कोई भूल न पड़े। हर बार बच्चा तौल मे जितना उतरे, एक अलग काग़ज़ पर लिख रखना चाहिए; और उसमे जो कमी-बेशी हो, उस पर पूरा ध्यान रखना चाहिए। जिसमे यह पता चलता रहे कि बच्चा कहाँ तक उन्नति कर रहा है और उसे जो भोजन दिया जाता है, उसमे पोषक गुण कितना है। बच्चे को तौल मे जितना बढ़ना चाहिए, यदि वह उतना न बढ़े तो यह समझ लेना चाहिए कि, उसमे कोई ख़राबी है और उसके भोजन से या तो उसका पूरा पूरा पोषण नहीं होता और या वह किसी न किसी रूप मे उसके अनुकूल नहीं पड़ता।

यदि बच्चे को दिये जानेवाले दूध मे चीनी अधिक हो या उसे जमाया हुआ मीठा दूध अथवा इसी प्रकार का और कोई पेटेन्ट भोजन दिया जाता हो तो उससे बच्चा तौल मे तो बहुत बढ़ जायगा, पर उसकी वह वृद्धि भ्रम में डालनेवाली होगी, क्योंकि बच्चे की वास्तविक शक्ति उतनी नहीं होती जितना वह फूल जाता है। ऐसे बच्चे में रोगों का सामना करने की शक्ति कम होती है और वह छूतवाले रोगो का जल्दी शिकार हो सकता है।

यदि दाँत निकलने सरीखी हलकी बीमारियाँ हों तो उनमे बच्चे तौल मे कुछ कम अवश्य हो जाते है, पर उनकी यह कमी स्थायी नहीं होती। और इस प्रकार की अस्थायी अवस्था के कारण माता को चिन्तित न होना चाहिए, क्योंकि जब वह बीमारी दूर हो जायगी, तब यह कमी की अवस्था भी जाती रहेगी।

जन्म के समय बच्चे का जितना आकार होता है, उसी के अनुसार स्वस्थ बच्चा भी तौल मे उतना ही होता है। यदि और सब बातें

समान हो तो भी जो बच्चा आकार मे बड़ा होगा, वह स्वभावतः तौल मे अधिक होगा; और जिस बच्चे का आकार छोटा होगा, वह तौल मे भी कम होगा। जो बच्चा तौल मे सन्तोषजनक रूप से नही बढ़ता, उसमे रोगों का सामना करने की शक्ति कम होती है और इस बात का हर समय डर बना रहता है कि कहीं उसे आंतो या छाती की कोई बीमारी न हो जाय।

जो बच्चा अपनी मा का दूध पीता होगा, वह पहले पांच महीनों मे हर हफ्ते छः से आठ आउन्स तक तौल मे बढ़ेगा। इसके बाद साल पूरा होने तक यदि वह हर हफ्ते चार से छः आउन्स तक भी बढ़े, तो उसकी वृद्धि सन्तोषजनक समझनी चाहिए।

बच्चा जन्म के समय तौल मे जितना होता है, पांच छः महीने में वह उससे दूना हो जाता है और साल के अन्त मे तिगुना हो जाता है।

दसवाँ प्रकरण

बच्चों के कुछ साधारण और छूतवाले रोग

माता के प्रति—छोटे बच्चों को आरम्भ में जो कुछ साधारण या छूतवाले रोग हो जाते हैं, उन्हीं का इस प्रकरण में वर्णन किया गया है। इस प्रकरण में जो बातें ब्योरेवार बतलाई गई हैं, यदि तुम उन्हें अच्छी तरह समझ लोगी तो तुम ऐसे रोगों को केवल यथा-साध्य रोक ही नहीं सकोगी, बल्कि बच्चे के बीमार होने की दशा में तुम सब काम विश्वास और बुद्धिमत्तापूर्वक कर सकोगी। एक बात पर हम विशेष रूप से तुम्हारा ध्यान दिलाना चाहते हैं। वह यह है कि साधारणतः स्त्रियाँ बच्चों के रोगों का आप ही इलाज करके जो भूल कर बैठती हैं, वह भूल तुम कभी मत करो; बल्कि जहाँ तक जल्दी हो सके, तुम किसी अच्छे डाक्टर से सलाह लो और इलाज का सारा काम उसी पर छोड़ दो।

छोटी अवस्था में पाचन-सम्बन्धी विकार—आरम्भिक-सूचनायें—जिन बच्चों को छोटी अवस्था में ठीक तरह से भोजन नहीं दिया जाता, उन्हें जीवन के पहले वर्ष में पाचन-सम्बन्धी कई प्रकार के विकार हो जाते हैं और उनमें से बहुत से बच्चे मर भी जाते हैं। जो भोजन बच्चे के लिए उपयुक्त न होगा, अथवा जो भोजन बच्चा अच्छी तरह पचा न सकेगा, उस भोजन से बच्चे के पेट में अवश्य विकार उत्पन्न होगा। यदि माता बच्चे पर पूरी तरह से ध्यान रखे तो वह आरम्भ में ही ऐसे

उचित उपाय कर सकती है जिसमें बच्चे का वह विकार या रोग भीषण रूप धारण न करने पावेगा। पर यदि वह अज्ञानी होगी अथवा लापरवाही करेगी तो बच्चा अवश्य ही बीमार पड़ेगा। जो बच्चे अपनी माता या दाई का दूध पीते हैं, उनको भी पाचन-सम्बन्धी विकार अवश्य होते हैं; पर ये विकार अधिकतर उन्हीं बालकों मे देखे जाते हैं जिन्हें ऊपरी दूध दिया जाता है। माता का दूध पीनेवाले बच्चों को भी कई प्रकार के विकार होते हैं। जहां तक हो सके, ऐसे विकारों के अवसर कम करने के लिए माता को स्वयं अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखना सबसे अधिक आवश्यक है। यदि उसे किसी प्रकार का रोग होगा तो उसके दूध की मात्रा भी घट जायगी और उसमें कई प्रकार के विकार भी आ जायँगे; और तब बच्चे की पाचन-शक्ति पर उसका अवश्य ही बुरा प्रभाव पड़ेगा। माता का दूध पीनेवाले बच्चे को प्राय. अधिक दूध पीने के कारण अपच हो जाया करता है, और इसका कारण या तो यह होता है कि मातायें अपने बच्चे को बार बार और जल्दी जल्दी दूध पिलाती है और आवश्यकता से बहुत अधिक समय तक दूध पिलाती हैं, अथवा ये दोनों ही कारण एक साथ हो सकते हैं। जो बच्चे दाई का दूध पीते है, उन्हे इस प्रकार के विकार होने की और भी अधिक सम्भावना रहती है। प्रायः दाइयों की छातियां दूध से बहुत भरी हुई होती है। ऐसी दाइयाँ चाहे बच्चे को केवल निश्चित समयो पर ही दूध पिलावें तो भी बच्चे के लिए उनमे से दूध पीना बहुत सहज होता है और इसलिए वह आवश्यकता से अधिक दूध पी लेता है।

जो बच्चे माता या दाई के स्तनो से दूध पीते है, उन्हे दूध पिलाने के सम्बन्ध मे कोई कठोर नियम नहीं है। यदि उन नियमों का थोड़ा बहुत पालन न किया जाय तो स्वास्थ्य में कुछ थोड़ी ही ख़राबी आती है। पर बच्चों को कृत्रिम रूप से दूध पिलाने के सम्बन्ध मे यह बात नहीं है। कृत्रिम रूप से दूध पिलाने की अवस्था में माता के दूध की जगह

ऊपरी दूध मिलने के कारण ही बहुत बड़ा अन्तर पड़ जाता है। केवल जो बच्चे बहुत ही स्वस्थ होते हैं अथवा जिनकी अवस्था कुछ अधिक हो जाती है और जिन्हें बहुत ही सोच समझ कर उपयुक्त भोजन दिया जाता है, वे ही सन्तोषजनक रीति से रहते हैं और माता का दूध पीनेवाले बच्चों की तरह मज़े में चले चलते हैं। आज-कल कृत्रिम रूप से दूध पिलाने की प्रथा बहुत चल पड़ी है; और इसका कारण शायद यह है कि स्त्रियाँ बिना किसी विघ्न-बाधा के जीवन का अधिक से अधिक सुख भोगना चाहती हैं। टीन में बन्द होकर आनेवाले पेटेन्ट भोजनों के विज्ञापन भी सर्वसाधारण को बहुत कुछ धोखे में डालते हैं। बच्चों को पाचन-सम्बन्धी जो बहुत सी बीमारियाँ होती हैं, उनका सबसे बड़ा कारण यही कृत्रिम भोजन है। माँ के दूध की जगह गौ के दूध का व्यवहार करने से भी पाचन-सम्बन्धी बहुत से विकार होते हैं। गौ के दूध और स्त्री के दूध में जो रासायनिक अन्तर है, उससे यह बात अच्छी तरह स्पष्ट हो जाती है कि गौ के दूध को पचाने में बच्चे के पाचक अंगों पर अधिक भार पड़ता है। हम यहाँ पाचन-सम्बन्धी केवल उन्हीं विकारों का वर्णन करेंगे जो साधारणतः सभी स्थानों में पाये जाते हैं, जिसमें मातायें उन्हें रोकने के लिए उचित व्यवस्था कर सकें।

कै और मिचली—यदि बच्चे को मिचली होने लगे तो यह समझ लेना चाहिए कि उसके पेट में आवश्यकता से अधिक दूध पहुँच गया है या उसमें और कोई ख़राबी आ गई है। प्रायः होता यह है कि या तो माता बच्चे को बहुत जल्दी जल्दी छातियों से दूध पिलाती है और या यदि उसे हाथ से दूध पिलाया जाता है तो एक ही बार में उसे बहुत अधिक दूध पिला दिया जाता है। यदि दूध पीने के बाद तुरन्त ही बच्चा बहुत सा दूध फेंक दे तो साधारणतः यही समझना चाहिए कि उसे बहुत अधिक दूध पिला दिया गया था। बच्चे को सरदी लग जाने से, बहुत अधिक इधर-उधर हिलाने

डुलाने से या बहुत तंग कपड़े पहनाने से भी वह कै करने लगता है।

इलाज—मिचली के द्वारा बच्चा प्राकृतिक रूप से अपना बचाव करता है और यह बतलाता है कि मुझे ऐसा भोजन मत दो जो मेरे लिए उपयुक्त या अच्छा नहीं है। छाती के अथवा ऊपरी दूध से बच्चे का पेट कभी बहुत अधिक नहीं भर देना चाहिए। यदि बच्चा बार बार कै करता हो तो उसे कम से कम चार चार घंटे के अन्तर पर दूध दिया जाना चाहिए; फिर चाहे वह उमर मे कुछ ही सप्ताहो का क्यों न हो। यदि इस उपाय से भी उसे कै आना बन्द न हो तो किसी डाक्टर को दिखलाकर उसका इलाज कराना चाहिए; क्योंकि बहुत अधिक मिचली शरीर के अन्दर के किसी और रोग के कारण भी हो सकती है।

क़ब्ज़ियत—बच्चो को प्राय. इसकी तकलीफ़ देखी जाती है। हचिन्सन साहब का मत है—"बड़े होने पर लोगो को जो बराबर क़ब्ज़ियत बनी रहती है, यदि उसके मूल का पता लगाया जाय तो प्रायः यही निश्चित होगा कि छोटी अवस्था मे इस रोग को दूर करने का पूरा पूरा प्रयत्न नही किया गया था।" स्थायी रूप से बनी रहनेवाली क़ब्ज़ियत को रोकने के लिए यह आवश्यक है कि बच्चे को नियमित रूप से और ठीक समय पर पाख़ाने जाने की आदत डाली जाय। उस छोटी अवस्था मे ही उसे यह आदत पड़ जानी चाहिए कि वह बराबर नियमित रूप से पाख़ाने जाया करे। प्रायः मातायें ऐसी होती हैं जो दो दो और तीन तीन दिन तक बच्चो को पाख़ाना फिराती ही नहीं और तब उन्हे रेंडी के तेल की एक ख़ूराक दे देती है। उस समय तो इससे काम चल जाता है, पर फिर इसकी ओर कोई ध्यान नही दिया जाता और वह फिर तीन चार दिन तक पाख़ाना नही फिरता। माता को फिर चिन्ता होती है और वह फिर वही पहलेवाला इलाज करती है। यह बड़ी भारी भूल है; क्योंकि इससे यह रोग जड़ पकड़ लेता और पुराना हो जाता है।

रोकने का उपाय—माता को चाहिए कि वह पहले कैस्करा (Cascara) या तरल पैराफिन (Liquid Paraffin) पीकर अपनी कब्ज़ियत दूर करे; और यदि बच्चा कुछ महीनों का हो तो उसे बराबर नियमित समय पर पाख़ाना फिराया करे। इससे कब्ज़ियत को रोकने मे बहुत कुछ सहायता मिलेगी।

इलाज—यदि बच्चे को ताज़ी और खुली हवा मे रखा जाय और वहा उससे व्यायाम कराया जाय और उसे हाथ-पैर मारने या पटकने का अवसर दिया जाय तो इससे भी कब्ज़ियत बहुत कुछ दूर हो जाती है। पेट के ऊपर मालिश करने से भी बहुत लाभ होता है। पर ऐसा करने से पहले हाथ मे मीठा तेल, घी या मक्खन आदि लगा लिया जाना चाहिए जिसमे मालिश करने से पेट के ऊपर का चमड़ा न छिल जाय। यदि पानी उबालकर ठंडा कर लिया जाय और दूध पिलाने के कुछ देर बाद दोबारा दूध पिलाने से कुछ पहले उसे वह पानी पिला दिया जाय तो भी पाख़ाना साफ़ हो जाता है। बहुत से बच्चे ऐसे होते है जिन्हें पीने के लिए काफ़ी पानी ही नहीं दिया जाता। यदि उन्हें पीने को काफ़ी पानी दिया जाया करे तो उसका फल बहुत सन्तोष-जनक होता है। कुछ अधिक अवस्था के बच्चे को यदि दिन मे एक बार एक या दो छोटे चम्मच भर नारंगी या सन्तरे का रस दिया जाय तो उससे भी बहुत लाभ होता है। अधिक दस्त या पतला पाख़ाना लानेवाली दवाओं का व्यवहार नहीं करना चाहिए, क्योंकि इससे कब्ज़ियत पुरानी होकर जड़ पकड़ लेती है। कभी दस्तावर दवाएँ खाकर कब्ज़ियत दूर करने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए, बल्कि हलका और सादा भोजन करके ही उसे दूर करना चाहिए। यह एक निश्चित नियम है कि सभी प्रकार की कब्ज़ियत केवल भोजन मे सुधार या परिवर्तन करके ही दूर की जा सकती है। माता को चाहिए कि वह लगातार हफ़्तो बल्कि महीनों लगकर बच्चे की कब्ज़ियत दूर करने का इलाज करे। इस विषय में उसे कभी हतोत्साह नहीं होना चाहिए।

पेट में वायु या उसका दरद—बच्चों में यह रोग भी प्रायः देखा जाता है और यह बच्चे के अधिक दूध पीने का एक बहुत कष्टदायक लक्षण है। यह बच्चे को ज़रा भी चैन नहीं लेने देता। माँ का दूध पीनेवाले बच्चों को भी यह रोग होता है और कृत्रिम रूप से दूध पीनेवालो को भी। पर माँ का दूध पीनेवाले बच्चों की अपेक्षा कृत्रिम रूप से दूध पीनेवाले बच्चों को यह अधिक होता है। इसमे दोनों ही प्रकार का दूध बच्चे को अनुकूल नही पड़ता। इससे आँतों में मल सड़ने लगता है जिससे गैस या वायु उत्पन्न होती है और बहुत अधिक पीड़ा होती है। यदि माता पूरा पूरा ध्यान न रखे तो उसका दूध पीनेवाले बच्चे को यह रोग हो जाता है। अथवा स्वयं बच्चा ही जल्दी जल्दी बहुत सा दूध पी लेता है, जिसके कारण उसे यह रोग हो जाता है। जिन बच्चों को बोतल आदि से दूध पिलाया जाता है, उन्हे यह रोग या तो बोतल की गन्दगी के कारण होता है और कभी उसके ऊपर की रबर की घुंडी मे कोई दोष आ जाने और उसके द्वारा पेट मे वायु उतर जान के कारण होता है। कभी कभी पेट या पेड़ू में सरदी लग जाने के कारण भी यह रोग हो जाता है।

जिस बच्चे को यह रोग होता है, वह बेचैन हो जाता है, बहुत ज़ोर ज़ोर से रोता चिल्लाता है और हाथ-पैर पटकता है। उसका पेट छूने से कड़ा जान पड़ता है। जब बच्चा बराबर रोता चिल्लाता रहे, तब माता को समझ लेना चाहिए कि इसके पेट मे वायु के कारण पीड़ा हो रही है।

रोकने का उपाय—इसमें दूध बहुत नियमित रूप से पिलाना चाहिए और जाड़े के दिनों में बच्चे का पेट काफ़ी गरम रखना चाहिए।

इलाज—रेंड़ी के तेल की एक मात्रा दे देनी चाहिए जिसमे आँतों मे भरा हुआ सड़ा मल बाहर निकल जाय; पेट पर गरम पानी की बोतल रखकर उसे सेंकना चाहिए; और दूध पिलाने मे जो दोष

हो उन्हें दूर करना चाहिए। इन सब उपायों से बच्चा अच्छा हो जायगा।

बच्चों को दस्त की बीमारी—प्रायः छोटी अवस्था में बच्चों को दस्त आने लगते हैं और जीवन के आरम्भ में ही बहुत से बच्चे इसी रोग के कारण मर जाते हैं। जिन देशों में मातायें प्रायः छाती से ही बच्चों को दूध पिलाती हैं, उन देशों में तो दस्तों के कारण अधिक बच्चे नहीं मरते; पर जहां बोतल आदि की सहायता से दूध पिलाया जाता है, वहां और अवस्थाओं या बातों के समान होने पर भी बच्चों की मृत्यु की संख्या अधिक होती है। भारत में प्रायः और विशेषतः जून, जुलाई, अगस्त तथा सितम्बर के गरम महीनों में दस्त आने के कारण बहुत से बच्चे मर जाते हैं। गर्मी का मौसिम, रहने के स्वास्थ्यनाशक स्थान, गन्दी नालियां, एक स्थान पर बहुत अधिक आदमियों का रहना और बाज़ार में मिलनेवाला खराब दूध आदि अनेक कारण हैं जिनसे यह बीमारी होती है।

छाती से दूध पीनेवाले बच्चों को प्रायः बहुत अधिक दूध पीने के कारण अथवा माता के अस्वस्थ होने पर उसका दूध बच्चे को अनुकूल न पड़ने के कारण दस्त आने लगते हैं। यदि माता अस्वस्थ न भी हो, पर उसे बदहज़मी हो, वह दिन-रात चिन्तित या दुःखी रहती हो अथवा वह गर्भवती हो तो भी उसका दूध पीने के कारण बच्चे को दस्त आने लगते हैं। कभी कभी अनुपयुक्त भोजन, पेट के ऊपरी भाग में सरदी लग जाने से या दांत निकलने के समय भी बच्चों को दस्त आने लगते हैं। यदि गौ का दूध खराब हो, उसमें उचित मात्रा में पानी न मिलाया जाय अथवा उचित अन्तर पर दूध न दिया जाय तो भी यह रोग हो जाता है। दूध में अधिक चीनी मिलाने या डिब्बों में बन्द होकर आनेवाले पदार्थ माता के खाने से भी बच्चों को दस्त आने लगते हैं।

जिन अवस्थाओं या परिस्थितियों में बच्चे को दस्त आने लगते हैं, उन्हीं के अनुसार उसके ऊपरी लक्षण भी हलके

या कठोर हुआ करते हैं। कुछ बच्चों को तो अचानक बहुत दस्त आने लगते हैं और कुछ बच्चों को पहले कम आते हैं और फिर धीरे धीरे बढ़ने लगते हैं। साधारणतः दिन मे दो या तीन बार पाख़ाना फिरने की जगह बच्चा छः छः और आठ आठ बार और कभी कभी इससे भी अधिक बार पाख़ाना फिरने लगता है। कभी कभी उसे दस्तो के साथ कै भी आने लगती है और बुख़ार भी चढ आता है। बच्चा ज़ोर ज़ोर से चिल्लाता है और इस प्रकार हाथ-पैर पटकता है, मानो उसे बहुत अधिक पीड़ा होती हो। कभी कभी सफ़ेद और जमा हुआ मल भी निकलता है। वह बेचैन रहता है, उसे पूरी तरह से नींद नहीं आती और उसकी जैसी अवस्था होती है, उसी के अनुसार उसे थोड़ा या अधिक कष्ट होता है।

बच्चे को दूध पिलाने की अवस्था मे माता को चाहिए कि वह अपना स्वास्थ्य बहुत ही ठीक रखे। बच्चे को छातियो से दूध पिलाये, खूब सफ़ाई से रहे, ऐसा भोजन करे जो सहज मे और अच्छी तरह पच और स्वास्थ्य-रक्षा के सब नियमो का पूरा पूरा पालन करे। यदि माता बच्चे को छातियो से दूध पिलाती हो और दूध की अधिकता के कारण बच्चे को दस्त आते हो तो माता को चाहिए कि भोजन कम करे और व्यायाम अधिक करे। वह ऐसा भोजन न करे जो उसे अनुकूल न पड़ता हो और बिना पके हुए फल, मिठाइयाँ या इसी प्रकार के और पदार्थ न खाय। बच्चे को दूध पिलाने के दिनों में शराब और मादक द्रव्यो आदि का बिलकुल व्यवहार न करना चाहिए। बच्चे को दिये जानेवाले दूध की मात्रा कम कर देनी चाहिए और उसे थोड़ा सा उबालकर ठंढा किया हुआ पानी देकर सन्तुष्ट करना चाहिए। छातियो मे भरा हुआ बाक़ी दूध पम्प की सहायता से निकालकर बाहर कर देना चाहिए। यदि बच्चे को कुछ अधिक पाख़ाने आते हुए दिखाई दे तो उसको कम और नियमित रूप से दूध पिलाना चाहिए और दूध पिलाने के बीच के अन्तर कुछ बढ़ा देने चाहिएँ।

यदि किसी समय बच्चे को साधारण सा पतला दस्त आ जाय तो उसके लिए चिन्ता नहीं करनी चाहिए। इस प्रकार तो प्रकृति मानों अपना बोझ हलका करने का प्रयत्न करती है। पर यदि रोग के लक्षण अधिक तीव्र हों और दिन-रात में आनेवाले दस्तों की संख्या बहुत अधिक हो और बच्चा कमज़ोर होता जाता हो तो इस ख़राबी को रोकने के लिए तुरन्त पूरा पूरा उपाय करना चाहिए।

उपयोगी सूचनाएँ—

(१) ऐसी अवस्था में बच्चे को दूध पिलाना बहुत कम कर देना चाहिए और उसे आठ से दस घंटों तक बिलकुल भूखा रखना चाहिए।

(२) बच्चे को तरल पदार्थ बहुत अधिक देने चाहिएँ। उबालकर ठंडा किया हुआ सादा पानी या चावल का पानी (देखो परिशिष्ट) दिया जा सकता है। यदि एलब्यूमिन जल (Albumin water) (देखो परिशिष्ट) दिया जाय तो इस बात का बहुत ध्यान रखना चाहिए कि जिन अंडों से वह तैयार किया जाय, वे बिलकुल ताज़े हों।

(३) यदि रोग का रूप विकट न हो तो पेट में का दूषित मल निकालने के लिए रेंड़ी के तेल की एक मात्रा देनी चाहिए। यदि इन सीधे-सादे उपायों से परिणाम सन्तोषजनक न हो तो डाक्टर को बुलाकर दिखलाना चाहिए।

सरदी या ज़ुकाम—प्रायः बच्चों को इतनी जल्दी जल्दी और अधिक सरदी होती है कि उस पर उतना ध्यान ही नहीं दिया जाता जितना दिया जाना चाहिए। जब बच्चा छः महीने का हो जाता है, तब उसे बहुत जल्दी जल्दी सरदी होने लगती है। साधारणतः बच्चे को ज़ुकाम या सरदी हो जाना एक बहुत ही मामूली और तुच्छ बात समझी जाती है और प्रायः थोड़े समय के बाद वह आपसे आप अच्छा भी हो जाता है। पर यह स्मरण रखना चाहिए कि ज़ुकाम अच्छा हो जाने पर भी बच्चों के शरीर पर उसके जो प्रभाव बाक़ी रह जाते हैं, वे कभी कभी घातक

सिद्ध होते है। इसके कारण अन्त मे उसका कान बहने लगता है, उससे तेज़ खाँसी हो जाती है, यहाँ तक कि कभी कभी न्यूमोनिया भी हो जाता है। जो बच्चे स्वभावतः बहुत ही दुर्बल होते हैं, वे यदि भिन्न भिन्न तापमानों मे रहते हैं तो उन्हे बहुत जल्दी ज़ुकाम हो जाता है।

ज़ुकाम एक छूत की बीमारी है। बच्चों को और विशेषतः दूध पीनेवाले बच्चो को बडे और वयस्क लोगो की अपेक्षा अधिक जल्दी ज़ुकाम हो जाता है। साधारण ज़ुकाम होने का एक मुख्य कारण खुली हवा मे रहना है। यदि छोटे बच्चों को लापरवाही से स्नान कराया जाय या तेज़ हवा मे बाहर लाया जाय तो भी उन्हे ज़ुकाम हो जाता है। धूल, कमरे मे आग जलने के कारण होनेवाली गरमी या घरो मे सफ़ाई का न होना भी बार बार ज़ुकाम हो जाने का कारण हुआ करता है।

ज़ुकाम की दशा मे बच्चे को हलका या तेज़ बुखार हो जाता है और उसके दूध पीने मे कुछ बाधा पड़ती है। उसकी नाक कफ़ और पानी से बन्द रहती है, वह ठीक तरह से साँस नहीं ले सकता और इसलिए उसके दूध पीने में रुकावट होती है। जिस बच्चे को ज़ुकाम होता है, वह मुँह से साँस लेने के लिए एक एक दो दो मिनट पर मुँह से स्तन की घुंडी छोड़ देता है। इस प्रकार एक ओर तो वह बीमार रहता है और दूसरी ओर उसका पूरा पूरा पोषण नहीं होता। उसे साँस लेने के लिए पूरी पूरी हवा नहीं मिलती, इसलिए उसकी नींद मे भी बाधा होती है। हवा की उस कमी का वह बारी बारी से नाक और मुँह के द्वारा साँस लेकर पूरा करने का प्रयत्न करता है। इस प्रकार वह सहज मे बहुत थक जाता है और प्रायः ऐसा होता है कि थकावट के कारण उसकी सारी शक्ति नष्ट हो जाती है और अचानक उसके प्राण निकल जाते हैं।

रोकने के उपाय—माता को चाहिए कि वह अपने बच्चों को ऐसे लोगों के पास न जाने दे जिन्हें ज़ुकाम हो। ताज़ी हवा इसका

सबसे अच्छा और बढ़िया इलाज है। बच्चे को कमरे मे बन्द नहीं रखना चाहिए। जब बच्चे को जुकाम हो, तब उसे अधिक कपड़ों मे लपेट कर रखना भी भूल है। इसके बदले उसे ताज़ी हवा मे रखना चाहिए। जिस बच्चे को जुकाम हो, उसे ऐसे कमरे मे रखना चाहिए जिसमें खूब हवा आती हो; और यदि उसे बुखार भी हो तो उसे बिस्तर पर लिटाये रखना चाहिए। उसके स्नान के विषय मे भी बहुत सावधान रहना चाहिए। यदि मुँह से दूध पीने से बच्चे का पूरा पूरा पोषण न हो तो माता को चाहिए कि वह पम्प की सहायता से अपनी छातियों मे से दूध निकालकर चम्मच से उसे पिलावे।

साँस की नालियों की सूजन—छोटे बच्चो की छाती मे जितने रोग होते है, वे सभी बिकट होते हैं और दुर्भाग्य से बच्चों को ऐसे रोग प्रायः हुआ करते हैं। यदि सरदी का ठीक ठीक इलाज न किया जाय और उसकी उपेक्षा की जाय तो साँस की नालियो मे एक प्रकार की सूजन हो जाती है जिसे अँगरेज़ी मे ब्राङ्काइटिस (Bronchitis) कहते है। छः महीने से तीन बरस तक की अवस्था के बच्चो को यह रोग प्रायः हुआ करता है। सरदी या जुकाम की तरह यह रोग भी घरो की गन्दगी, घरो मे धूप न आने और सावधानी न रखने आदि के कारणों से होता है। जाड़े के दिनो मे एक स्थान से दूसरे स्थान पर आने जाने या मौसिम में कुछ परिवर्तन होने, अधिक समय तक घर मे बन्द रहने और उसके द्वारा रोगों का सामना करने की शक्ति के क्षीण हो जाने और जुकाम तथा खाँसी के रोगियों के साथ रहने या इसी प्रकार के और कारणो से यह रोग होता है।

इसके लक्षण—इसके लक्षण बहुत जल्दी प्रकट हो जाते हैं; और यदि किसी दिन रात भर बच्चे को चैन से नीद न आवे, तो सवेरे ही उसमे ये लक्षण स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगते हैं। बच्चा जल्दी जल्दी और कठिनता से साँस लेता है। उसे कुछ हरारत हो

जाती है और वह बेचैन रहता है। यदि बच्चे को ध्यानपूर्वक देखा जाय तो पता चलेगा कि हर बार सास लेने मे नथने अन्दर की ओर जाते और फिर बाहर आते हैं; और यद्यपि वह साँस जल्दी जल्दी और कष्ट से लेता है, पर फिर भी उसकी छाती की गति मन्द होती है।

रोकने के उपाय—बच्चे को केवल घर के बाहर ले जाकर ताज़ी हवा मे व्यायाम ही नहीं कराना चाहिए, बल्कि घर के अन्दर भी ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए जिसमे उसे बराबर ताज़ी हवा मिलती रहे। जिस कमरे मे बच्चा रहता हो, उसमे पूरा प्रकाश और साफ़ हवा आती रहनी चाहिए। यदि हो सके तो बच्चे को रहने के लिए एक अलग अच्छा कमरा दे देना चाहिए। रात के समय उसे ओढने के लिए गरम कपड़ा देना चाहिए। उसके सोने के कमरे की खिड़कियाँ इस प्रकार खुली रहनी चाहिएँ जिसमे हवा के तेज़ झोके न आने पावे। उसमे प्रकाश को रोकनेवाले परदे और क़ालीन आदि न रहने चाहिएँ; क्योंकि उसमे धूल और गर्द आकर जमती है। बच्चे के पहनने के कपड़े ऋतु और समय के अनुसार होने चाहिएँ। जाड़े के दिनो मे उसे गरम मोज़े पहनाने चाहिएँ। उन दिनो उसकी टाँगें नंगी या खुली नहीं रहने देनी चाहिएँ। यदि बच्चे के शरीर का कोई खुला हुआ अंग छूने से ठंडा जान पडे तो समझ लेना चाहिए कि उसे जो कपड़े पहनाये गये है, वे काफ़ी गरम नही है।

यदि बच्चे का स्वास्थ्य ऐसा हो कि वह साधारण जाड़ा सह सके और उसे ऐसे कपड़े पहनाकर बाहर निकाला जाय जो बहुत अधिक गरम न हों, तो इससे बच्चे की रोगो का सामना करने की शक्ति बहुत बढती है। जिस बच्चे की सांस की नालियों मे सूजन हो गई हो, उसके लिए पाख़ाना साफ़ होना बहुत आवश्यक है, और इस बीमारी की दशा मे उसे हलका और जल्दी पचनेवाला भोजन ही दिया जाना चाहिए।

न्यूमोनिया (Pneumonia)—यदि जुकाम और साँस की नालियों की सूजन की पूरी तरह से चिकित्सा न की जाय तो इससे छोटे बच्चों को न्यूमोनिया नामक भीषण रोग हो जाता है। ज्यो ही माता देखे कि बच्चे को जुकाम हुआ है और उसकी सास की नालियों मे सूजन हो गई है, त्यों ही उसे सचेत हो जाना चाहिए। छोटी अवस्था मे न्यूमोनिया का रोग प्रायः हुआ करता है और अधिकांश बच्चो को यह रोग छः महीने से लेकर दो वर्ष तक की अवस्था मे होता है। इसलिए माता को चाहिए कि इस बीच मे वह बहुत अधिक सचेत रहे और बच्चे के स्वास्थ्य पर पूरा पूरा ध्यान रखे। यदि उसे ज़ोर की खासी हो और वह जल्दी जल्दी सास ले तो उसे समझ लेना चाहिए कि यह रोग जड़ पकड़ रहा है। साथ ही उसे यह भी समझ रखना चाहिए कि बच्चे की अवस्था जितनी ही कम होती है, उतना ही रोग भी उसके लिए भीषण और विकट होता है। जिन बच्चो को पहले वर्ष यह रोग होता है, उनमे से बहुत से इसी कारण मर जाते है। जब पहले से ही बच्चे का पूरा पूरा ध्यान नहीं रखा जाता, उसकी पाचन-शक्ति मे विकार आ जाता है और उसका साधारण स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहता, तब उसे यह रोग होने का बहुत बड़ा डर रहता है; क्योंकि इस प्रकार वह मानो इस रोग के लिए पहले से ही तैयार होता है।

रोकने के उपाय—न्यूमोनिया मुख्यतः एक ऐसा रोग है जिसे पहले से ही न होने देना बहुत अच्छा है, क्योंकि उसके हो जाने पर पीछे बहुत दिक़्क़त उठानी पड़ती है। यदि इसका ठीक तरह से इलाज किया जाय तो इससे बहुत कुछ रक्षा हो सकती है; पर फिर भी सब तरह का इलाज होने पर भी इसके कारण बहुत से बच्चे मर ही जाते है। जहा किसी बच्चे को जुकाम, इन्फ़्लूएन्ज़ा या ब्रान्काइटिस की बीमारी हो, वहाँ समझ लेना चाहिए कि न्यूमोनिया हो जाने की बहुत कुछ सम्भावना है। यदि इन सबमे से किसी एक रोग के होते ही आरम्भ से

पूरा पूरा ध्यान रक्खा जाय और उसका इलाज किया जाय तो न्यूमोनिया के कारण मरनेवाले बच्चों की संख्या बहुत कुछ कम हो सकती है।

ज्यों ही घर मे किसी को न्यूमोनिया हो, त्यों ही तुरन्त डाक्टर को बुलवाना चाहिए। इसमे ऊपर की पूरी व्यवस्था और रोगी की सेवा-शुश्रूषा आदि बातें सबसे अधिक आवश्यक और महत्त्व की हैं। रोगी को पूरी तरह से विश्राम की अवस्था मे रखना चाहिए। ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए कि वह बिस्तर पर पड़ा पड़ा ही पेशाब और पाख़ाने की हाजत पूरी कर लिया करे। जहाँ तक सम्भव हो, उसे बहुत ही कम हिलाया डुलाया जाय; यहाँ तक कि डाक्टर से उसकी परीक्षा कराने के समय भी उसे अधिक हिलने-डोलने न दिया जाय। उसके शरीर मे जितनी शक्ति हो, वह सबकी सब रोग का सामना करने और उसे दूर करने मे ही लगनी चाहिए। रोगी को भोजन कुछ अधिक, पर ऐसा दिया जाना चाहिए जो बहुत जल्दी पच सके। अधिक उत्तम यही होगा कि उसे थोड़ी थोड़ी देर पर थोड़ा थोड़ा भोजन दिया जाय। रोगी को तब तक बहुत ही शान्तिपूर्वक रखना चाहिए जब तक उसके बिलकुल अच्छे हो जाने की पूरी पूरी आशा न हो जाय; और जब किसी बहुत अच्छे डाक्टर का ठीक तरह से इलाज होता हो, तब माता-पिता को कभी निराश नही होना चाहिए।

उपयोगी सूचनायें—ज्यों ही किसी बच्चे को ज़ुकाम हो या उसकी साँस की नालियों मे सूजन (Bronchitis) हो, त्यों ही—

(१) उसे वही कमरा दिया जाय जो घर भर मे सबसे अच्छा हो और जिसमे खूब धूप आती हो।

(२) उसमे सजावट आदि का जो फालतू सामान, मेज़, कुरसी आदि हो, वह सब हटा दिया जाय।

(३) जो लोग यों ही व्यर्थ रोगी को देखने के लिए आवें, उन्हें उससे दूर ही रखना चाहिए; और विशेषतः जिन लोगो को ज़ुकाम या गले के और रोग हों, उन्हे रोगी के पास बिलकुल नहीं आने देना चाहिए।

(४) ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए जिससे थोड़ी थोड़ी देर पर कमरे की गन्दी हवा बाहर निकल जाय और उसमें साफ़ ताज़ा हवा भर जाय।

(५) यदि बच्चा बहुत छोटा हो तो उसे कमरे में एक स्थान से उठाकर दूसरे स्थान पर ले जाने में बहुत सावधानी रखनी चाहिए।

(६) यदि बच्चा कुछ बड़ा हो तो बीच बीच में उसे बिस्तर पर करवट बदला देनी चाहिए। या उसकी स्थिति बदल देनी चाहिए।

(७) बच्चे के लिए अच्छे पोषक भोजन की ठीक व्यवस्था होनी चाहिए।

(८) उसे पीने के लिए खूब पानी देना चाहिए।

यह सदा स्मरण रखना चाहिए कि जिस ज़ुकाम को लोग बहुत ही साधारण समझते हैं, उसके होने पर भी कोमल बच्चों को घातक न्यूमोनिया हो सकता है।

काली खाँसी—काली खाँसी एक छूतवाला रोग है जो एक बच्चे से प्रत्यक्ष रूप से दूसरे बच्चे को हो जाता है। यह रोग मुख्यतः बचपन में ही हुआ करता है। जिस मज़बूत बच्चे की अवस्था कुछ अधिक हो जाय, उसे प्रायः यह रोग होने का डर नहीं रहता। पर जो बच्चा कमज़ोर हो, या बराबर बीमार रहता हो, या बहुत छोटा हो, उसे यदि यह रोग हो जाय तो उसकी जान जोखिम में पड़ जाती है। बहुत छोटे और दूध पीनेवाले जितने बच्चे इस रोग से मरते हैं, उतने अधिक अवस्थावाले बच्चे नहीं मरते। इस रोग में प्रायः कै हुआ करती है। इसलिए बहुत छोटे और दूध पीते बच्चों को इसके कारण पोषण करने योग्य दूध नहीं मिलने पाता। इससे वे बच्चे बहुत ही कमज़ोर हो जाते हैं और उन्हें प्रायः न्यूमोनिया या इसी प्रकार के और भी रोग हो जाते हैं। इस रोग पर ऋतु और स्वास्थ्य-सम्बन्धी दूसरी अवस्थाओं का बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। यदि इस रोग में खाँसी के दौरे दिन-रात में साठ से अधिक हों तो समझ लेना चाहिए कि अवस्था विकट है। पर यदि इसके दौरे इसकी अपेक्षा बहुत कम हों और साधारणतः

बच्चे का स्वास्थ्य अच्छा रहे तो यह रोग जल्दी अच्छा हो जायगा। यह रोग बहुत ही साधारण आदमी भी पहचान सकता है।

रोकने के उपाय—इसका आरम्भ तो साधारण ज़ुकाम की तरह ही होता है, पर खाँसी बढ़ती जाती है और उसके दौरे होने लगते हैं। इसमे थोड़ी देर तक बहुत ज़ोर से और बार बार खासी होती है और तब बच्चा अन्दर को लम्बी साँस खीचता है। बच्चे का रङ्ग नीला पड़ जाता है और माता-पिता बहुत भयभीत हो जाते हैं। उसे कै भी हो सकती है। माता-पिता को यह भी ध्यान रखना चाहिए कि जिन दिनो शहर मे काली खाँसी बहुत फैली हो और उनके बच्चे को साधारण खाँसी भी आवे, तो उन्हे सन्देह करना चाहिए कि कही इसे काली खाँसी तो नही है या आगे चलकर न हो जायगी। घर के जिन लोगो को काली खासी न हो, उन्हे काली खाँसीवाले बच्चों से बहुत दूर रखना चाहिए। इस रोग मे इश्तहारी दवाओ से कुछ भी लाभ नही होता। स्वास्थ्य-रक्षा के नियमो और जलवायु का इस पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। खांसी का ज़ोर घटाने के लिए माता-पिता को चाहिए कि ऐसी व्यवस्था करें जिसमे उनके आस-पास की हवा सदा बिलकुल ताज़ा, साफ़ और गरम रहे और उसमे कुछ भी धूल या गरदा आदि न हो। यदि बच्चे को बिना इधर-उधर अधिक हिलाये-डुलाये उसे काफ़ी ताज़ा हवा पहुँचाई जा सके तो उससे बहुत कुछ लाभ हो सकता है। उसे हवा के तेज़ झोंकों और ठण्डी हवा से भी बचाना बहुत लाभ-दायक होता है। कभी कभी केवल इन्हीं उपायो से काली खाँसी का दौरा बहुत जल्दी रुक जाता है। काली खांसी से बच्चों को प्रायः रात के समय बहुत अधिक कष्ट होता है। इसलिए जिस कमरे मे बच्चा सोता हो, उसमे ताज़ा हवा आने का माता को पूरा प्रबन्ध रखना चाहिए। यदि रोग बहुत विकट हो और बच्चा बहुत दुर्बल हो गया हो तो उसको सदा बिस्तर पर ही लेटाये रखना चाहिए; और विशेषतः जब उसे बुखार हो आवे, तब उठने-बैठने नही देना चाहिए। जाड़े के

दिनों में माता को चाहिए कि बच्चे को कपड़े पहनाने या ओढ़ाने आदि के समय उन्हें किसी प्रकार कुछ गरम कर ले, बहुत ठंढा न रहने दे।

जिस बच्चे को काली खाँसी आती हो, उसके पहनने के कपड़े ऋतु के अनुसार ही होने चाहिएँ।

अन्त में हम यह भी कह देना चाहते हैं कि बच्चे के भोजन और पोषण आदि पर माता को पूरा पूरा ध्यान देना चाहिए और उसे बहुत ही समझदारी के साथ यह निर्णय करना चाहिए कि बच्चे को कब, कितना और कैसा भोजन दिया जाय। इस बीमारी के दिनों में उसे बहुत उग्र और स्वादिष्ट भोजनों का बिलकुल परित्याग कर देना चाहिए; क्योंकि ऐसे पदार्थों से खाँसी का दौरा बहुत बढ़ जाता है।

क्षय या तपेदिक़—यह छूतवाला रोग है और लोग बहुत प्राचीन काल से इस रोग को बहुत ही दुष्ट और भीषण समझते चले आये हैं। इधर कुछ दिनों से सारे संसार में सब लोगों को यह समझाने का प्रयत्न किया जा रहा है कि इस रोग से क्या क्या अनर्थ होते हैं। इस क्षेत्र में जो लोग काम कर रहे हैं, वे इस बात का प्रयत्न करते हैं कि जहाँ तक हो सके, इस रोग से कम लोग मरें। इधर दस वर्षों में यह रोग भारत में इतनी तेज़ी के साथ फैला है कि सरकार और सर्व साधारण दोनों ही इस बात पर बहुत मनोयोग के साथ विचार कर रहे हैं कि देश की परिस्थितियों को देखते हुए इसकी भयंकरताओं को रोकने का क्या प्रयत्न किया जा सकता है। यह रोग वास्तव में समाज के लिए बहुत अधिक भयंकर है और इसकी वृद्धि रोकने के लिए जो प्रयत्न हो, उसका स्वागत होना चाहिए। इस रोग के फैलने का एक बहुत बड़ा कारण दरिद्रता है। जिस देश में जितनी ही दरिद्रता होती है, उस देश में उतना ही क्षय रोग भी फैलता है। इसके सिवा दूसरी बात यह है कि लोगों को इसके सम्बन्ध में विशेष जानकारी नहीं है। इस रोग को रोकने के जो नियम हैं, वे सर्वसाधारण को समझाये जाने चाहिएँ। इस पुस्तक

मे बच्चों को होनेवाले रोगों को रोकने पर विचार किया गया है। पाठकों को बहुत ध्यानपूर्वक यह समझ लेना चाहिए कि दूध पीने-वाले छोटे बच्चों मे और आगे चलकर उनके बड़े होने पर उनको इस रोग के भीषण और नाशक परिणामों से बचाने के लिए क्या क्या काम किये जाने चाहिएँ। साधारणतः लोग यह समझते है कि जीवन की चरम सीमाओं मे अर्थात् एक तो बाल्यावस्था मे और दूसरे बुढ़ापे मे यह रोग नहीं होता, पर यह समझना भूल है। इसी भ्रमपूर्ण विश्वास के कारण लोग इसकी ओर से बहुत निश्चिन्त और उदासीन रहते है जिससे उन्हे इसके भीषण परिणाम भोगने पड़ते है। इस रोग से दूध पीते बच्चों के प्राण नष्ट होने का विशेष रूप से भय रहता है।

बहुत ही छोटी अवस्था के जिन बच्चों को यह रोग होता है, उनमें से अधिकांश बच्चे यह रोग होने के कुछ ही दिनों या हफ़्तो मे मर जाते हैं। कभी कभी यह रोग महीनों बल्कि बरसो घुलाता रहता है और बहुत दिनों तक भारी कष्ट मे रख कर अन्त मे उनके प्राण ले लेता है। पर इस रोग का यहाँ जो यह भीषण चित्र दिखाया गया है, इसे देखकर सर्वसाधारण को बिलकुल दिल नही छोड़ बैठना चाहिए। यदि उचित समय पर स्वास्थ्य-रक्षा के नियमों का ठीक ठीक पालन किया जाय और ज्यो ही यह निश्चय हो जाय अथवा इस बात का सन्देह ही हो कि यह रोग हो रहा है, त्यों ही यदि पोषण की ठीक और उचित व्यवस्था की जाय तो बच्चो और वयस्क पुरुषों का शरीर इस योग्य हो सकता है कि इस रोग को दूर करके उस पर विजय प्राप्त कर सके। पर यह बात माता-पिताओ अथवा उन लोगों के साधनों और सावधानी पर ही पूर्णरूप से निर्भर करती है जिनकी देख-रेख मे छोटे बच्चे रहते हैं। माता-पिता का उद्देश्य यह होना चाहिए कि वे बच्चो की जीवनी शक्ति बढ़ाने का प्रयत्न करें और इस प्रकार उन्हें इस रोग की छूत न लगने दें और उनमे इतनी शक्ति उत्पन्न करें कि वे इसकी नाशकता के मुक़ाबले मे ठहर सकें।

यहाँ कुछ ऐसी बातें बतलाई जाती हैं, जिनसे पाठकों को पता चल जायगा कि दूध पीनेवाले अथवा उनसे कुछ बड़े बच्चों में यह रोग किस प्रकार उत्पन्न होता और बढ़ता है। यदि ये सब बातें पूरी तरह से समझ ली जायँ तो इस रोग को रोकना बहुत सहज हो जाय। कुछ बच्चे बहुत ही दुर्बल माता-पिता से उत्पन्न होते हैं और जन्म से बहुत ही दुर्बल होते हैं। यह नहीं समझ लेना चाहिए कि बच्चे को इस रोग का अंश उनके माता-पिता से ही प्राप्त हो जाता है; पर हाँ, माता-पिता से उन्हें इतनी दुर्बलता अवश्य प्राप्त होती है कि वे इस रोग के शिकार हो जाते हैं।

गन्दे और स्वास्थ्यनाशक स्थानों में रहने और बहुत ही कम पोषक भोजन मिलने के कारण शरीर इस रोग का रोगी होने के योग्य हो जाता है। जिस बच्चे के पिता या माता को यह रोग होता है, वह सहज में इस रोग का शिकार हो जाता है और विशेषतः ऐसी अवस्था में जब कि वह इस रोग के रोगियों के बीच में रहता हो। जब इस रोग का रोगी खाँसता, बोलता, छींकता या थूकता है, तब इस रोग के कीटाणुओं से भरा हुआ कुछ कफ या थूक आदि निकलता है और उसके सूख जाने पर उसके छोटे छोटे कण धूल में मिल जाते हैं। वे ही कण छोटे छोटे बच्चों के रेंगने के समय साँस लेने पर उनके शरीर में प्रवेश कर जाते हैं। इस प्रकार रोग की छूत लग जाती है—शरीर में यह रोग प्रवेश कर जाता है।

प्रायः यह भेद बच्चों से ही खुलता है कि इनके माता-पिता को भी यह रोग है। बच्चे की देख-रेख के लिए जो नौकर और दाइयाँ रक्खी जायँ, उनकी भी बहुत अच्छी तरह जांच कर लेनी चाहिए; क्योंकि प्रायः उनके साथ मिलने-जुलने से भी छोटे बच्चों को यह रोग हो जाता है।

ग़रीब लोगों के घरों में इस रोग के कीड़ों को रहने के लिए विशेष स्थान मिलता है, क्योंकि वे ऐसी घनी बस्तियों में रहते हैं जिनमें

हवा या सूर्य का प्रकाश बिलकुल आ ही नहीं सकता। इस रोग के कीटाणुओं से भरी हुई धूल तो साँस के साथ बच्चों के शरीर में चली ही जाती है; इसके सिवा बच्चे जो प्रायः गन्दी चीज़ें, जैसे चुसनियाँ, खिलौने आदि, मुँह में रख लिया करते हैं, उनके द्वारा भी यह रोग बच्चों के शरीर में पहुँच जाता है। जो बच्चे ज़मीन पर घुटनों के बल चला करते हैं, उन्हें इस प्रकार यह रोग होने की विशेष सम्भावना रहती है। धूल, मिट्टी आदि से भरे हुए बड़े बच्चों के हाथ के द्वारा भी यह रोग शरीर में पहुँच जाता है, इसलिए माताओं को चाहिए कि वे बच्चों को भोजन कराने के समय उनके हाथ खूब अच्छी तरह धुला लिया करें।

रोकने के उपाय—इस बात का प्रयत्न करना बहुत ही आवश्यक है कि छोटी अवस्था में बच्चों को इस रोग की छूत न लग जाय, क्योंकि प्रायः इसी छोटी अवस्था में यह रोग शरीर में घर करता है, चाहे कुछ बड़े होने तक भी यह रोग स्पष्ट रूप से अपने लक्षण न प्रकट करे। इस रोग को रोकने के लिए जहां तक हो सके, खूब खुली हवा और धूप में रहना आवश्यक है। इन प्राकृतिक साधनों से बच्चों में इस रोग का सामना करने की शक्ति बढ़ती है।

बच्चे को छातियों का दूध पिलाने से उनकी जीवनी शक्ति बढ़ती है। पर यदि माता अथवा दूध पिलानेवाली दाई को यह रोग हो तो उसका दूध कभी और किसी दशा में भी बच्चे को नहीं पीने देना चाहिए। यदि बच्चे को कृत्रिम रूप से दूध पिलाया जाता हो तो पिलाया जानेवाला दूध ऐसा होना चाहिए जिसमें इस रोग के कीटाणु बिलकुल न हों। माता-पिता का यह कर्त्तव्य है कि वे अपने बच्चे को साफ़ और अच्छा दूध पिलाने पर पूरा पूरा ध्यान दें। बच्चे को दूध बहुत सोच समझकर देना चाहिए और उसकी मात्रा आदि के सम्बन्ध में बहुत ध्यान रखना चाहिए। यदि बच्चे को आवश्यकता से अधिक या कम दूध पिलाया जायगा तो अवश्य ही उसे हानि पहुँचेगी। इन

दोनों ही बातों से उसकी रोग का सामना करनेवाली शक्ति घटेगी।

नियमित रूप से व्यायाम, स्नान और शरीर की मालिश करने से बच्चे के रग-पुट्ठे मज़बूत होते हैं और खुली हवा में सांस लेने का व्यायाम करने से फेफड़े मज़बूत होते हैं। प्रायः धनवान् लोगों के बच्चे जो बहुत दुबले-पतले और पीले दिखाई पड़ते हैं, उसका कारण यही होता है कि अधिक भोजन करने के कारण उनका स्वास्थ्य नष्ट हो जाता है। बच्चों को घर के अन्दर चुपचाप पड़े नहीं रहना चाहिए, बल्कि बाहर निकलकर खूब ताज़ी और साफ़ हवा खानी चाहिए और व्यायाम करना चाहिए। नहीं तो वे पीले पड़ जायँगे और कमज़ोर हो जायँगे। ऐसे बच्चे बहुत जल्दी इस रोग का शिकार हो जाते हैं।

बच्चों को इस रोग से बचाने का सबसे अच्छा उपाय यह है कि जहाँ कोई अजनबी आदमी आवे, वहाँ वे यह सन्देह कर लें कि कहीं इसे क्षय-रोग तो नहीं है; और बहुत छोटे बच्चों को अजनबी आदमियों की गोद में न जाने दें और वे लोग बच्चों को चूमने न पावें। जिन लोगों को यह रोग रहता है, उनके खांसने, बोलने, छींकने और चूमने आदि से तो बच्चों को यह रोग होता ही है, बल्कि उनके पास रहने से भी बच्चों को यह रोग हो जाने का भय रहता है। ऐसे लोगों से, फिर चाहे वे बच्चे के माता-पिता या घर के ही लोग क्यों न हों, बच्चों को बहुत दूर रखना चाहिए और उन्हें कभी ऐसे लोगों के साथ नहीं रहने देना चाहिए। जिन लोगों को यह रोग हो, उनके बिस्तर पर बच्चे को कभी सुलाना नहीं चाहिए। बहुत से ऐसे बुड्ढे हुआ करते हैं जो बारहों महीने दिन-रात खांसा करते हैं। ऐसे लोगों को साधारण खांसी का रोग नहीं होता, बल्कि फेफड़ों का तपेदिक होता है। इसलिए छोटे और विशेषतः दूध पीनेवाले बच्चों को कभी ऐसे बुड्ढे आदमियों के पास नहीं रहने देना चाहिए। घर के मालिक का

यह कर्त्तव्य है कि अगर घर में किसी को पुरानी खाँसी हो और उसके मुँह से बराबर कफ आदि निकलता रहता हो तो वह उस खाँसी के कारण का पता लगावे और उसके थूक या कफ की कई बार अच्छी तरह जांच करावे; और इस बात का प्रबन्ध करे कि जब तक वह खाँसी बनी रहे, तब तक उसके अनुसार स्वास्थ्य-रक्षा के नियमों का ठीक ठीक पालन हो। जब घर मे किसी को यह रोग हो, तब माता को इस बात का पूरा पूरा ध्यान रखना चाहिए कि इस रोग के कीड़े थूक और खखार आदि के द्वारा चारो ओर फैलने न पावें; क्योंकि ये सब चीज़ें सूखकर धूल मे मिल जाती है और हवा के झोंकों के साथ बच्चों के शरीर के अन्दर चली जाती है और तब उन्हे यह रोग हो जाता है। इस रोग के रोगी जिन बरतनो या थालियों आदि मे खाते पीते हों, उन बरतनों मे बच्चो को कभी भोजन न देना चाहिए। जिन माता-पिता को क्षय रोग हो, उन्हे बच्चो का भोजन कभी चखना नहीं चाहिए और न उनके खाने की चीज़ें मुँह से फूंक कर ठंढी करनी चाहिए।

जब माता-पिता बड़े नगरो मे अपने रहने का घर बदले या गरमी के दिनों में एक स्थान से दूसरे स्थान को जायँ, तब उन्हें विशेष रूप से सावधान रहना चाहिए। यह पता लगा लेना चाहिए कि जो मकान हम ले रहे है, उनमें पहले कौन और कैसे लोग रहते थे। यदि उस घर मे क्षय का कोई रोगी रह चुका हो या मर गया हो तो उसे बिना पूरी तरह से और वैज्ञानिक रीति से साफ़ कराये और उसमें के कीटाणुओं को नष्ट किये अपने व्यवहार मे नहीं लाना चाहिए। इन्ही कारणों से किराये के क़ालीन और मेज़-कुर्सियां आदि नही लेनी चाहिएँ। यदि ऐसी चीज़े ली भी जायँ तो उनका व्यवहार करने से पहले उन्हें कई दिनो तक ख़ूब अच्छी तरह तेज़ धूप में रख कर साफ़ कर लेना चाहिए। फिर पहले एक बार ऐसा करके ही निश्चिन्त नहीं हो जाना चाहिए। बीच बीच में बार बार उन्हे धूप दिखलाते रहना चाहिए और मकान मे पूरी तरह से धूप और हवा आने का प्रबन्ध रखना चाहिए।

इससे क्षय रोग के कीड़ों को नष्ट करने मे बहुत कुछ सहायता मिलेगी। ऐसी अवस्था मे बच्चो के कमरे मे मेज़, कुरसी आदि नही रहने देना चाहिए, क्योंकि इधर-उधर घुटनो के बल चलने से बच्चे किसी प्रकार रोके नहीं जा सकते। जो सजावट का सामान किराये पर लिया गया हो, उस पर पहले एक साफ़ चादर बिछा देनी चाहिए और तब बच्चों को उन पर बैठने या लेटने देना चाहिए।

जिन बच्चों को क्षय रोग हो, उनकी देख-रेख और पालन-पोषण बहुत ही सावधानी के साथ होना चाहिए। यदि उन्हें ज़ुकाम या खाँसी हो तो तुरन्त किसी अच्छे डाक्टर से उनकी चिकित्सा करानी चाहिए। यदि उन्हे खसरा या काली खाँसी हो तो उन्हें बीमारी की दशा मे और उसके बाद कुछ अच्छे होने की दशा मे साफ़ और ताज़ी हवा पहुँचाने का पूरा प्रबन्ध होना चाहिए; और स्वास्थ्य-रक्षा के सब नियमों का पूरा पूरा पालन करना चाहिए, जिसमें रोग बढ़ कर क्षय का रूप न धारण कर ले। जिन बच्चो का क्षय रोगवाले परिवार मे जन्म हो, उन्हें अच्छा और पोषक भोजन दिया जाना चाहिए; और जहा तक हो सके, उन्हें शारीरिक और मानसिक परिश्रम और चिन्ता आदि से बचाना चाहिए।

पहाड़ की हवा का बच्चो के स्वास्थ्य पर बहुत ही अच्छा और बलकारक प्रभाव पड़ता है। यदि माता-पिता की आर्थिक अवस्था अच्छी हो तो उन्हें चाहिए कि वे गरमी के दिनों में अपने उन बच्चों को पहाड़ पर भेज दिया करें जिन्हे क्षय रोग हो।

खसरा—छोटे बच्चों को होनेवाला यह भी एक बहुत छूतवाला रोग है। जो बच्चे इस रोग के प्रभाव-क्षेत्र में रहते है, प्रायः उन सभी को यह रोग हो जाता है। माता-पिता इस रोग की प्रायः कोई विशेष चिकित्सा नहीं करते। पर यह बहुत ही भीषण रोग है जो बहुधा छोटे बच्चों के लिए घातक सिद्ध होता है। इसलिए जब बच्चे को यह रोग हो, तब माता-पिता को चाहिए कि उसे किसी अच्छे और अनुभवी चिकित्सक की देख-रेख मे रखें।

इसमे पहले बच्चे को साधारण जुकाम होता है, उसकी आँखो और नाक से पानी बहता है, उसे छींके आती है और बुख़ार हो आता है। कभी कभी तो बहुत तेज़ बुख़ार हो आता है। चेहरे मे सूजन हो जाती है। बुख़ार होने के चौथे या पाँचवे दिन इसके दाने दिखाई पड़ने लगते हैं। पहले ये दाने कान के नीचे और चेहरे पर निकलते है और तब धीरे धीरे सारे सरीर मे फैल जाते हैं। ये दाने क़रीब छः दिन तक रहते है। खसरे मे जो खाँसी होती है, उससे बच्चे को बहुत अधिक कष्ट होता है। इसमे साथ साथ साँस की नालियों की सूजन या ब्रान्काइटिस (Bronchitis) नामक रोग भी हो जाता है जो आगे चल कर न्यूमोनिया का रूप भी धारण कर सकता है। जिन दिनों बच्चे को बुख़ार आता हो, उन दिनों यदि उसे भोजन देने मे कुछ भूल की जाय और उसे ठोस भोजन दिया जाय तो उसके पाचन मे भी विकार आ जाने की सम्भावना रहती है।

(१) उपयोगी सूचनायें—सेवा-सुश्रूषा बहुत ही ध्यानपूर्वक करने की आवश्यकता होती है।

(२) रोगी को बहुत काफ़ी साफ़ और ताज़ी हवा पहुँचानी चाहिए; पर साथ ही इस बात का भी पूरा पूरा ध्यान रखना चाहिए कि उन्हें हवा के तेज़ और ठंढे झोके न लगने पावें।

(३) उसका भोजन सदा तरल या द्रव रूप मे होना चाहिए।

मलेरिया—यह भी एक छूतवाला रोग है और मच्छड़ के काटने से शरीर के रक्त मे एक विशेष प्रकार के कीड़ों के पहुच जाने से होता है। यह रोग छोटे बड़े सभी को हो सकता है; इसके लिए उमर का कोई बन्धन नही है। दूध पीते और छोटे बच्चों को यह रोग होने का और भी अधिक डर रहता है और उन्हें नया और पुराना दोनो ही प्रकार का यह रोग हो सकता है; अर्थात् यह भी हो सकता है कि एक बार होने पर जल्दी पीछा न छोड़े और पुराना पड़ जाय। जब यह बुख़ार एक या दो बार होता है, तब उस पर विशेष ध्यान

नहीं दिया जाता, क्योंकि बच्चों को बुख़ार होना माता-पिता एक साधारण सी बात समझते हैं। हां जब इसके आक्रमण बार बार होने लगते हैं, तब उन्हें उसकी विशेष चिन्ता होने लगती है। बच्चों को मलेरिया के विष से होनेवाला बुखार बहुत तेज़ हो सकता है; पर वह दिन-रात में नित्य एक बार बिलकुल उतर जाता है। लेकिन केवल इसी कारण माता-पिता को यह उचित नहीं है कि वे आरम्भ मे इसकी चिकित्सा की ओर से निश्चिन्त या उदासीन रहें। बार बार यह बुखार होने से शरीर बहुत दुर्बल हो जाता है और रोगों का सामना करने की शक्ति इतनी घट जाती है कि जब यह बुख़ार आगे चलकर न्यूमोनिया या क्षय रोग का रूप धारण करता है, तब बच्चा उसके कारण बहुत जल्दी मर जाता है। बहुत से बच्चों को जो फेफड़े के रोग हुआ करते हैं, यदि उनका मूल देखा जाय तो पता चलेगा कि वे रोग इस मलेरिया ज्वर की पूरी पूरी चिकित्सा न करने और इससे बे-परवाह रहने के कारण ही होते हैं। इसलिए इस रोग के होते ही आरम्भ मे इसकी पूरी पूरी चिकित्सा करनी चाहिए, जिसमें यह पुराना होकर जड़ न पकड़ ले। यदि मलेरिया का इलाज आरम्भ मे ही और पूरा पूरा किया जाय, तो समाज मे क्षय रोग के जो इतने अधिक रोगी देखने मे आते हैं, उनकी संख्या बहुत ही घट जाय।

(१) रोकने के उपाय—जिन प्रान्तों मे मलेरिया होता हो, वहा मच्छरों का पूरी तरह से नाश कर देना चाहिए। दलदल-वाली भूमि को अच्छी तरह साफ़ कर देना चाहिए; क्योंकि गन्दे तालावों और दलदलों आदि के कारण उनके आस-पास रहनेवाले दूध-पीते और दूसरे बच्चों को मलेरिया का आक्रमण होने का बहुत भय रहता है। यह काम सरकार, म्यूनिसिपैल्टिया और दूसरी स्थानीय संस्थायें कर सकती हैं।

(२) बीच बीच मे कमरों में धूप और इसी प्रकार के दूसरे सुग-न्धित द्रव्य जलाने चाहिएँ, जैसा कि प्राचीन काल में भारत मे हर घर

मे हुआ करता था। इससे मलेरिया ज्वर का प्रसार बहुत कम हो जाता है। मैन्सन साहब का मत है कि सुखाये हुए सूरजमुखी के फूलों का धुआँ घर मे करना चाहिए।

(३) रसोई-घर मे और उसके आस-पास गन्दगी नहीं रहने देनी चाहिए; क्योंकि उससे मक्खियाँ और मच्छर बहुत बढ़ते है।

(४) कमरे के दरवाज़ो और खिड़कियो मे परदे लगे रहने चाहिएँ और बच्चो की पलंगड़ियो पर मसहरी लगी रहनी चाहिए।

(५) जहाँ तक हो सके, ऐसा प्रबन्ध करना चाहिए कि बच्चो को सरदी न लगने पावे और जुकाम न हो सके।

(६) मलेरिया ज्वर की सबसे अच्छी दवा कुनीन है। इस रोग को दूर करने के लिए यह हर घर में रखी जाने के योग्य है। इसका व्यवहार कराने से बच्चों को कोई कष्ट नहीं होता और यह बुख़ार बहुत जल्दी अच्छा हो जाता है।

पेचिश या मरोड़—भारत में बच्चो को यह रोग प्रायः हो जाया करता है। इससे बच्चे प्रायः बहुत अधिक दुबले और कमज़ोर हो जाते है और कभी कभी तो मर भी जाते है। इसमे लेसदार मल निकलता है, जिसमे कुछ खून भी मिला होता है; पेट मे बहुत दरद होता है और कठिनाई से पाख़ाना उतरता है और रोगी बहुत दुबला हो जाता है। ये सब लक्षण देखकर एक साधारण आदमी भी समझ लेता है कि यह पेचिश या मरोड़ का रोग है। जिन बच्चो को यह रोग होता है, वे प्रायः पाख़ाने मे ही बैठे रहते है और वहा से हटना नहीं चाहते। दिनरात में दस से पचास बार तक और कभी कभी इससे भी अधिक पाख़ाने होते है। बच्चे को बार बार पाख़ाना फिरने के लिए बहुत ज़ोर लगाना पड़ता है, उसके पेट मे बहुत तेज़ दरद या मरोड़ होता है और उसे बहुत प्यास लगती है जिससे उसे बहुत अधिक कष्ट होता है। रात को उसे अच्छी तरह नींद नही आती और न भूख ही लगती है। पाख़ाने के रास्ते ख़ून

जाने के कारण बच्चे का बल बहुत घट जाता है और वह बहुत दुबला दिखाई पड़ने लगता है। यदि इस रोग का अच्छी तरह इलाज न किया जाय तो यह बार बार होने लगता है। जो मल आदि निकले, वह अच्छी तरह बहा दिया जाय या दूर कर दिया जाय। माता को चाहिए कि वह स्वयं अपने कल्याण के विचार से भी और आस पास रहनेवाले दूसरे लोगों के कल्याण के विचार से भी सफ़ाई का बहुत अधिक ध्यान रखे।

टाइफ़ायड ज्वर—यह छूतवाला रोग भी बच्चों को प्रायः हुआ करता है। माँ का दूध पीनेवाले बच्चों को भी यह रोग होता हुआ देखा जाता है। सम्भवतः यह स्नान करने के जल की ख़राबी के कारण होता है। साधारणतः जल, पेशाब और मक्खियों के द्वारा यह रोग फैलता है। इस रोग का मूल आँतों में होता है और यह भी एक प्रकार के कीड़ों के ही कारण होता है। माता-पिता के लिए यही जान लेना काफ़ी है कि इस बुख़ार में रोगी को दो या तीन हफ़्तों तक लगातार बुख़ार चढ़ा रहता है। कुछ अवस्थाओं में तो यह बुख़ार चालीस दिनों तक या इससे भी और अधिक दिनों तक रहता है। सवेरे के समय प्रायः हलका और सन्ध्या के समय तेज़ बुख़ार रहता है।

अधिक तेज़ बुख़ार रहने, भूख घट जाने, अधिक दस्त होने और रात को पूरी तरह से नींद न आने के कारण शरीर बहुत दुर्बल हो जाता है। पर जब यह रोग अच्छा हो जाता है, तब बच्चा फिर बहुत जल्दी स्वस्थ और बलवान् हो जाता है। इस टाइफ़ायड ज्वर की पहचान करने के लिए माता-पिता प्रायः यह देखते हैं कि बच्चे के पेट, छाती और गरदन पर दाने निकले हैं या नहीं। पर उन्हें यह स्मरण रखना चाहिए कि वे दाने सहज में नहीं देखे जा सकते; क्योंकि वे बहुत ही थोड़े समय के बाद नष्ट हो जाते या दब जाते हैं। इसके सिवा उन्हें यह भी स्मरण रखना चाहिए कि कुछ रोगियों को सारी बीमारी की अवस्था में ये दाने बिलकुल निकलते ही नहीं।

रोकने के उपाय—बच्चो को इस रोग से बचाने के जो उपाय किये जाते हैं, उनमे प्रायः अधिक सफलता नही होती। पर यदि साफ़ पानी का व्यवहार किया जाय, टाइफायड ज्वर के रोगी का पाख़ाना और पेशाब खूब अच्छी तरह साफ़ करके बहा दिया जाय और उस स्थान पर कीटाणुनाशक उपाय (Disinfection) किये जायँ, खाने पीने की चीज़ो को मक्खियो से बचाया जाय और जब बच्चे धूल-मिट्टी में खेलकर आवें, तब उनके हाथ-पैर आदि खूब अच्छी तरह साफ़ करके धुला दिये जायँ तो इस रोग से बच्चो की बहुत कुछ रक्षा हो सकती है। पाख़ाना फिरने और पेशाब करने की जगह पर यदि फ़िनाइल डाल दी जाय और पहनने के कपडे गरम पानी मे अच्छी तरह उबाल लिये जायँ तो बहुत ही अच्छा है। जो लोग टाइफायड के रोगियों की सेवा-सुश्रूषा करते हों, उन्हें अपने हाथ सदा खूब अच्छी तरह साफ़ कर लेने चाहिएँ।

इस ज्वर की अवस्था में उबाल कर ठंडा किया हुआ पानी बहुत अधिकता से देना चाहिए। रोगी के रहने के कमरे में सदा साफ़ और ताज़ी हवा आने देनी चाहिए और ऐसा प्रबन्ध होना चाहिए कि उसमे हवा और रोशनी अच्छी तरह आवे। मुँह खूब अच्छी तरह साफ़ कराना चाहिए जिसमे मुँह के अन्दर इस रोग के कीटाणु अपना बुरा प्रभाव न डाल सके। यह काम गरम पानी से कुल्ला कराके अच्छी तरह किया जा सकता है। बच्चे की सब चीज़ो की सफ़ाई पर और विशेषतः उसके पाख़ाना फिरने के बाद की सफ़ाई पर बहुत अधिक ध्यान देना चाहिए। ऐसा करने से रोगी की पीठ में वे दाने और ज़ख़म आदि न हो सकेंगे जो बिस्तर पर पड़े रहने के कारण हुआ करते हैं। बीच बीच में बच्चे की करवट बदल देने से भी यही बात होती है।

उपयोगी सूचनायें—इस रोग में बेचारे छोटे बच्चों की कोई अप्रिय और कष्टदायक चिकित्सा करने के बदले उन्हें यों ही छोड़ देना अधिक उत्तम है। अनेक प्रकार की दवायें देने से बच्चों के टाइफायड

ज्वर का न तो समय ही कम होता है और न उसकी विकटता ही घटती है। हां, कभी कभी वे दवायें विशेषरूप से घातक अवश्य सिद्ध होती है। कभी कभी तो डाक्टर लोग नुसखों मे ऐसी दवाये भर देते है जो बच्चे के स्वस्थ होने मे और भी बाधक होती है। छोटे बच्चे यह बुख़ार बहुत अच्छी तरह सह सकते है और यदि उन्हे अधिक बाधा न पहुँचाई जाय तो वे १०२ डिग्री या इससे भी अधिक बुख़ार होने पर भी अच्छी तरह से बिस्तर पर बैठकर खेल सकते है।

इस रोग की दशा मे बच्चे को पोषक भोजन देने का पूरा ध्यान रखना चाहिए। इस रोग में यह बात सबसे अधिक महत्त्व की है। जब तक यह बुख़ार रहे, तब तक उसे केवल दूध, शोरबा, रस या इसी प्रकार के और तरल पदार्थ ही खाने को देने चाहिएँ। ये चीज़े थोड़ी थोड़ी देर पर और थोड़ी थोड़ी मात्रा मे दी जानी चाहिएँ। दो से तीन घंटों के अन्तर पर ये चीज़ें दी जा सकती है। जब तक यह बुख़ार रहता है, तब तक प्रायः कुछ खाने पीने को जी नही चाहता; और यदि बच्चा ज़िद्दी होता है तो तरल पदार्थ पीने से इनकार कर देता है। ऐसी अवस्था में माता-पिता को चाहिए कि वे उसकी नाक के नथने बन्द कर दे जिसमे वह मुँह खोल दे और उसके मुँह खोलने पर वह तरल पदार्थ उसके मुँह मे डाल दे; और जब तक वह पदार्थ उसके गले से नीचे न उतर जाय, तब तक उसकी नाक बन्द ही रखें। दवायें देने के लिए भी यही उपाय किया जा सकता है।

जब यह बुख़ार घटने लगता है, तब बहुत ज़ोरों की भूख लगती है और बच्चा प्रायः ऐसी चीज़े खाने को मांगता है जो उसे सहज मे पच नहीं सकतीं। इसलिए उचित समय से पहले ही कभी ठोस भोजन देकर उसकी खाने की इच्छा पूरी नही करनी चाहिए। यदि माता-पिता बच्चे की दशा पर दया करके उसे मांस, रोटी, मिठाई या इसी प्रकार का और कोई ठोस पदार्थ खाने को दे देगे, तो वह बहुत अधिक घातक होगा। बुख़ार घटने की अवस्था मे या उसके बाद

कमज़ोर रहने की दशा में यदि माता-पिता दृढ़ता से काम न लेंगे और बच्चे को किसी प्रकार का ठोस भोजन दे देंगे, तो रोग के फिर से उभड़ आने का भय रहेगा। बुखार पूरी तरह से उतर जाने के कम से कम एक सप्ताह बाद तक बच्चे को कभी ठोस भोजन न देना चाहिए; और यदि यह रोग अधिक बिकट और भीषण रूप में हुआ हो तो इससे भी कुछ और अधिक समय तक कभी ठोस भोजन नहीं देना चाहिए।

ग्यारहवाँ प्रकरण

बच्चों में मस्तिष्क के विकार[1]

माता के प्रति——इस प्रकरण मे यह बतलाया गया है कि यदि जन्म से ही बच्चे के मस्तिष्क मे किसी प्रकार का विकार हो तो घर मे ही उसका प्रबन्ध और इलाज करने के लिए तुम्हें किन किन बातो के जानने की आवश्यकता है।

सबसे पहले तो तुम्हे यह जानना चाहिए कि जो समस्या तुम्हारे सामने उपस्थित है, वह कितने अधिक महत्त्व की है। जिन बच्चों के मस्तिष्क मे किसी प्रकार का विकार होता है, वे जन्म लेने के समय से लेकर मरने के समय तक माता-पिता के लिए बहुत ही चिन्ता और दुःख का कारण हुआ करते हैं और दूसरे लोगो को भी उनसे बहुत कुछ कष्ट पहुँचता है। वे समाज के लिए भी भय का कारण होते हैं, क्योंकि वे समाज को बहुत कुछ हानि भी पहुँचा सकते हैं और उत्पात या उपद्रव भी कर सकते है। इसके सिवा वे कुछ धन नहीं कमाते और माता-पिता पर अपने खर्च का जो व्यर्थ भार लादते है, वह अलग है। बच्चों का कोई ऐसा रोग नहीं है जिसमे माता-पिता के धैर्य और अध्यवसाय की उतनी अधिक परीक्षा होती हो जितनी कि

---

(१) इस प्रकरण का अधिक अंश एडिन्बरा के डा० जान थाम्सन के उपदेशो के आधार पर लिखा गया है, जो मस्तिष्क-सम्बन्धी विकारो की चिकित्सा करने मे सारे संसार मे प्रसिद्ध हैं। मई १९२४ के एडिन्बरा मेडिकल जरनल मे मानसिक त्रुटियों के सम्बन्ध मे उनके जो व्याख्यान छपे थे, उनसे मुझे इस प्रकरण के लिखने मे विशेष सहायता मिली है और इसलिए मैं उनका बहुत अधिक ऋणी हूँ।

बच्चों की मानसिक त्रुटि मे होती है। साथ ही तुम्हे यह भी समझ रखना चाहिए कि भारत में ऐसी बहुत ही थोड़ी सस्थायें हैं जो इस प्रकार के बच्चों की ठीक तरह से देख-रेख करती हों। इसलिए ऐसे बच्चे को पूरी तरह से स्वयं तुम्हारे ही ज्ञान, बुद्धिमत्ता, धैर्य और अध्यवसाय पर निर्भर रहना पड़ता है। हम ज़ोर देकर यह बात भी समझा देना चाहते हैं कि यदि तुम समय रहते ही यह समझ लोगी कि तुम्हारे बच्चे के मस्तिष्क मे किसी प्रकार का विकार है, तो सम्भव है कि तुम्हारे इलाज का बहुत कुछ अच्छा फल हो सके; या कम से कम यही होगा कि इस तरह के बच्चे स्वयं अपने आपको और दूसरों को जो कष्ट पहुँचाते हैं, वही बहुत कुछ कम हो जायगा।

इसलिए तुम उन सब उपायों को बहुत अच्छी तरह सीखने का दृढ़ निश्चय कर लो जिनसे ऐसे बच्चों की व्यवस्था करने में सफलता हो सकती है। इस ज्ञान से तुममे आत्म-विश्वास उत्पन्न होगा, तुम्हारा दुःख और चिन्ता दूर हो जायगी और मनुष्य-जाति में जो बच्चे प्रकृति की ओर से ही अभागे उत्पन्न होते हैं, उनके प्रति तुममे सहानुभूति, सहनशीलता और दया आदि के उच्च और श्रेष्ठ गुण उत्पन्न होंगे।

आरम्भिक बातें—मानसिक त्रुटि या विकार की ठीक और पूरी व्याख्या करना बहुत अधिक कठिन है; पर माता-पिता को मार्ग दिखाने के लिए फिर भी यहां इतना कहा जा सकता है कि जिन बच्चों मे नीचे लिखी त्रुटियां पाई जायँ, उन्हें त्रुटिपूर्ण मस्तिष्कवाले बच्चों के वर्ग मे रखा जा सकता है।

मानसिक त्रुटि मे केवल बुद्धिमत्ता या समझदारी का अभाव ही नहीं होता, बल्कि इच्छा-शक्ति की भी कमी होती है। जिस बच्चे के मस्तिष्क मे किसी प्रकार की त्रुटि या विकार होता है, वह अपने करने के लिए जो बात निश्चित करता है, उसे पूरा करने के लिए उसमे यथेष्ट दृढ़ता नहीं होती। वह न तो कोई नया काम करने का ढंग

सोच सकता है और न उसका परिणाम ही समझ सकता है। वह अच्छी और बुरी बातों को नहीं पहचान सकता; समझदारी से काम नहीं ले सकता; और जिस ढंग से कोई काम करना चाहिए, उस ढंग से काम नहीं कर सकता और अपने बराबर के बच्चों के समान शिक्षा नहीं पा सकता। उसमे साधारण समझ इतनी कम होती है कि न तो वह अपनी उमर ही बतला सकता है और न बीस तक गिनती ही गिन सकता है। यह ठीक है कि कहीं तो मस्तिष्क-सम्बन्धी विकार बहुत कम और कही बहुत अधिक होते हैं; लेकिन फिर भी ऊपर जो कई बातें बतलाई गई हैं, उनसे माता-पिता यह समझ सकते है कि उनके बच्चों मे इनमें से कोई लक्षण है या नहीं। जिस बच्चे में मस्तिष्क-सम्बन्धी विकार बहुत अधिक होता है, वह साधारण शारीरिक संकट आने पर भी अपनी रक्षा नहीं कर सकता, न अपनी जीविका के लिए कुछ धन ही कमा सकता है; और न साधारण परिणामदर्शिता के साथ अपना या अपने कामो का ठीक ठीक प्रबन्ध ही कर सकता है। अथवा बहुत ही ध्यानपूर्वक उसका पालन-पोषण और शिक्षा आदि का प्रबन्ध करने पर भी उसकी तबीयत का झुकाव अनेक प्रकार के अपराध करने की ओर हो सकता है, जो दंड देने से या तो बिलकुल रुकती ही नहीं और या बहुत ही कम रुकती है। तात्पर्य यह कि वह अपने आपको परिस्थितियों के अनुकूल बनाने में असमर्थ होता है।

यहाँ विशेषतः ऐसे ही छोटे बच्चों के सम्बन्ध में विचार किया जाता है जिनमें आगे चलकर इस प्रकार के दोष उत्पन्न हो सकते या विकसित हो सकते हैं। इस प्रकरण मे यही बतलाया जायगा कि ये दोष किन किन कारणों से होते है, आरम्भ मे ही उनकी पहचान किस प्रकार की जानी चाहिए और ऐसे बच्चों की किस प्रकार व्यवस्था की जानी चाहिए।

आरम्भ में ही किसी छोटे बच्चे को देखकर यह समझ लेना कोई सहज काम नहीं है कि इसके मस्तिष्क मे किसी प्रकार का विकार या

त्रुटि है। पर यदि नीचे लिखी बातो पर माता पूरा पूरा ध्यान देगी, तो यदि उसके बच्चे मे किसी प्रकार का मस्तिष्क-सम्बन्धी दोष होगा, तो वह अपेक्षाकृत कुछ जल्दी ही उसे समझ जायगी और परिस्थितियों के अनुसार उसे दूर करने के उपाय भी जल्दी कर सकेगी। बच्चे के जन्म लेने के बहुत दिनो बाद तक भी स्वयं माता-पिता यह नही जानते कि बच्चे में किसी प्रकार का मस्तिष्क-सम्बन्धी विकार है या नही। यह प्रायः ठीक ज्ञान न होने के कारण ही होता है। पर किया क्या जाय; मातायें अपने बच्चे की अपूर्णतायें और दोष आदि देखने मे बिलकुल अन्धी ही होती है; उन्हे अपने बच्चे का कोई दोष या अपूर्णता दिखाई ही नहीं देती।

कारण—बच्चे की इस अवस्था के लिए माता-पिता ही कम या अधिक अंश मे उत्तरदायी होते है; और जो अनुचित काम वे जान बूझकर या अनजान मे करते है, उनका दंड उन्हे भुगतना ही पड़ता है। शराब और गरमी आदि के कुछ ऐसे विष होते है जो यदि माता-पिता के शरीर मे हो, तो उनसे उनकी सन्तान को भी हानि पहुँचती ही है। यदि माता या पिता किसी में स्नायु-सम्बन्धी बहुत अधिक दुर्बलता हो तो उनके बच्चो के मस्तिष्क मे भी कुछ न कुछ कमी या ख़राबी हो जाती है। जिस परिवार मे किसी को अथवा कई आदमियों को क्षय-रोग हुआ हो, उस परिवार के बच्चो मे भी मस्तिष्क-सम्बन्धी दोष पाये जाते है। यदि माता-पिता मे सन्तान उत्पन्न करने की शक्ति बहुत घट गई हो और उस दशा मे भी वे सन्तान उत्पन्न करे तो भी उनकी सन्तान के मस्तिष्क मे अनेक प्रकार के विकार होते है। यदि गर्भाधान के समय माता या पिता को किसी प्रकार का मानसिक रोग हो, गर्भ की अवस्था मे माता यदि दूषित या ख़राब भोजन करे, उसका स्वास्थ्य ख़राब हो जाय, किसी दुर्घटना आदि के कारण उसे भारी शारीरिक या मानसिक आघात पहुँचे, तो भी उनकी सन्तान के मस्तिष्क में बहुत कुछ विकार आ जाते है। डा० वैडेलो स्मिथ ने "मस्तिष्क का स्वास्थ्य और रोग" (The Mind

in Health and Disease) नाम की एक पुस्तक लिखी है, जिसमे उन्होंने बतलाया है कि माता-पिता की किन किन अवस्थाओ का बच्चे के मस्तिष्क पर कैसे प्रभाव पड़ता है और बच्चो का दिमाग़ किस तरह ख़राब होता है। वे नियम इस प्रकार हैं।

(१) यदि साधारण अवस्था के माता-पिता हो और उन दोनों के परिवारो मे कभी किसी को कोई मानसिक या मस्तिष्क-सम्बन्धी विकार न हुआ हो, तो उनसे उत्पन्न होनेवाली सन्तान का मस्तिष्क भी साधारण ही होगा। साथ ही ऐसी माता से उनकी सन्तान मे किसी प्रकार का मस्तिष्क-सम्बन्धी विकार न पहुँच सकेगा।

(२) यदि साधारण अवस्था का कोई पुरुष या स्त्री, जिसके वंश मे किसी को कभी कोई मस्तिष्क-सम्बन्धी विकार न हुआ हो, किसी ऐसे पुरुष या स्त्री से विवाह करे जिसमे मस्तिष्क-सम्बन्धी कोई दोष या विकार हो तो चाहे उनके सभी बच्चे मस्तिष्क के विचार से साधारण अवस्था के ही क्यों न हो, पर फिर भी उनमे से कुछ बच्चे अवश्य ऐसे होंगे जिनके दिमाग़ में कुछ न कुछ ख़राबी होगी ही। यदि माता या पिता मे से किसी एक का मस्तिष्क पूरी तरह से ख़राब या त्रुटिपूर्ण होगा तो उनके आधे बच्चों के मस्तिष्क मे ख़राबी या त्रुटि होगी। पर यदि माता या पिता मे से किसी एक के मस्तिष्क मे कोई ऐसा विकार होगा जो ऊपर से दिखाई न पड़ता हो, तो उनके चार बच्चो मे से एक बच्चा ऐसा होगा जिसके मस्तिष्क में कुछ न कुछ ख़राबी या विकार के लक्षण पाये जायँगे।

(३) यदि माता और पिता ऊपर से देखने मे तो साधारण अवस्था के जान पड़ेंगे, पर फिर भी उनके दिमाग़ मे किसी तरह की छिपी हुई ख़राबी होगी तो उनके चार बच्चो मे से एक बच्चे का दिमाग़ ख़राब होगा। साथ ही यदि उनके बच्चो मे से ऊपर से देखने पर कोई ख़राबी न जान पड़े तो भी उनके हर तीन बच्चों मे से दो बच्चे ऐसे होंगे जिनके दिमाग़ के अन्दर कुछ न कुछ ख़राबी होगी और एक बच्चा ऐसा होगा जिसके दिमाग़ मे कुछ भी ख़राबी न होगी।

(४) यदि माता और पिता दोनों का दिमाग़ ख़राब होगा तो उनके हर एक बच्चे का दिमाग़ भी ख़राब होगा।

ऊपर बतलाये हुए कारणों के सिवा कुछ ऐसे अज्ञात कारण भी है जिनसे बच्चो के दिमाग़ मे ख़राबी होती है।

बच्चे के मस्तिष्क-सम्बन्धी विकार जानना—यदि बच्चे को दूध पिलाने मे बहुत कठिनता होती हो और बच्चे तथा माता दोनो की अच्छी तरह जाँच कराने पर इसके किसी शारीरिक कारण का पता न चले तो यह सन्देह करना चाहिए कि बच्चे के मस्तिष्क में किसी प्रकार की त्रुटि या विकार है। जो बच्चा साधारणतः स्वस्थ होता है, वह दो महीने का होने पर सुन्दर और चमकीला प्रकाश देखकर या मधुर शब्द सुनकर प्रसन्न होता है। जिधर से शोर सुनाई पड़ता हो, उधर इस उमर मे वह देखने लगता है और उसके स्वरूप के अनुसार अपना सन्तोष या दुःख प्रकट करता है। इसके विपरीत जिस बच्चे का मस्तिष्क ठीक नहीं होता, वह किसी एक ही ओर बिना किसी उद्देश्य या निश्चित वस्तु की ओर देखे यों ही टक लगाकर देखा करता है और शोर आदि की ओर से उदासीन रहता है। इससे यह पता चलता है कि उसकी आँखे और कान ठीक तरह से काम नहीं कर रहे हैं और उसके दिमाग़ मे इन सब बातो को समझने और इनका अनुभव करने की शक्ति नहीं है।

जो बच्चा साधारणतः सब प्रकार से स्वस्थ होता है, वह प्रायः तीन महीने का होने पर अपना सिर सीधा कर सकता है। चौथे महीने अथवा पाँचवे महीने से पहले तो वह अवश्य ही सिर उठाने के योग्य हो जाता है। पर जिस बच्चे मे साधारणतः कोई कमी होती है, वह इस अवस्था का होने पर अपना सिर ऊपर उठाने की कौन कहे, उसे सीधा करने या सँभालने का प्रयत्न भी करता हुआ नहीं दिखाई पड़ता।

जो बच्चा साधारणतः स्वस्थ होता है, वह चार महीने का होने, बल्कि इससे कुछ पहले ही अर्थात् तीन महीने का होन पर अपनी माँ

या दाई को पहचानने लगता है। यदि इतना बड़ा हो जाने पर भी बच्चा अपनी दाई या दूध पीने की बोतल न पहचाने तो यह सन्देह करना ठीक हो सकता है कि इसका दिमाग़ ठीक नहीं है, उसमें कोई ख़राबी है।

जो बच्चा साधारणतः सब प्रकार से स्वस्थ होगा, वह छः महीने का होने पर खिलौनों आदि से खेलने लगेगा। और यदि उस समय उसे खिलौने आदि लेने में आनन्द न मिलता हो तो माता को समझ लेना चाहिए कि इसके दिमाग़ में कुछ ख़राबी है। जिन बच्चों का दिमाग़ ठीक नही होता, उन्हें चमकीले रङ्ग और खिलौने अपनी ओर नही खींचते। ऐसे बच्चे बहुत बोदे होते हैं और उनके मस्तिष्क पर किसी बात का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। मातायें अपने अज्ञान के कारण बच्चे के इस बोदेपन और मूर्खता को उसका सीधापन समझ लेती हैं। पर ऐसा समझना भूल है।

साधारणतः बच्चे आठ या नौ महीने की अवस्था में उठकर बैठने के योग्य हो जाते हैं। पर यदि उनके दिमाग़ में कोई ख़राबी या असाधारण बात होती है तो वे ऐसा नहीं कर सकते।

साधारणतः तन्दुरुस्त बच्चा बारह महीने का होने पर दूसरे आदमी के सहारे से उठकर खड़ा होने के योग्य हो जाता है। पर जिसमें कोई ख़राबी होती है, उसे उठकर खड़े होने में बहुत देर लगती है।

ऊपर अलग अलग बातों के जो अलग अलग समय बतलाये गये हैं, वे औसत हिसाब से ठीक हैं। पर स्वास्थ्य ख़राब होने के कारण कुछ बच्चों में इन बातों में महीने दो महीने का अन्तर भी पड़ सकता है। यदि किसी बच्चे को अपना सिर सँभालने या उठाने, उठकर बैठने, घुटनों के बल चलने, खड़े होने और पैरों से चलने में उचित से अधिक समय लगे या उसे चीज़ें पकड़ने में आनन्द न आता हो तो माता को समझ लेना चाहिए कि ये लक्षण अच्छे नहीं हैं। जिस बच्चे का दिमाग़ ठीक नहीं होता, वह जब तक ढाई बरस का नहीं होता,

तब तक आप से आप बिना किसी सहारे के बैठ नहीं सकता। पर यदि डेढ़ बरस का होने पर भी वह बिना किसी सहारे के आपसे बैठने का प्रयत्न न करे तो माता को समझ लेना चाहिए कि इसके दिमाग़ मे कुछ ख़राबी है।

जन्म लेने पर पहले कुछ सप्ताहो तक बच्चा बिना किसी उद्देश्य के यो ही हाथ-पैर पटका करता है। पर यदि कुछ बड़ा होने पर भी वह यों ही बिना किसी उद्देश्य के हाथ-पैर पटकता रहे तो समझना चाहिए कि उसके दिमाग़ मे कुछ न कुछ विलक्षणता या ख़राबी ज़रूर है। ज्यों ज्यो उसका मस्तिष्क विकसित होता जाता है, त्यो त्यो वह अधिक दृढ़ता के साथ और अधिक व्यवस्थित रूप मे ये सब चेष्टायें करता है। पहले तो ये चेष्टाये आपसे आप होती हैं, पर आगे चलकर ये जानबूझकर और इच्छापूर्वक की जाती हैं। उदाहरण के लिए वह किसी प्रकाश की ओर देखेगा या आवाज़ उसका ध्यान अपनी ओर खींचेगी। जो चीज़ उसे अच्छी लगेगी, वह उसके पास पहुँचने का प्रयत्न करेगा या उसकी ओर बढ़ने लगेगा। और जब वह चीज़ उसके हाथ मे आ जायगी, तब वह उसे अपने मुँह के पास ले जायगा। यदि वह साधारण स्वस्थ बच्चे की तरह हाथ-पैर न पटक सकता हो या बिना कोई यथेष्ट कारण हुए छाती या बोतल से दूध पीने से इनकार करे तो समझ लेना चाहिए कि उसके दिमाग़ मे कुछ ख़राबी है।

कुछ और बड़ा होने पर बच्चा यह देखने लगता है कि माँ किस ओर जाती है या किधर से आती है। जब माँ उसकी आंखो से ओझल हो जाती है, तब वह रोने चिल्लाने लगता है और जब वह फिर उसके सामने आ जाती है, तब वह हँसने और मुस्कराने लगता है। बच्चे के कुछ विशेष लक्षणो और चेष्टाओ से माता यह समझ लेती है कि बच्चा भूखा है। जो बच्चा साधारणतः सब प्रकार से ठीक होता है, उसमे छोटी अवस्था मे ही भय, क्रोध आदि मनोविकार प्रकट होने लगते है। मातायें यह बात अच्छी तरह जानती है कि जब बच्चे को सरदी या

भूख लगती है, तब वह किस तरह बेचैन होता और रोता चिल्लाता है; और जब उसकी वह आवश्यकता पूरी कर दी जाती है, तब वह कैसा शान्त हो जाता है।

ज्यों ज्यों बच्चे के ये मनोभाव बलवान् होते जाते हैं, त्यों त्यों उसका स्वभाव और चरित्र बनता जाता है। उदाहरण के लिए बच्चा यह समझने लगता है कि माता क्या चाहती है और वह अपना व्यवहार उसी की इच्छा के अनुकूल करता है। उसके मन में माता की अप्रसन्नता का जो भय होता है, वही मानो उसमें बुद्धि या ज्ञान उत्पन्न होने का आरम्भ है। पर जिन बच्चों के दिमाग़ में कोई ख़राबी होती है, उनमें यह बात नहीं आती।

बच्चे में बोलने की शक्ति का जो विकास होता है, माता को चाहिए कि उसे बहुत ध्यानपूर्वक देखती रहे। यह शक्ति पहले वर्ष के आरम्भ में प्रकट होती है। पहले पहल बच्चे के मुँह से जो शब्द निकलते हैं, वे निरर्थक होते हैं। धीरे धीरे वह उन शब्दों के उच्चारण की नक़ल करना आरम्भ करता है जिसे दूसरे लोग उसके सामने बार बार दोहराते हैं और तब वह उनका अर्थ समझने लगता है। जब वह एक बरस का हो जाता है, तब उसमें कुछ साधारण समझ आ जाती है; पर वह समझ उसी शिक्षा पर निर्भर करती है जो उसे माता-पिता से मिलती है। कुछ बच्चों में तो बोलने की शक्ति कुछ जल्दी आ जाती है और कुछ मे देर से आती है। पर साधारणतः दो बरस का हो जाने पर बच्चा छोटे छोटे वाक्य कहने के योग्य हो जाता है। यदि माता यह देखे कि बच्चे का उच्चारण स्पष्ट नहीं होता, उसे शब्दों का अर्थ समझने में आवश्यकता से अधिक देर लग रही है और अपनी इच्छायें प्रकट करने के लिए शब्दों का प्रयोग करने में भी अधिक समय लग रहा है, तो उसे यह सन्देह करना चाहिए कि इसके दिमाग़ में कुछ ख़राबी है।

माता को चाहिए कि वह आगे लिखी बातों मे अपने बच्चे की उतनी ही अवस्था के दूसरे बच्चों के साथ तुलना करे—

(१) आँखों के ढेलो और सिर को बार बार इधर से उधर करना बच्चे के लिए एक अस्वाभाविक बात है और माता को उतनी अवस्था के दूसरे बच्चों मे इस प्रकार की गति नहीं दिखलाई पड़ेगी।

(२) यदि बच्चा प्रायः निरर्थक रूप से चिल्लाया करे या बार बार व्यर्थ ही हँसे तो यह भी उसके लिए उतनी ही अस्वाभाविक और असाधारण सी बात है जितना कि उसका बिलकुल ही न हँसना या न मुस्कराना।

यदि बच्चे का सिर या चेहरा आकार में उसके शरीर के और और अंगों के समान न हो, अधिक छोटा या बड़ा हो, तो समझना चाहिए कि इसके दिमाग़ मे कोई ख़राबी है। यदि सिर बहुत ही छोटा हो तो भी समझना चाहिए कि दिमाग़ मे कोई ख़राबी है। यदि उसका मुँह सदा खुला रहता हो या ज़बान बड़ी हो और बाहर की ओर निकली हुई हो तो ये लक्षण भी अच्छे नहीं हैं। यदि हगने और मूतने को क़ाबू मे रखने मे भी उसे देर लगे तो भी समझना चाहिए कि उसके दिमाग़ मे कोई ख़राबी है।

स्वास्थ्य-रक्षा के उपाय—साधारणतः स्वास्थ्य की रक्षा करने और उसे सुधारने के जो नियम हैं, उन्ही नियमो का पालन करने से मस्तिष्क के विकार भी कम होते है। यह बहुत ही आवश्यक है कि क्षय-रोग को रोकने के सभी उचित उपाय ज़ोरों से किये जाएँ। लोगो को इस बात पर भी पूरा पूरा ध्यान देना चाहिए कि शराब और नशे की चीज़ों का व्यवहार कम हो और लोगों मे गरमी और सूज़ाक आदि जननेन्द्रिय-सम्बन्धी घृणित रोग न फैलने पावें। पहले गर्भिणी स्त्री की देख-रेख के सम्बन्ध मे जो बाते बतलाई गई हैं (देखो दूसरा प्रकरण), यदि उनका पूरा पूरा ध्यान रक्खा जाय तो भी समाज में मस्तिष्क-सम्बन्धी विकारो का अस्तित्व और प्रसार बहुत कुछ रोका जा सकता है।

माता-पिता को चाहिए कि वे शराब आदि का बिलकुल व्यवहार न किया करें; और यदि उन्हे गरमी का रोग हो तो उसका पूरा पूरा इलाज करके उसे अच्छी तरह दूर कर ले। बिना इसके उन्हें स्वस्थ सन्तान होने की आशा नहीं करनी चाहिए। यदि माता या पिता मे से किसी को स्नायु-सम्बन्धी विकार या रोग हो तो वह भी दूर करा लेना चाहिए।

जहाँ तक हो सके, बच्चे को साफ़ और ताज़ी हवा में रखना चाहिए; पर यदि मौसिम ख़राब हो तो उससे उसे बचाना चाहिए। स्वास्थ्य-रक्षा के सम्बन्ध मे जो साधारण नियम हैं, माता के लिए उनके अनुसार चलना बहुत अच्छा होगा। बच्चे के स्नान, कपड़े, कसरत और भोजन आदि की ठीक ठीक व्यवस्था रखनी चाहिए और उन्हें नियमित रखना चाहिए। यदि हो सके तो एक ऐसा नक़शा बना लेना चाहिए जिसमे प्रतिदिन की और भिन्न भिन्न समयों की दिनचर्या लिखी रहे और उस नक़शे मे लिखी हुई सब बातों का पूरी तरह से पालन करना चाहिए। इस व्यवस्था से बहुत अधिक लाभ होगा।

शरीर के ऊपरी चमड़े या त्वचा की पूरी तरह से रक्षा करना बहुत ही आवश्यक और महत्त्वपूर्ण है। बीच बीच में बच्चे को बराबर स्नान कराने और मालिश करने से भी लाभ होता है। घर के बाहर मैदान मे खूब कसरत करना आवश्यक है।

हाथ पैरो की गतिशीलता—बीच बीच मे बच्चे को फ़र्श पर लिटा देना चाहिए और उसे खेलने तथा हाथों पैरों से व्यायाम करने के लिए उत्साहित करना चाहिए।

स्वच्छता—जहाँ तक हो सके, सब प्रकार से बच्चे को ऐसी आदत डालनी चाहिए कि वह खूब साफ़ रहा करे। कपड़े-लत्ते और दूसरी सभी बातो मे जहाँ तक हो सके, साधारण बच्चों के समान उसकी सफ़ाई का ध्यान रखना चाहिए।

नियमन—जिन बच्चों के दिमाग़ में कोई ख़राबी होती है, उन्हें पाख़ाना ठीक तरह से और साफ़ नहीं होता। उन्हें पाख़ाने और पेशाब के सम्बन्ध मे नियमित करने के लिए बहुत कुछ धैर्य और अध्यवसाय की आवश्यकता है। यदि बच्चे को बिस्तर पर ही पाख़ाना फिरने और पेशाब करने की आदत पड़ गई हो तो रात को सोने के समय उसे तरल पदार्थ थोड़ी मात्रा मे देना चाहिए, उसकी खटोली आदि का पैताना कुछ ऊँचा कर देना चाहिए और ऐसा प्रबन्ध करना चाहिए कि वह चित लेटकर न सोए। इन सब बातों से उसकी यह आदत बहुत कुछ छूट जायगी।

मुँह से लार बहना—यदि बच्चे के मुँह से अधिक लार बहती हो तो उसके होठो के पट्ठों को दृढ़ करने का प्रयत्न करना चाहिए। इसमें सीटी या बिगुल आदि बजाने से बहुत सहायता मिलती है।

भोजन कराना—जिन बच्चों का दिमाग़ ठीक नही होता, वे बहुत कठिनता से दूध पीते या और कोई चीज़ खाते है; इसलिए उन्हें दूध पीने या भोजन करने की शिक्षा देने की आवश्यकता होती है। जब पहले उन्हें दूध या खाने की और कोई चीज़ दी जाती है, तो वे उसे ग्रहण नही करते। इस विषय में सफलता प्राप्त करने के लिए माता को धैर्य और अध्यवसाय से काम लेना पड़ेगा। यदि माता इसके लिए कुछ कष्ट न उठावेगी तो बच्चे को उस सीमा तक केवल तरल पदार्थों पर ही रखना पड़ेगा जहाँ तक कि तरल पदार्थ उसके स्वास्थ्य के लिए ठीक होंगे। बच्चो को भोजन ठीक तरह से चबाने की शिक्षा देने में भी माता को कुछ कष्ट उठाना पड़ेगा, पर उसे धैर्य और अध्यवसाय से काम लेना चाहिए।

जिन बच्चो का दिमाग़ ठीक न हो, उन्हें ठीक तरह से भोजन कराने के लिए नीचे लिखी सूचनाओं पर ध्यान देने से बहुत सहायता मिलेगी। सबसे पहली बात तो यह है कि यदि माता को स्नायु-सम्बन्धी दुर्बलता हो या उसके मनोविकार बहुत जल्दी प्रबल हो जाते

हों, तो स्वयं उसके स्वास्थ्य के विचार से भी और बच्चे के स्वास्थ्य के विचार से भी यही अच्छा है कि वह बच्चे को अपना दूध न पिलावे। पर यदि स्वयं उसका स्वास्थ्य बिलकुल ठीक हो और बच्चा ही उसका दूध पीने के योग्य न हो तो उसे चाहिए कि वह पम्प की सहायता से अपनी छातियों का दूध निकाल कर बच्चे को चम्मच की सहायता से पिलाया करे।

यदि कृत्रिम रूप से दूध पिलाने की आवश्यकता पड़े तो सदा इस बात का पूरा पूरा ध्यान रखना चाहिए कि किस समय कितना दूध पिलाना आवश्यक है और कब उसमें कितना पानी मिलाना चाहिए। सब प्रकार के कृत्रिम भोजनों मे सादा पानी या बार्ली का पानी मिलाना अधिक उत्तम है; और इस प्रकार के भोजनों मे सबसे अच्छा गौ का ताज़ा दूध है।

जब बच्चा कुछ और बड़ा हो जाय, तब उसे जई (ओटमील Oatmeal) का दलिया दिया जाना चाहिए; क्योंकि इससे उसकी हड्डियों और मस्तिष्क की रचना मे अधिक सहायता मिलेगी।

ख़राब दिमाग़वाले बच्चों का प्रबन्ध—जिन बच्चो का दिमाग़ जन्म से ही ख़राब हो, उन्हें यदि ठीक तरह से शिक्षा न दी जाय और उनकी पूरी देख-रेख न की जाय तो उनकी सभी बात बिगड़ जाती हैं; वे किसी के वश मे या व्यवस्थित नहीं रहते, अनेक प्रकार के दुष्कर्म और अपराध करने लगते है और उनके जीवन मे न तो कोई व्यवस्था रह जाती है और न कोई उद्देश्य। इसलिए यह बात सबसे अधिक आवश्यक और महत्त्व की है कि ज्यों ही यह पता चले कि इस बच्चे का दिमाग़ ठीक नहीं है, त्यों ही आरम्भ से उसे ठीक तरह की शिक्षा देने और सुधारने में कोई कसर उठा नहीं रखनी चाहिए।

ख़राब दिमाग़वाले बच्चे की माता को यदि उसने अब तक न समझा हो तो अब यह समझ रखना चाहिए कि ऐसे बच्चे शारीरिक और मानसिक दोनो ही दृष्टियों से बहुत कमज़ोर होते है और उनके

उतनी समझदारी की आशा नहीं करनी चाहिए जितनी समझदारी उतनी ही अवस्था के दूसरे स्वस्थ बच्चों मे देखने मे आती है। अतः शुभ फलों की प्राप्ति के लिए समय और शिक्षा की आवश्यकता होती है। माता-पिता अपने बच्चों को जितना समझदार बनाना या देखना चाहते है, उन्हे सब प्रकार से स्वस्थ होने की दशा में भी उतना समझदार बनाने के लिए इन दोनों बातो की आवश्यकता होती है। तब जिन बच्चों का दिमाग़ खराब हो, उनके लिए तो इन बातों की और भी अधिक आवश्यकता होना स्वाभाविक है। माता का उद्देश्य यह होना चाहिए कि मेरा बच्चा जीवन के साधारण कर्त्तव्यो का पालन करने के योग्य हो जाय और कुछ असमर्थता के रहते हुए भी जहाँ तक हो सके, प्रसन्नतापूर्ण और उपयोगी जीवन बिता सके। यह उद्देश्य सिद्ध करने के लिए उसे बहुत अधिक सहानुभूति, निष्ठा और सहनशीलता से काम लेना चाहिए। इस प्रकार के मनोभावों से उसमे दया उत्पन्न होती है और वह उस अभागे बच्चे की व्यवस्था करने मे धैर्य और अध्यवसाय से काम लेने के योग्य होती है। यह सबसे पहली बात है, जिस पर हम ज़ोर देना चाहते है। बिना इन गुणों के सफलता प्राप्त करना असम्भव है। मतलब यह कि माता अपने ऐसे बच्चे की शिक्षा के लिए जितना ही अधिक कष्ट उठाती है, वह बच्चा उतनी ही अधिक उन्नति करता है। यदि माता अपने बच्चों की दिनचर्या आदि के सम्बन्ध मे कुछ अच्छे नियम बना लेगी और उन नियमों का पूरी तरह से पालन करेगी, तो वह अपने काम मे बहुत कुछ चिन्ताओं और कष्टो से बच जायगी।

सबसे पहले बच्चे को यह सिखलाने की आवश्यकता होती है कि वह मल और मूत्र आदि का त्याग ठीक तरह से किया करे। जो बच्चा साधारणतः सब प्रकार से स्वस्थ होगा, उसे ये सब बातें सिखलाने की कोई आवश्यकता न होगी। पर जिसका दिमाग़ ठीक न होगा, उसे सिखलाने की आवश्यकता होगी। साधारणतः सभी बच्चे

कुछ निश्चित अन्तरों पर मल और मूत्र का त्याग करते है। ख़राब दिमाग़वाले बच्चे की माता को चाहिए कि ध्यानपूर्वक देखकर यह पता लगावे कि प्रायः उसका बच्चा किस समय और कितने अन्तर पर मल-मूत्र करता है; और तब उतने ही अन्तर पर और उसी समय उसे पाख़ाना फिरावे और पेशाब करावे। माता के ऐसा करने से बच्चा भी कुछ कुछ प्रयत्न करने लगेगा और इससे उसे आदत पड़ने मे सहायता मिलेगी। यदि वह इस विषय में पूरे धैर्य और अध्यवसाय से काम लेगी, तो उसे बच्चे को मल-मूत्र का त्याग करने और उनको वश में रखने की शिक्षा देने मे सफलता होगी और वह उन सब कठिनाइयो और कष्टो से बच जायगी जो इस सम्बन्ध मे बच्चे को गन्दी आदतें पड़ने के कारण उठाने पड़ते है।

माता को यह ध्यान रखना चाहिए कि साधारणतः स्वस्थ बच्चा कई काम और बाते बिना सिखाये आपसे आप सीख लेता है, पर ख़राब दिमाग़वाले बच्चे को वे सब बातें और काम सिखलाने की आवश्यकता होती है; और यदि माता बराबर अध्यवसाय से काम लेती रहे तो समय पाकर वह बच्चे को अच्छी तरह वे सब बातें सिखला सकती है। उसे यह आशा नहीं करनी चाहिए कि प्रयत्न करते ही बच्चा सुधरने लगेगा। यह तो हर बात को बार बार दोहराने और लगातार समझाने बुझाने से ही होगा। इसलिए माता को चाहिए कि पहले यह पता लगावे कि बच्चा कौन सा काम सहज मे आपसे आप कर लेता है; और उसे बार बार वही काम करने के लिए उत्साहित करती रहे। इससे बच्चे मे अपने आप पर विश्वास उत्पन्न होगा और उसे कोई काम करने और किसी के लिए प्रयत्न करने मे आनन्द आने लगेगा। यदि वह आप ही कोई काम करने का प्रयत्न करे और पूरा पूरा प्रयत्न करके उसमे सफलता प्राप्त कर ले तो यही उसके लिए एक बहुत अच्छी शिक्षा हो जायगी। जो काम बच्चा कर सकता हो माता को उसके लिए वह काम नहीं करना चाहिए। जैसे झुनझुना हिलाना,

सीटी बजाना या रबर का गुब्बारा उड़ाना आदि ऐसे काम हैं जो बच्चा आप ही कर सकता है। ऐसे काम माता को नहीं करने चाहिएँ। यदि बच्चा इस प्रकार के खिलौनो से खेलना चाहे तो उसे इस प्रकार के कामों के लिए उत्साहित और प्रवृत्त करना चाहिए। इसके बाद उसके सामने कोई कठिन काम रखना चाहिए; पर ऐसा कठिन काम नही रखना चाहिए जो उसकी सामर्थ्य के बाहर हो। क्योंकि यदि उससे वह काम न हो सकेगा तो उसका उत्साह भंग हो जायगा और इस प्रकार उसे मानसिक शिक्षा देने का जो वास्तविक उद्देश्य है, वह पूरा न हो सकेगा। ज्यो ज्यों वह बड़ा होता जायगा, त्यों त्यों उसमे अधिक समझ आती जायगी, उसे अपने आस-पास की चीज़ो से अधिक प्रेम होने लगेगा और वह अधिक काम करने का प्रयत्न करेगा। यह ठीक है कि साधारण बच्चे जितनी जल्दी और सन्तोषजनक रूप से कोई काम सीखते हैं, उतनी जल्दी और सन्तोषजनक रूप से वह नही सीख सकेगा, पर निरन्तर प्रयत्न करते रहने से अन्त मे सफलता अवश्य होगी। माता को यह स्मरण रखना चाहिए कि साधारण बच्चों को किसी काम के लिए प्रयत्न करने का जितना शौक़ होता है, उतना शौक़ ख़राब दिमाग़वाले बच्चो को नहीं होता। माता को चाहिए कि बच्चे को उत्तेजित करती रहे और उसमे शौक़ पैदा करे। फिर उसके लिए जितना ही परिश्रम किया और कष्ट उठाया जायगा, उतनी ही अधिक सफलता होगी।

माता को चाहिए कि वह ऐसे बच्चे को वही बातें सिखलावे जिनसे किसी प्रकार की हानि न हो सकती हो। उसे उपद्रव या उत्पात करना नहीं सिखलाना चाहिए। स्वस्थ बच्चों का बहुत शोर मचाना माता को अच्छा नही लगता। ख़राब दिमाग़वाले बच्चे को भी बहुत शोर नहीं करने देना चाहिए।

ख़राब दिमाग़वाले बच्चो की व्यवस्था करने मे सबसे अधिक मुख्य सिद्धान्त यह है कि उनमें कोई बुरी आदत नहीं पड़ने देनी

चाहिए। माता का उद्देश्य सदा यह रहना चाहिए कि बच्चा अच्छी आदतें सीखे और बुरी आदतें न सीखने पावे। डा० थाम्सन कहते है—"तुम्हे सदा इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि बच्चे मे बुरी आदतें न पड़ने पावें, क्योकि जब एक बार बच्चे मे बुरी आदतें पड़ जाती है, तब तुम्हारे ख़राब दिमाग़वाले बच्चे की वे आदतें छुड़ाना ऐसे बच्चों की ख़राब आदतें छुड़ाने की अपेक्षा बहुत अधिक कठिन होता है जिन्हें दूसरी बाहरी चीज़ो का भी शौक़ होता है।"

बच्चों के लिए खेल-कूद का बहुत अधिक महत्त्व है। खेलने-कूदने से बच्चो की बुद्धि भी बढ़ती है और उनका चरित्र भी बनता है। एक पुरानी कहावत है कि जो बच्चा दिन-रात काम ही करता रहता है और खेलता-कूदता नहीं, वह बोदा हो जाता है। ख़राब दिमाग़वाले बच्चो के सम्बन्ध मे यह बात और भी अधिक सत्य है। यदि इस प्रकार के बच्चे आपसे आप कोई काम करने या खेलने-कूदने का प्रयत्न करे तो इसे बहुत अच्छा लक्षण समझना चाहिए और उसके लिए उन्हें उत्साहित करना चाहिए। इस सम्बन्ध मे माता-पिता को यह स्मरण रखना चाहिए कि साधारण और स्वस्थ बच्चो को देखकर ख़राब दिमाग़वाले बच्चे अपनी त्रुटियो का अनुभव करते है जिससे और आगे प्रयत्न करने मे उन्हें उत्साह नहीं होता। इसलिए इस बात का ध्यान रखना बहुत आवश्यक है कि जहाँ तक हो सके ख़राब दिमाग़वाले बच्चों का अच्छे बच्चों से संग-साथ न होने देना चाहिए, जिसमे उन पर इस प्रकार के बुरे प्रभाव न पड़ने पावें।

माता को यह स्मरण रखना चाहिए कि ख़राब दिमाग़वाले बच्चो को बोलना सीखने में देर लगती है। किसी हद तक इसका कारण यह होता है कि वे बातों पर ध्यान नहीं देते। ऊपर यह बतलाया जा चुका है कि बच्चे को जिस चीज़ का शौक़ हो या उसे जो चीज़ अपनी ओर खींचती हो, उसी के द्वारा उसको ध्यान देने के योग्य बनाना चाहिए। मानसिक शक्तियों को उत्पन्न और विकसित करने

के लिए यह बात बहुत ही आवश्यक है। बच्चे को बोलना सिखाने के लिए माता को बहुत अध्यवसाय दिखलाना पड़ेगा। पर जब एक बार बच्चे के मुँह से शब्दो का उच्चारण कराने मे उसे सफलता हो जायगी, तब उसकी बोलने की शक्ति अवश्य ही कुछ बढ़ेगी; यह बात दूसरी है कि उसकी बोली का रूप बहुत स्पष्ट न हो। जीवन मे साधारणतः जिन चीज़ों का काम पड़ता है, माता को चाहिए कि उन चीज़ों की ओर बच्चे का ध्यान बराबर दिलाती रहे, बार बार उसके सामने उस चीज़ का नाम दोहराती रहे, उसे दिखलाई हुई चीज़ों को पहचानना सिखलावे और उनके नामो का उच्चारण करने के लिए उसे उत्तेजित करती रहे। इससे वह चीज़ों पर ध्यान भी देने लगेगा और शब्दों के उच्चारण का भी प्रयत्न करने लगेगा। माता जो कुछ कहेगी, बच्चा उस पर ध्यान न देगा; पर केवल इसी कारण उसका उत्साह भङ्ग न होना चाहिए; बल्कि उसे बराबर चीज़ों के नाम बतलाते रहना चाहिए और ज़बरदस्ती उनकी ओर उसका ध्यान दिलाना चाहिए। साधारणतः स्वस्थ बच्चे को भी शब्दों का अर्थ बतलाने और समझाने के लिए उसके सामने शब्द बार बार दोहराने पड़ते है। फिर ख़राब दिमाग़वाले बच्चे के लिए तो इस बात का और भी अधिक प्रयत्न होना चाहिए।

बच्चो का ध्यान शब्दो की ओर दिलाने के लिए सबसे पहले संगीत के स्वरों का व्यवहार किया जा सकता है; और तब उससे छोटे और सहज शब्द कहे जा सकते है। उन शब्दो को बराबर दोहराते रहना चाहिए और विशेषतः सबेरे के समय और रात को सोने से पहले वे शब्द उसे बार बार सुनाने चाहिएँ। उदाहरण के लिए "ऊपर" और "नीचे" सरीखे शब्द संकेत या गति आदि की सहायता से समझाने चाहिएँ। ऐसा करने से बच्चे की बोलने की शक्ति बहुत जल्दी बढ़ेगी।

डा० थाम्सन बतलाते है—"ज्यो ज्यों बच्चे की समझ बढ़ती जाय, त्यो त्यों माता को चाहिए कि उसका आत्म-संयम बढ़ाकर और

जहाँ तक हो सके, उसे स्वयं इसी पर छोड़कर उसका चरित्र संघटित करने के लिए पूरा पूरा प्रयत्न करती रहे। वह अपना काम जितना आप करेगा, उतना ही अधिक प्रसन्न होगा; और उसके उदास या दुःखी रहने का अवसर उतना ही कम हो जायगा। ज्यों ज्यों वह बड़ा होता जाय, त्यों त्यों उसे यह समझाते चलना चाहिए कि यद्यपि तुम और लड़कों के समान नहीं हो, तो भी इसका यह अर्थ नहीं है कि तुम जो छोटे छोटे काम कर सकते हो, वह काम भी न करो।

धैर्य, उत्तम स्वभाव और उत्तम आचरण आदि ऐसी और भी बातें है जिनमें बच्चे को यह सिखलाया जा सकता है कि वह अपने आपको वश मे रखे। लेकिन दूसरे लोगो को यह नही चाहिए कि वे बार बार उसे छेड़ या खिझाकर उसे विकट परीक्षा मे डाला करें।

सदा इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि बच्चे से जो कुछ कहा जाय, वह तुरन्त वह काम करे। पर इसके लिए माता को ऐसा प्रयत्न और व्यवहार करना चाहिए कि बच्चा आज्ञाओं का जो पालन करे, वह माता को केवल प्रसन्न करने की इच्छा से करे; इस डर से न करे कि यदि मैं आज्ञा का पालन न करूँगा तो मुझे उसका कुछ दंड भोगना पडेगा।

बच्चे का चरित्र घटित करने और उसे प्रसन्न रखने के लिए यदि उसे अपने आस-पास मे रहनेवाले लोगों के साथ प्रेम करना सिखलाया जा सके तो यह बहुत ही अच्छी बात है। जो बच्चा दूसरे लोगो यहा तक कि पशु-पक्षियों और गुड्डे-गुड़ियों आदि से हृदय से प्रेम करता है, उसका जीवन बहुत प्रसन्नतापूर्ण और अच्छा हो जाता है।

ख़राब दिमाग़वाले बच्चों मे इच्छा-शक्ति या प्रेरक-शक्ति या तो बहुत कम होती है और या बिलकुल होती ही नहीं। इसी लिए डा० थाम्सन ऐसे बच्चों की माताओं से कहते है—"यदि प्रकृति ने तुम्हारे बच्चे को कोई काम करने की और उस पर ध्यान देने की शक्ति अभी तक न दी हो तो वह कमी तुम्हारी शिक्षा और प्रोत्साहन से

पूरी होनी चाहिए। जब तक बच्चा अपने अंगों और इन्द्रियों का स्वतन्त्रतापूर्वक उपयोग न करेगा, तब तक उसका दिमाग़ नही बढ़ेगा। उस प्राकृतिक कमी को पूरा करना माता के प्रेम और शक्ति का काम है। उसमे जो शक्ति नही है, वह शक्ति उसमें लाना तुम्हारा काम है।''

ख़राब दिमाग़वाले बच्चों को शिक्षा देनेवाले स्कूलों में काम करके जिन लोगों ने अच्छा अनुभव प्राप्त किया है, उनका कहना है कि ख़राब दिमाग़वाले बच्चो को सुधारने का एक बहुत अच्छा उपाय यह है कि उनकी प्रशंसा की जाय। ऐसे बच्चो का उत्साह कभी भङ्ग नहीं करना चाहिए, बल्कि माताओं को चाहिए कि जब जब प्रशंसा करने का कोई ठीक अवसर आवे, तब तब बच्चे की ख़ूब प्रशंसा करनी चाहिए; क्योंकि इससे उन्हे आगे और भी उसी तरह के और अच्छे काम करने की प्रवृत्ति होती है। इसके विपरीत यदि उनका उत्साह भंग किया जायगा, उन्हें झिड़कियाँ दी जायँगी और उनके साथ कठोरता का व्यवहार किया जायगा, तो परिणाम उलटा ही होगा।

इस विषय मे डा० थाम्सन यह सलाह देते है—''जब जब बच्चा कोई अच्छा काम करे, तब तब तुम उसकी प्रशंसा करना अपना एक नियम सा बना लो; और उसे यह दिखलाया करो कि जब उसे किसी काम में सफलता होती है, तब तुम कितनी प्रसन्न होती हो। जो काम थोड़े कठिन हो, वे काम करने के लिए उसे विशेष रूप से उत्साहित करना चाहिए। पर जो काम इतने कठिन हों कि उससे हो ही न सकते हो, उन कामो के लिए उससे बार बार प्रयत्न नही कराना चाहिए। यदि उसे कोई काम करने मे बिलकुल सफलता न होगी तो उसका मन छोटा हो जायगा। पर जिस काम मे उसे सफलता होगी, उससे उसको बहुत लाभ पहुँचेगा—उसका बहुत सुधार होगा। पर वह काम उपद्रव या उत्पात का नहीं होना चाहिए।''

यदि ठीक समय पर ऐसे बच्चो की उचित प्रशंसा की जाय और उन्हे कुछ छोटा-मोटा इनाम भी दिया जाय तो उनमे से अधिकांश

बच्चों को बहुत लाभ पहुँचेगा। बच्चे की अवस्था का सुधार करने में माता के प्रेम का बहुत ही अद्भुत प्रभाव पड़ता है। इसके विपरीत यदि उस पर ध्यान न दिया जायगा और उसके साथ सहानुभूति न रखी जायगी तो उसकी वह अयोग्यता स्थायी हो जायगी—कभी दूर ही न होगी। यदि आरम्भ में परिणाम सन्तोषजनक न हों तो भी माता को बराबर उद्योग करते चलना चाहिए। और ऐसा अध्यवसाय केवल प्रेम से ही आ सकता है।

डा० क्लाक्सँन कहते हैं—"प्रेम से ही संसार चलता है, प्रेम के कारण ही हम लोग ख़राब दिमाग़वालों की देख-रेख में प्रवृत्त होते हैं। वे बच्चे हमसे भी प्रेम करते है और आपस में एक दूसरे के साथ भी प्रेम करते है; इसी लिए हम भी जहाँ तक हो सकता है, उनकी देख-रेख करते है और उन्हें अच्छे से अच्छा बनाने का प्रयत्न करते है। जिस आदमी में प्रेम का भाव न हो या बहुत कम हो, उसकी और और शक्तियां चाहे कितनी ही विकसित क्यों न हों, पर फिर भी वही सबसे अधिक दया का पात्र है और उसी की दशा सबसे अधिक दुःखी करनेवाली है। ऐसे लोग नैतिक दृष्टि से बहुत ही नीच या तुच्छ और घृणा के योग्य है। यदि प्रेम की महान् शक्ति को प्रबल बनाने के लिए पूरा पूरा प्रयत्न न किया जाय तो यह शक्ति सदा के लिए नष्ट हो जायगी। जो आदमी ख़राब दिमाग़वाले बच्चों से घृणा करता हो, उनकी उपेक्षा करता हो अथवा उन्हें ऐसी परि-स्थितियों में रहने के लिए विवश करता हो जो उनकी इस शक्ति के विकास में बाधक हों, उस आदमी के लिए सबसे अच्छी बात यही है कि उसके गले में चक्की का पाट बाँध दिया जाय और उसे समुद्र में डुबा दिया जाय।"

यह एक बहुत ही विकट समस्या है और इस योग्य नहीं है कि इसका सारा भार बेचारी दुःखी और विकल माताओं पर ही छोड़ दिया जाय। समाज-शास्त्र की दृष्टि से यह एक बहुत ही महत्त्व की

और आवश्यक समस्या है और सरकार को इस पर पूरा पूरा ध्यान देना चाहिए; और उसे या तो शिक्षा-विभाग के द्वारा और या किसी दूसरी संघटित व्यवस्था के द्वारा राष्ट्र के ख़राब दिमाग़वाले बच्चों की ठीक और उपयुक्त शिक्षा का प्रबन्ध करना चाहिए। इस विशाल महादेश के सभी स्थानों मे और कम से कम हर प्रान्त मे एक ऐसी विशेष संस्था या विद्यालय स्थापित होना चाहिए जिसमे मानवजाति के इस असहायवर्ग को उपयोगी ढंग से काम मे लगाया जा सके।

परिशिष्ट (क)

एलब्यूमिन का पानी (Albumin Water) बनाना—

एक ताज़ा अंडा लेकर उसकी सफ़ेदी और ज़रदी दोनों अलग करनी चाहिए। सफ़ेदी एक कटोरी मे रखकर उसमे कुछ कुनकुना या साधारण गरम पानी डालना चाहिए और उसे काँटे या इसी प्रकार की किसी और चीज़ से ख़ूब फेंटना चाहिए। तब उसमे पहले से उबाल कर ठंडा किया हुआ इतना पानी मिलाना चाहिए कि वह सब मिलकर पाव भर के क़रीब हो जाय। तब मलमल मे छानकर स्वाद के अनुसार उसमे नमक मिलाना चाहिए।

परिशिष्ट (ख)

बार्ली का पानी (Barley Water) बनाना—

चाय के दो छोटे चम्मच भर धोया हुआ बढ़िया पर्ल बार्ली पाव भर ठंढे पानी मे मिलाना चाहिए और उसे आग पर रखकर उसका एक तिहाई पानी जला देना चाहिए और तब उसे मलमल मे छान लेना चाहिए। यह पानी दिन में दो बार तैयार करना चाहिए; क्योंकि यह कुछ देर तक रखने के बाद खट्टा हो जाता है।

परिशिष्ट (ग)

चावल का पानी बनाना—

दो बड़े चम्मच भर चावल लेकर पहले उसे धोना चाहिए और उसके बाद एक बोतल गरम पानी में उसे डालकर तीन घंटे तक भीगने देना चाहिए। फिर उसे एक घंटे तक बहुत ही धीमी आंच पर पकाकर कपड़े से छान लेना चाहिए।

परिशिष्ट (घ)

साबुन और पानी का एनिमा लेना। आवश्यक सामग्री—

(१) एक इरीगेटर जिसमें एक बड़ी बोतल भर पानी आ सके।

(२) डेढ़ गज़ लम्बी रबर की एक नली।

(३) हड्डी या शीशे की बनी हुई एक टोंटी जो गुदा के अन्दर डाली जाती है।

(४) रबर की नाली में पानी रोकने का क्लैम्प (Clamp)।

(५) एक चिलमची या खुले मुँह का बरतन।

(६) एक टिकिया साबुन।

(७) थोड़ा सा गरम किया हुआ पानी जो कुछ ठंढा हो गया हो।

बरतन में गरम पानी डालकर और उसमें थोड़ा साबुन घोलकर उसका झाग बना लेना चाहिए। साबुन का वह पानी एक बड़ी बोतल भर लेकर इरीगेटर में डालना चाहिए और वह इरीगेटर बिस्तर से डेढ़ दो हाथ की ऊँचाई पर टांग देना चाहिए। और तब नली की टोंटी खोलकर उसमें का कुछ पानी बहा देना चाहिए जिसमें रबर की नली के अन्दर की हवा निकल जाय।

बिस्तर पर बाईं करवट लेटकर चूतड़ और कमर के नीचे एक तौलिया या मोमजामा बिछा लेना चाहिए जिसमें पानी बिस्तर पर न

गिरने पावे, उसी पर रुका रह जाय। इसके बाद एनिमा की टोंटी में तेल या और कोई चिकना पदार्थ लगाकर वह टोंटी अपने हाथ से गुदा के अन्दर कर लेनी चाहिए और तब पानी धीरे धीरे बहकर अन्दर जाने देना चाहिए। बीच बीच में रबर की नली या क्लैम्प को दबाते रहना चाहिए जिसमें पानी नियमित रूप से गुदा के अन्दर जाता रहे, आवश्यकता से अधिक न चला जाय।

जब सारा पानी अन्दर जा चुके, तब टोंटी गुदा में से निकाल देनी चाहिए। चुपचाप पड़े रहना चाहिए और वह पानी दस मिनट तक गुदा के अन्दर रहने देना चाहिए। यदि ऐसा न हो सके तो पाखाना फिरने का बरतन चूतड़ के नीचे रख लेना चाहिए। इसमें बहुत ज़ोर नहीं लगना चाहिए।

परिशिष्ट (च)

लाइसोल लोशन (Lysol Lotion) बनाना—

प्रसव के समय साधारणतः जो लाइसोल लोशन तैयार किया जाता है, उसमें सौ हिस्से पानी में दो हिस्से लाइसोल होना चाहिए। साधारणतः आधी बोतल या आध सेर के लगभग कुछ गरम या कुनकुना पानी लेना चाहिए और उसमें एक छोटे चम्मच भर लाइसोल मिला देना चाहिए।